श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथाय नमः
मातंगसिद्धायिका परिपूजिताय श्री वर्धमानस्वामिने नमः
श्री विजय प्रेम-भुवनभानु-जयघोष-धर्मजित्-जयशेखर-अभयशेखरसूरीश्वरेभ्यो नमः।
ऐं नमः सिद्धम्।

कर्म की शतरंज

कृपादाता

पूज्यपाद न्यायविशारद आ.दे.श्री.वि. **भुवनभानुसूरीश्वरजी** महाराज
पूज्यपाद गच्छाधिपति आ.दे.श्री.वि. **जयघोषसूरीश्वरजी** महाराज
पूज्यपाद सहजानंदी आ.दे.श्री.वि. **धर्मजित्सूरीश्वरजी** महाराज
पूज्यपाद सूरिमंत्र आराधक आ.दे.श्री.वि. **जयशेखरसूरीश्वरजी** महाराज
पूज्यपाद साध्वीगणनायक आ.दे.श्री.वि. **अभयशेखरसूरीश्वरजी** महाराज

लेखक

पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय **अजितशेखरसूरीश्वरजी** महाराज

सहयोग

पूज्यपाद पंन्यासप्रवर श्री **विमलबोधिविजयजी** महाराज

: प्रकाशक :

॥अर्हम्॥

અર્હમ્ આરાધક ટ્રસ્ટ
मुलुन्ड - मुंबई

प्रकाशन वर्ष : प्रथम आवृत्ति संवत २०७०
द्वितीय आवृत्ति संवत २०७१

मूल्य : रु.८०/-

प्राप्तिस्थान

दिपकभाई फुरीया : ब्रेवो केबल, इस्माइल बिल्डींग, २रा माला, रुम नं.४, ३३-पाठ कवाडी, लुहारचाल, मुंबई - ४०० ००२. मो.98675 80227

सतीश गींदरा : वॉलडेकोर, मातृकृपा बिल्डींग, गड करी रंगायतन के पास, विचारे कुरीयर के सामने, तलावपाळी, थाणे (वे.) - ४०० ६०१.

शिरीनभाई गंगर : डी.पी.ट्रेडींग कंपनी, २५७, न्यु अनंत भवन, भात बजार, नरशी नाथा स्ट्रीट , फुवारा के सामने, मस्जीद बंदर, मुंबई.

चेतनभाई : १०२, दत्त प्रसाद, दत्त मंदिर रोड , मलाड (इस्ट), मुंबई - ४०० ६०१.

www.arhamaaradhak.org

arhamaaradhak@gmail.com

पूज्य आचार्यश्री विजय अजितशेखरसूरीश्वरजी महाराज लिखित उपलभ्य गुजराती श्रुतसाहित्य

१) क्षमा = प्रेम + मैत्रीनी महेक (हिन्दी, English)
१३) पळ पळनो हिसाब
१४) नदी-नाव संयोग (Open Book Exam अंतिम ता.३०.११.२०१५)
२३) वार्ताप्रवाह
४७) धरिये समकित रंग
५५) कर्मनो शतरंज (हिन्दी, English)
५६) भक्तवत्सल प्रभु सांभळो रे... (पूज्यश्री द्वारा रचित स्तुति-स्तवनोका संग्रह)
५७) पचेलीमां पुण्य भरो (हिन्दी में भी)
५९) शांति जिनेश्वर साहिबा रे... (हिन्दी में भी)
६०) हळवाशनो उजाश
६१) परम सौभाग्य निधि (भाग १-२)
६५) प्रत्येक प्रश्ने वार्ता
७१) नेमि निरंजन नाथ अमारो (भाग १-२)
(Open Book Exam अंतिम ता.३१.१२.२०१५)
७३) खजानो कथानो उत्तर मजानो
७४) एयरपोर्ट

ता.क. : इस पुस्तक में से कोई भी लाईन, पैरा, प्रकरण किसी को भी अपने पत्र, मेगेझीन या पुस्तक आदि में उद्धृत करना हो, तो लेखक की लिखित मंजुरी लेनी जरुरी है। - प्रकाशक

श्री आदिनाथाय नमः। श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथाय नमः। सिरसा वंदे महावीरं । ऐं नमः सिद्धम्।
श्री विजय प्रेम-भुवनभानु-जयघोष-धर्मजित्-जयशेखर-अभयशेखरसूरीश्वरेभ्यो नमः।

कथा काल्पनिक-बोध वास्तविक

नाईने रमेशचाचा को पूछा - बाल कितना रखना है?

रमेश चाचाने कहा - खिंचने के लिए तुम्हारी चाची के हाथ में आ न सके इतना। (क्योंकि वह प्रतिदिन मेरे बाल खिंचकर मुझे मारती है) यह तो मजाक है। हर एक घर में आज ऐसी घटनाओं की कतार लगी है। कहीं पिता-पुत्र, कहीं भाई-भाई, कहीं सास-बहु के बीच में संघर्ष चल रहे हैं। संघर्ष में किसी को लाभ होता है, किसी को त्रास! एक ही घर में एक ही छत के नीचे रहनेवालों में भी संप-न्याय-शांति नहीं है। घर का मुखिया जान बूझकर एक के प्रति पक्षपात रखना है और दूसरे को बिना कारण अन्याय करता है। ऐसा क्यों होता है? ऐसी परिस्थिति में यदि खुद को फंसना पडे, तो उस वक्त मनको शांत कैसे रखना? कब तक सहन करना? घर के लोग ही क्रुर क्यों होते हैं? माँ-बाप ही क्यों पक्षपात भरा रवैया अपनाते हैं? ऐसे प्रश्नों की तो पूरी कतार खडी है।

कुछ लेखकोने न्युज पेपरोमें घटी हुई घटनाओंका आलेखन किया था। ऐसे कुछ प्रसंग पढने पर पता चला, कहीं अंत: करुण था, कहीं सुंदर!

तब मैंने सोचा यदि इन सभी प्रसंगो को कर्मथियरी के और ऋणानुबंधके दृष्टिकोण से देखेंगे, तो कभी किसी को अन्याय करने का मन नहीं होगा। और किसी के द्वारा होते अन्याय में भी मन स्वस्थ रहेगा।

ऐसे सोच के साथ ही ऐसी घटनाओं के मुद्दे को मध्यबिंदु में रखकर और जैन मुनिराज के पात्र की कल्पना जोडकर उस मुनिराज द्वारा ऐसे अवसर पर कर्म और ऋणानुबंध को आगे कर जो सलाह मिलती है, उसके मुताबिक अन्याय सहन करनेवाला अपना दृष्टिकोण बनाता है तब कितना सुंदर नतीजा सामने आता है? इन का विवरण यहाँ किया है। आवश्यक निर्युक्ति ग्रंथ में इस विषय में जो प्रसंग है, उस को आगे रखकर ही ऐसी विचारधारा और कल्पनाओं को अवकाश दिया है। अत: एव उस प्रसंग को सबसे प्रथम दृष्टान्त के रूप में पेश किया है।

सभी घटनाओं काल्पनिक होने पर भी बार बार पढने से हम को कर्मथियरी और ऋणानुबंध के प्रति आकर्षित करेंगी। इस से हमारा मन शांत, द्वेष - मुक्त और मैत्रीभाव से हरा भरा तो रहेगा ही, साथ में पूर्वभवों की अपनी गलती का दंड समता से सहन कर लेने से भवांतर के भव सुधर जाएंगे।

देव-गुरु कृपा से रचित इस किताब में मेरे प्रमाद से जो भी गलती हुई होगी, उस के लिए मैं क्षमा चाहता हुँ। मिच्छामि दुक्कडम्...

श्रावण सुद १५ २०७१, थाणा — **आ.अजितशेखरसूरि**

इस किताब को मिले प्रतिसाद के लिये धन्यवाद। लोग-डीमांड देखकर दूसरी आवृत्ति प्रकाशित की जा रही है।

मुख्य आधारस्तंभ

श्री पद्मप्रभ जैन तीर्थ – आचंटा, आ.प्र.

श्री कुंथुनाथ जैन संघ – साई श्रेष्ठा सोसायटी, चेन्नई

आधारस्तंभ

संदीपकुमार जयन्तिलालजी – चेन्नई

निलेशकुमार अशोककुमार कोठारी

श्री नमिनाथ जैन मूर्तिपूजक ट्रस्ट – चिकमंगलुर

सह आधारस्तंभ

श्री कलापूर्ण जैन आराधक मंडळ

प्यारीबाई अचलचंदजी – कैलाशनगर

रमेशकुमार भबुतमलजी साकरीया – सुमेरपुर

जयन्तिलालजी मुलचंदजी – कैलाशनगर

शा.अचलचन्दजी कान्तिलालजी तातेड – पाडीव

शा.वालचंदजी थानमलजी – जावाल

महेन्द्रबाई चंपालालजी – जावाल

महावीर फेन्सी स्टोर्स – दांतराई – विजयवाडा

एक गुरुभक्त – आहोर – विजयवाडा

विमलाबाई छगनलालजी जावाल – विजयवाडा

महालक्ष्मी ज्वेल्स पेरेडाइझ – विजयवाडा

संघवी शांतिलालजी रुपाजी – वेलांगिरी (सिरोही) – चिकमंगलुर

संघवी लखमाजी ताराचंदजी – वेलांगिरी (सिरोही) – चिकमंगलुर

संघवी केवलचंदजी नरसाजी – सिरोडी – चिकमंगलुर

शा.लालचंदजी रमेशकुमारजी रीखवचंदजी बरलोटा – वीटोडा कला – चिकमंगलुर

श्रीमती सायराबाई सूरजमलजी पिरगल – बोथा रघुनाथ गढ – चिकमंगलुर

शा. हिन्दुमल केसरीमलजी बाबा सोलंकी – वेलांगिरी (सिरोही) – चिकमंगलुर

माता देवी या डाईन?

श्री शांतिनाथ - कुंथुनाथ - अरनाथ तीन चक्रवर्ती - तीर्थंकरो के जन्म - दीक्षा से पवित्र बनी हुई हस्तिनापुर नगरी में आज से लाखों वर्ष पूर्व, अरे उससे भी अधिक वर्ष पूर्व में बनी घटना है! शास्त्र में लिखी हुई और पूर्व - पश्चात संबध को स्पष्ट करती यह घटना इस बात का निर्णय कराती है कि, निकट में रहा व्यक्ति अथवा सहज व्यवहार में आया व्यक्ति, इस भव में पूर्व में किसी भी प्रकार का अपनी तरफ से अनुचित व्यवहार किये बिना भी अपने साथ अन्याय भरा, अपमान भरा अथवा अनुचित व्यवहार करता है, तो उसमें वह गुनहगार नही, अपराधी नहीं, द्वेषपात्र नही; परंतु पूर्वभव में हमारे ही द्वारा किये गए अयोग्य व्यवहार का इस भव में बदला चुका रहा है! जिस में हृदय से परस्पर क्षमापना नहीं हुई हो, ऐसा हर एक अप्रिय प्रसंग अगले भव में द्वेष जनक ऋणानुबंध का निमित्त बनता है।

और इसमें तो ऐसा होता है कि, जिसके साथ पूर्वभवमें हमारे से अप्रिय व्यवहार हुआ हो, वो कोई भी हो सकता है, मानव या पशु, मानव में भी स्वजन या फिर रास्ते पर चलता व्यक्ति, सेठ या नौकर, मजदूर या सब्जीवाला। वो अगले भव में पिता, पुत्र, पत्नी, पति, भाई, बहन, बोस, पार्टनर, नौकर या फिर कोई भी संबंध में आकर अपना जीवन पीडामय - जहर जैसा बन जाये ऐसे अप्रिय व्यवहार बार-बार करते रहता है - हमेशा परेशान करता रहता है! दूसरे सभी के अपने साथ अच्छे व्यवहार का आनंद नही मान सके, ऐसी अपनी हालात वो कर सकता है!

परंतु उस वक्त उसका कोई दोष नही होता... अपने द्वारा पूर्वभव में उसके साथ किया गया अयोग्य व्यवहार का ही यह भार है, इसलिए वो धिक्कार पात्र नही किन्तु आभार लायक है, क्योंकि उसने इस व्यवहार से १) मेरे पूर्वभव के इस प्रकार के व्यवहार का बोझ जो मेरे सिर पर था, वो बोझ उतार दिया। (२) कर्म सिद्धांत पर श्रद्धा दृढ बनायी। (३) आगे से सभी जीवों के साथ मैत्री-क्षमा -उदार-स्वस्थ व्यवहार रखने का पाठ सिखाया (४) प्रभु के समीप आने का अवसर दिया। (५) प्रभु आदि ने जो सहन किया, यहाँ उनकी महत्ता हृदय से स्वीकार करना सिखलाया। (६) संसार की असारता का बोध कराया (७) 'संपत्ति - मिलकत या आत्म गौरव से भी अधिक

महत्त्व रखता है जीवों के साथ का प्रेम भरा-उदार-मीठा व्यवहार' इस बात का प्रकाश दिया (८) दुनिया में कोई अन्याय नही करता, जो कुछ भी होता है, वो पूर्व में अपने ही द्वारा किये गये खराब व्यवहार का फल है। और जिसको अन्याय हुआ था उसको न्याय मिल रहा है इस बात का बोध कराया (९) जो प्रसंग सहन करना मुश्किल लगता है, वो प्रसंग होने का कारण बने ऐसा इस भव में कुछ भी नही करना, ऐसा पाठ सिखाया... करैला के बीज बोयेंगे ही नही तो करैला उगेगा कैसे?

तो चलो, अब घटना देखेंगे... वो ऐतिहासिक घटना हकीकत में हुई है, उसमें संवाद रोचकता के लिए जोडा गया है!

एक ज्ञानी-गीतार्थ संयमी साधु भगवंत **हस्तिनापुर** नगर में गोचरी के लिए निकले। गौचरी संबंधी ४२ दोषो में से एक भी दोष नहीं लगे इस बात का ध्यान रखकर घर-घर से मधुकरवृत्तिसे थोडा थोडा वहोरते - वहोरते एक सेठ के वहाँ पधारे। हम उनका नाम रखेंगे **धर्मसार** सेठ। वह धनधान्य से संपन्न है, नगर में उनके २-३ भवन - आवास हैं। दास-दासी-नोकर-चाकर से भरे इस घर में जन्म पाने वाले को तो रोजमर्रा का दिवाली उत्सव। अभाव-कष्ट-पीडा-भुख का दुख तो स्वप्न में भी नही होगा।

जहाँ पर मान-अपमान के या न्याय-अन्याय के नही, परंतु मात्र प्रेमभरा व्यवहार होता है, उसे घर कहा जाता है। किन्तु सेठ का यह समृद्ध घर उसी घर के एक व्यक्ति के लिए कसाईखाना था। वस्तुओं के उपभोग से भी ज्यादा व्यक्ति का व्यवहार सुख - दुख के लिए अधिक महत्त्व का परिबल बनता है। इस घर के ही एक व्यक्ति को घर में उपभोग की भरपूर सामग्री होते हुए भी अंश जितना भी भुगतने का अधिकार नही था। उसके सर पर तो मात्र मार-कष्ट-पीडा-तिरस्कार ही लिखा था।

धर्मसार सेठ जंगम कल्पवृक्ष समान गुरु भगवंत को घर तरफ पधारते देखकर आनंदित हुए, अहोभाव पूर्वक स्वागत किया, साधु को जरुरत के मुताबिक कल्प्य आहार की विनंति की, उल्लास और उमंग के साथ वहोराने का लाभ लिया। फिर मिले हुए लाभ की खूब अनुमोदना की... 'आपने मुझे संसार सागर तेरने में कारणभूत ऐसे सुपात्रदान का लाभ दिया' इस तरह गद्‌गद् स्वर से सच्चे दिल से पूज्य गुरुभगवंत के प्रति आभार व्यक्त किया।

फिर विनय और औचित्य से गुरुभगवंत को बिदा करने गये। उस वक्त गुरु भगवंत से पूछा - ओ गुरुदेव! ऐसा कैसे हो सकता है कि जिसे सब चाहते हो उसको विकल्प बिना जिसे चाहना चाहिए वो ही व्यक्ति उसे नही चाहता?

साधुने स्मित सहित पूछा - इस तरह के प्रश्न के पीछे आपका आशय क्या

है?

धर्मसार ने कहा - साहिब! बात यह है कि, क्या एक ही स्त्री में एक ही साथ देवी ओर डाईन दोनों का वास हो सकता है?

साधु - याने?

धर्मसार - एक ही स्त्री एक को दिव्य प्रेम से नहलाये और दूसरे का खून चुस ले, क्या यह संभव है?

साधु - जैनशासन अनेकांत को मानता है। जैनशासन कर्मसिद्धांत को मानता है। जैनशासन के मत से एक व्यक्ति में दो अलग व्यक्ति के प्रति अलग अलग भूमिका होना संभव है। एक को चाहनेवाला दूसरे को भी चाहेगा ही ऐसा कोई एकांत नियम नही है। परंतु किसी को चाहने में और किसी को नही चाहने में पूर्वभव के ऋणानुबंध और कर्म कारण बनते हैं।

धर्मसार - परंतु ''माता के मन सभी पुत्र समान'' इस कहावत को गलत साबित कर के जन्म देने वाली माता ही एक पुत्र को खूब प्रेम करती है, दूसरे का नाम सुनते ही द्वेष से भर जाती है। क्या यह असंभव नही लगता?

साधु - नहीं! पूर्वभव के इस तरह के लेनदेन के कारण यह होना संभव है।

धर्मसार - परंतु जिसे अपनी सगी माता धिक्कारे उसी को पिता और भाई गले लगाये, प्रेम करे... यानी कि वो कोई इतना नालायक नहीं कि जिसे धिक्कारा जाये। और शायद ऐसा कोई नालायक भी होगा कि उसे पूरी दुनिया धिक्कारे, तो भी उसे अपनी माता तो चाहती ही है। लेकिन यहाँ तो जिसे सब प्रेम करते हैं, उसे अपनी माता ही धिक्कारती है। ऐसा कैसे हो सकता है?

साधु - जैन इतिहास बताता है कि **सनतकुमार** चक्रवर्त्ती पूर्व के तीसरे भव में **'जिनधर्म'** नाम के श्रावक थे। समग्र नगर में महाश्रावक के तौर पर प्रसिद्ध थे। सभी को वे प्रिय थे। लेकिन एक **अग्निशर्मा** नाम के तापस को उनके उपर भारोभार द्वेष था। इसलिए खुद के तप के पारणे में राजा के पास शरत रखी... जिनधर्म की पीठ पर थाली रख कर मुझे गरम खीर से पारणा कराया जाये, तो ही मैं आपके वहाँ पारणा करुँगा... तापस के शाप के भय से राजाने इस बात का स्वीकार किया और उसी तरह तापस को पारणा कराया। परिणाम यह आया कि, जिनधर्म के पीठ की चमडी जल गयी और तापस के पारणे के बाद जब थाली लेने गये, तब जली हुई चमडी के साथ माँस का लौंदा भी बाहर आ गया।

धर्मसार - अरर! ऐसी पीडा! बाप रे बाप! कैसे सहन हुई होगी?

साधु - अरे! उसके बाद तो वैरागी बने जिनधर्म ने स्मशान में जाकर

गृद्धपीठ अनशन का स्वीकार किया, जहाँ गीध पक्षी आकाश में चारो ओर चक्कर लगाते हो, वहां खुद की पीठ खुली रखी और ये गीध पंछी माँस के लोभ से वहां चोंच लगा कर माँस के टुकडे को ले कर आकाश में उड जाये ऐसा कष्ट सहन करके ईशानेन्द्र बने और फिर सनतकुमार चक्रवर्ती बने!

धर्मसार - सा'ब! गजब कहा जायेगा ! ऐसी पीडा सुनते ही कँपकँपी आ जाती है। और इस श्रावक ने इस तरह सहन किया! धन्य है, धन्य है, ऐसे महाश्रावक को..लेकिन साहब! इस तापस को ऐसी क्रुर बुद्धि क्यों पैदा हुई? तापस हो कर ऐसी इच्छा रखना क्या उचित है? क्या जिनधर्म ने उसका कुछ बिगाडा था?

साधु - इस भव में तो खास कुछ नही बिगाडा, तापस का पवित्र आशय बिना का अज्ञान तप होने से उस को शाता पूछने वह नही जाता था... और उसके पैर नही पडता था, उसी का बदला इस तरह से लिया..

धर्मसार - तप करना या नही करना यह तापस की इच्छा की बात है, तो उसी तरह शाता पूछने जाना या नही जाना और पैर पडना या नही पडना ये जिनधर्म की इच्छा की बात है। तो उसमें उसे ऐसा दंड नही दिया जा सकता! यह तो घोर अन्याय ही कहा जायेगा! यह तापस नही, राक्षस ही है! क्या जिनधर्म को उसके उपर द्वेष नही हुआ?

साधु - नही! वो समझता था, उसे मेरे उपर जो द्वेषभाव है, वो इस भव के कारण नही है, वो तो निमित्त मात्र है! इस द्वेष के पीछे मेरे ही द्वारा पूर्वभव में किया गया कोई गलत व्यवहार ही प्रबल कारण है। ऐसा सोच कर जिनधर्म स्वस्थ था! उसे तापस पर बिल्कुल द्वेष भाव नही था।

धर्मसार - क्या सचमुच पूर्वभव की कोई घटना थी?

साधु - हाँ! जिनधर्म पूर्वभव में राजा था और यह तापस उसी नगर में सेठ था। सेठ की रूपवती पत्नी को देखकर राजाने अपहरण करके उसे खुद की रानी बना दिया। वह राजा होने से ऐसा करना खुद का हक है ऐसा समझता था। यह स्पष्ट अन्याय होते हुए भी ''मुझे कहनेवाला कौन?'' ऐसा अभिमान था! '' यह मेरा कुछ भी बिगाड नही सकता'' ऐसा घमंड था।

सेठ की शिकायत से महाजन राजा को समझाने आया, तो राजाने महाजन का भी तिरस्कार किया। बस उस दिन से सेठ राजा के उपर सतत और सख्त द्वेष करता रहा। वह जंगल में तापस बना। फिर बहुत भव करने के बाद वो सेठ अग्निशर्मा तापस बना।

धर्मसार - ऐसा परस्त्री लंपट राजा तो नरक में ही गया होगा?

साधु - नहीं! दूसरी रानीओं ने खटपट करके सेठ की पत्नी जो नयी रानी बनी थी, उसे मार डाला। उसका सडा हुआ शव देखकर राजाको जबरदस्त दुख हुआ, फिर संसार की भयंकरता - अनित्यता के सोच-चिंतन से प्रगट प्रचंड वैराग्य से दीक्षा लेकर देवलोक में गया और वहाँ से जिनधर्म बना।

धर्मसार - कथा में तो गजब का टर्निंग आया, आज का परस्त्रीलंपट कल सच्चे पश्चाताप से वैरागी साधु भी बन सकता है। मानव के मन को कौन पहचान सकता है? उस राजा ने वैराग्य से दीक्षा लेकर प्रबल साधना के जरिये देवलोक प्राप्त किया। फिर भी क्या वो पाप साफ नही हुआ कि, जिसकी बदौलत जिनधर्म के भव में इतना सहन करना पडा?

साधु - तुम्हारे हिसाब के चोपडे में जिनदत्त के खाते में ५००० रुपये देने का है और देवदत्त के खाते में ५००० रुपये लेने का है, तो क्या आमने सामने दोनों का छेद कर सकते हैं? छेद करके दोनो खाते बंद कर सकते हैं?

धर्मसार - नहीं! यह कैसे हो सकता है? जिनदत्त को ५ हजार देने ही पडेंगे और देवदत्त से ५ हजार लेने ही चाहिए।

साधु - ठीक उसी तरह जैन धर्म में बताये कर्मसिद्धांत में भी यही कहा है। उसने वैराग्य से साधना की। बहुत अच्छा! उसके खाते में इतना पुण्य जमा हुआ। उसे देवलोक मिलेगा। परंतु उसने सेठ के साथ अन्याय भरा व्यवहार कर के जो पाप किया, और खुद पर द्वेष पैदा हो ऐसा निमित्त देने का गलत काम किया है, उसका हिसाब समाप्त नही होता है। यद्यपि चारित्र पूर्व के पापों का प्रायश्चित माना जाता है और ऐसा भी हो सकता है कि राजा ने दीक्षा लेते समय सेठ के साथ किये हुए अन्याय का पश्चाताप भी किया हो। परंतु जिस तरह किये हुये पापों का प्रायश्चित जरुरी है, उसी तरह जिसके साथ अन्याय हुआ हो, और वैर की गांठ बांध दी हो, उसके साथ के वैर का विसर्जन भी होना जरुरी है। खुद दिल से मिच्छामि दुक्कडम् दे और सामने वाला वैर की गांठ छोड दे, तो वैर का विसर्जन हो सकता है। अगर वो वैर की गांठ ऐसी ही रखे, तो दीक्षा से दूसरे पापों का नाश होने पर भी, वेरानुबंध से आगे के भव में वो बदला लेगा, उस वक्त समता से सहन करने के पहले वो कर्म का नाश नही होता, हिसाब वहाँ तक पूरा नही होता...

धर्मसार - तो ये हिसाब किस तरह से समाप्त होगा?

साधु - या तो परस्पर हृदयपूर्वक क्षमापना करने से, वैर का - द्वेष का विसर्जन करने से, अथवा जिसको अन्याय सहन करना पडा, वो दूसरे भव में जवाबी कारवाई के रूप में भयंकर व्यवहार करे तो भी और इस तरह सामने से आते भयंकर

व्यवहार में भी स्वस्थ रहे, उस पर द्वेष नही करे और जिस को वैर था, उस को भी वैर लेने के संतोष से अपने मन में से भी द्वेष निकाल दे, तब हिसाब पूरा होगा।

धर्मसार - इसका अर्थ यही हुआ कि इस भव में कमजोर, पराधीन नौकर, दास - चाहे कोई भी हो, उसके साथ अन्याय नही करना चाहिए।

साधु - बराबर! ज्यादा देकर कम लेना वो ही समझदारी है। परंतु कम देकर अथवा नही देकर या, ठगाई से, या मजबूरी का गलत फायदा उठा कर ज्यादा लेना, छीन लेना, झपट लेना, वो तो मूर्खता ही है। भविष्य में दुख के कडवे फल मिले ऐसे विष वृक्ष को बोने जैसा है।

धर्मसार - यह बात तो इस दृष्टांत से समझ में आ गयी। परंतु आप कहना क्या चाहते हो?

साधु - बात इतनी ही है कि पूरे नगर का प्रियपात्र बना व्यक्ति भी किसी के लिए अप्रिय भी हो सकता है। भाई - पिता का प्रिय बना व्यक्ति भी माता के लिए अप्रिय हो सकता है।

धर्मसार - परंतु माता को? जन्म देनेवाली माता को? साहब! आपने ऐसा कहीं सुना भी है?

साधु - महानुभाव! कर्म के नाटक विचित्र हैं, भवितव्यता के भाव अकल्प्य हैं, ऋणानुबंध के खेल न्यारे हैं। इस संसार में ऐसा कोई भी प्रसंग असंभवित नही है। **समरादित्य** कथा में प्रसंग है ही! **गुणसेन** के व्यवहार से गुणसेन पर द्वेष रखने वाले **अग्निशर्मा** ने दूसरे भव में पुत्र बनकर पिता बने गुणसेन को द्वेष - वैर से मार डाला। तीसरे भव में अग्निशर्मा **जालिनी** नाम की माता और **गुणसेन** शिखी नाम का पुत्र बना। सगी माता के जुल्म से इस शिखीकुमार ने दीक्षा लेकर अन्यत्र विहार किया। बाद में जालिनी ने पश्चाताप का नाटक कर वापस खुद के नगर में बुलाया और जहर मिश्रित लड्डु वहोराया। इस तरह मुनि के मोत का निमित्त बनी... बोलो! क्या अशक्य है?

धर्मसार - ये सब गजब हैं। मैं जो कह रहा हुं, उस में कैसा गजब खेल है कि माता जिस पुत्र को खूब प्यार करती है, उस पुत्र को मिल रहे प्रेम का गेरलाभ उठाने का मन नही होता है बल्कि खुद के भाई के साथ हो रहे अन्याय को देखकर वह दुखी होता है। और अन्याय को दूर करने के लिए शक्य प्रयत्न भी करता है। आम दुनिया में देखा जाये, तो माता-पिता को, बुजुर्गो को, राजा को जिस पर पक्षपात होता है, वो उस पक्षपात के जरिये बार-बार गैरलाभ उठाता है और जो कमजोर है, उसे दबाता है, हैरान करता है, घोर अन्याय करता है। लेकिन यहाँ पर उल्टा देखने को मिल रहा है।

साधु - आप ये सब बातें आपके घर की कर रहे हो ना?

धर्मसार - हाँ! लेकिन आपको कैसे पता चला? (महाराज हँसे, कुछ नहीं बोले...)

धर्मसार ने कहा - सा'ब! मुझे ये ही बात करनी है। जिस तरह मैं इस नगर में श्रीमंत सेठ के तौर पर प्रसिद्ध हुं, उसी तरह मेरी पत्नीने भी श्रीमंत सेठ के वहाँ जन्म लिया है। हम दोनों की शादीहुई। उसके संस्कार भी कोई खराब नही है, एक संस्कारी गृहिणी की तरह ही मेरे वहाँ रही है। मुझे पहला पुत्र हुआ, उसका नाम **राजललित** रखा (कहीं पर राजमिलित भी आता है) माता को पुत्र पर घनिष्ठ प्रेम था। जब वह गर्भ में आया, तबसे मेरी पत्नी उसे खूब लाड - प्यार करने के तरह तरह के मनोरथ करने लगी। जब जन्म हुआ, तबसे माँ की आँखो का तारा, कलेज का टुकडा, हृदय का हार बन गया! माता पुत्र को क्षणभर के लिए भी अपने सेअलग नही करती। उसे अपने प्रेम के सागर में नहला दिया। तब मैं समझता था, हरएक माँ अपने पुत्रस्नेह से पागल होती है। उसी तरह यह भी पुत्रप्रेम से पागल है।

परंतु थोडे ही समय में मेरी पत्नी फिर से गर्भवती हुई। लेकिन इस बार उसका स्वरूप बिल्कुल बदल गया। गर्भ पर इतना द्वेष कि गर्भ को खत्म करने के लिए तरह तरह के उपाय आजमाये। मंत्र - तंत्र - औषधि - तावीज - कामण - टुमण... बाप रे! क्या क्या नाटक नहीं किये? मैंने उसे रोका भी, और कहा - दूसरा लडका होने पर मेरा आनंद दो गुना ही होगा। लेकिन तुम क्यों उसे जन्म देना नही चाहती? तब वो शेरनी जैसी हो गयी और कहने लगी, मैं उसे जन्म देने वाली नही, गर्भ में ही मर जाये वैसा ही करनेवाली हुं। जब से यह जीव गर्भ में आया है, तब से मुझे उसके उपर क्रोध चढ रहा है। मेरा मन एक ही रटन कर रहा है कि, उसे मार डाल, मार डाल...

बोलो साहब! अब तक तो उसने मुँह भी नही देखा, फिर भी इतना द्वेषभाव! पहले पुत्र पर तो कल्पना नही कर सके उतना प्रेम और दूसरे पुत्र पर किसी के दिमाग में नही बैठे उतना द्वेष...

एक के लिए देवी तो दूसरे के लिए डाईन।... एक ही स्त्री का खुद के सगे दो पुत्रो के संबंध में अंतिम कक्षा का व्यवहार!!

साधु - बस यही है कर्म का नाटक! ऋणानुबंध की कथा! पूर्वभव के व्यवहार का बदला। नही तो गर्भ में रहे बालक ने इस भव में माँ का क्या बिगाडा है?

धर्मसार - साहब! यही बात है। गर्भस्थ बालक के प्रति उसका रौद्र स्वरूप देखकर मैं डर गया। मानो कि इसी बात को ले कर मुझे गर्भस्थ बालक के उपर दया से विशेष प्रेमभाव पैदा हो गया है। मुझे विश्वास हो गया, कि बालक का जन्म होने पर

भी उसकी माँ उसे जिंदा नही छोडेगी। इसलिए मुझे ही सावधानी रखनी पडेगी।

और ऐसा ही हुआ... बालक का जन्म अलबत्ता हुआ ही। गर्भ में मारने की सारी योजनाएँ निष्फल गयी! जैसे ही उसका जन्म हुआ कि उसकी माताने मुँह फेर लिया और अपनी दासी को आज्ञा की... लेकर जा... लेकर जा... मेरे हृदय को जलाती आग मुझे नही चाहिए, मुझे उसका मुँह भी नही देखना। डाल दो इसे कुडेदान में... कुत्ता भले उसे काट काट कर खा जाये। जा जल्दी कर...

दासी भी बालक की जनेता का रौद्र स्वरूप देखकर चकित हो गई। बालक को उठा कर कुडेदान में डालने गयी। परंतु मैं तो पहले से ही सावधान था। मैंने उसे रोका, और पूछा। उसने सब बात बता दी, माता का द्वेष भी बताया। मैंने उस बालक के लिए दूसरे भवन में पालन पोषण की व्यवस्था की। वहाँ पर धायमाताओं को रखा...

परंतु देखो साहब! कर्म को शर्म कैसी? राजललित को खुद के छोटे भाई को देखने की खुब इच्छा, उसके साथ खेलने की खुब होंश, इसलिए वो उसको मिलने - खेलने आता... इसका नाम मैंने **गंगदत्त** रखा था! जब माता को पता चलता कि राजललित उसके साथ खेलकर आया अथवा उसने उसे खिलाया पिलाया। तब माता राजललित को तो कुछ भी नही कहती, उल्टा प्रेम से ही व्यवहार करती। परंतु गंगदत्त के बारे में तो कुछ नहीं कहना ही अच्छा है। उसे लकडियों से मारती, घर के सभी बर्तन साफ करवाती, कपडे धोना, कचरा निकालने का भी काम करवाती। राजललित ने जो खाने पीने की चीज दी, उसका पूरा कस निकालती। गंगदत्त की आँख में आंसु आ जाते - शरीर थक जाता। फिर भी माँ को बिल्कुल दया नही आती। बेचारा बालमजदूर की तरह काम करता। कोई अरमान नही। कोई इच्छा नही। बाल - हठ की तो बात ही कहाँ? राजललित भी छोटे भाई की पीडा से द्रवित हो जाता।

ऐसे तो मैंने इसी तरह से बंदोबस्त किया था कि गंगदत्त भूल से भी माता की नजर में न आ जाये। लेकिन दोनों भाईयों के बीच में इतना प्रेम है कि राजललित को उसे मिले बिना चैन नही पडता और वो यदि मिला, तो गंगदत्त के उपर जुल्म की झडी बरसती।

साधु - क्या ऐसा रोज होता है?

धर्मसार - हाँ! गंगदत्त लगभग १४ साल से यह पीडा सहन कर रहा है। जन्म से माता का सुख नही, परंतु जुल्म ही देखा है।

साधु - तो फिर आज ही ये सब बाते क्यों कर रहे हो?

धर्मसार - साहब! आज तो हद हो गयी। आज कोई उत्सव के कारण घर में

खीर बनायी थी। राजललित को माताने जितनी चाहिए उतनी खीर खाने को दी। राजललित को गंगदत्त पर प्रेम ही है। माता के पास से मार खिलाने का कोई इरादा नहीं है।

राजललित ने माता को पता चले नहीं इस तरह से थोडी खीर गंगदत्त को खिला दी। गंगदत्त को माता के जुल्म का पूरा पता था - अनुभव था, परंतु बडे भाई पर उसे भी गजब का प्रेम है, इसलिए भाई के प्यार को ठुकरा न सका और खीर खा ली।

किसी भी तरह से माता को पता चला... गुरुदेव! फिर तो उस स्त्रीने जिस तरह से गंगदत्त को मारा है, राजललित ने कहा भी - माताजी! गंगदत्त का कोई अपराध नहीं। मैंने ही जबरदस्ती से खीर खिलाई है। फिर भी उसका तो एक ही रटन, तेरा कुछ भी अपराध नही, सब अपराध इसी का है। उसने मेरे हाथों से बनायी खीर खायी ही क्यों? अब उससे बुंद बुंद का हिसाब लुंगी। बाद में उस स्त्री ने कठोर सेठानी बनकर पहले गंगदत्त से घर का पूरा काम कराया। बेचारे को शरीर की शक्ति से ज्यादा काम करना पडा, मार नही पडनी चाहिये इसलिए सब काम करने लगा, शक्ति से ज्यादा काम बालक कैसे करेगा? वो थक गया। काम पूरा हुआ नही। माता को अब मारने का मौका मिल गया। कान में से कीडे गिर जाये इस तरह गालियाँ देती देती गंगदत्त को मारने लगी। राजललित यह देख न सका, दौडते दौडते मुझे बुलाने आया...

मैंने देखा, काम करके थके गंगदत्त को चाटा - लात-धक्का मारती हुई वह जिस तरह से पीडा दे रही थी... गंगदत्त रो रहा था। आजिजी कर रहा था। गिडगिडा रहा था। पैर पकडकर माफी चाह रहा था। पर उसे कुछ भी असर नही। मैंने बहुत मुश्किल से रोका। वो हांफती हांफती कह रही थी, तुम मुझे रोको मत। आज मुझे इस वैरी की मार मार के चमडी उतारनी है। कौन जाने, जब से पेट में आया, तब से मेरी आँखो में धुल की तरह पीडा देने वाले का आज गला घोंटना है। पूर्वजन्म के इस दुश्मनने मेरी खीर खायी ही क्यों? उसका पेट चीर कर खीर बाहर निकालुंगी।

साहब! आज तो गंगदत्त को मैंने जैसे तैसे बचा लिया। परंतु आगे यदि वो इस घर में रहेगा, तो उसकी माता उसे दु:ख दे देकर उसका कचूमर निकाल लेगी। मार डालेगी...

साहब! जिस तरह शिखी ने माता के त्रास से दु:खी हो कर दीक्षा ली। इसी तरह मैं गंगदत्त का पिता आपको मेरा पुत्र सौंप रहा हुं। आप उसे दीक्षा देकर आपके साथ ले जाओ। वह सलामत रहेगा तो मुझे शांति रहेगी...

साधु - देखो! भावीभाव के आगे किसी का नही चलता। परंतु तुम्हारी भावना हो और गंगदत्त की इच्छा हो तो अवश्य दीक्षा देंगे। इस निमित्त से उसको सम्यक्त्व की और चारित्र की प्राप्ति होगी तो इससे उत्तम दूसरा क्या? तुम उसके शरीर की सलामती चाहते हो और हम उसकी आत्मा की... घर में रहकर माता के त्रास से पीडित होकर माता पर हमेशा दुर्भाव करेगा, तो भविष्य में उसकी आत्मा का क्या होगा? इससे अच्छा दीक्षा लेकर विवेक प्राप्त कर माता के प्रति यदि मैत्रीभाव आ जाये, तो इसकी आत्मा दुर्भाव के सामने सलामत रहेगी।

धर्मसार - ऐसा दु:ख देनेवाली माता पर दुर्भाव किस पुत्र को नही होगा? ये होना सहज ही है, इसमें बुरा क्या?

साधु - दुर्भाव होना सहज है, क्योंकि अनादिकाल से जीवों पर दुर्भाव करने के ही संस्कार पडे हैं, बेशक, इसके लिए निमित्त अलग अलग होते हैं। परंतु दुर्भाव करना अच्छा नही, खराब ही है, क्योंकि उससे भविष्य में ऐसी ही भयंकर दुख की परंपरा खडी होती है। दुर्भाव का नहीं होना और अगर हो गया हो तो चला जाना, उसी में ही जीव का कल्याण है।

धर्मसार - परंतु बिना कारण इतनी पीडा सहन करना और दुर्भाव नहीं होना ये कैसे संभव है?

साधु - शक्य है। जिसे खुद की पूर्वभव की भयंकर भूल दिखे अथवा सामनेवाले के त्रासभरे व्यवहार में भूतकाल में उसके साथ खुद के द्वारा किये दुर्व्यवहार का हिसाब दिखे तो दुर्भाव नही होगा।

धर्मसार - इस गंगदत्त ने उसकी माता के साथ पूर्वभव में कौनसा दुर्व्यवहार किया था?

साधु - श्रुतज्ञान के आधार पर मुझे तुम्हारे दोनों पुत्रो का और उनकी माता का पूर्वभव दिखाई दे रहा है। पूर्वभव में भी ये दोनों भाई ही थे। परस्पर खूब प्रेम था। एक दिन दोनों बैलगाडी में बैठ कर कहीं जा रहे थे। उस भव में भी राजललित बडा भाई था, छोटा भाई गंगदत्त बैलगाडी चला रहा था। उसी रास्ते पर नेवला डर के मारे इधर उधर दौड रहा था। बडे भाई ने नेवले को देखा तो तुरंत अपने छोटे भाई से कहा - जरा संभाल के धीरे से चलाना, देख! देख! वो बेचारा नेवला इस बैलगाडी के नीचे न आ जाये। तब छोटे भाई ने कहा - मैं बैलगाडी रास्ते पर चला रहा हुं, रास्ते के बाहर नही। फिर यह नेवला बैलगाडी के नीचे आकर कुचल जाये, इसमें मेरा क्या अपराध?

धर्मसार - महाराज! इसकी बात तो बराबर ही है ना? बैलगाडी खुद के मार्ग

पर चलती हो और बिना सावधानी से कोई रास्ते के बीच में आ जाये और मर जाये तो बैलगाडी वाले का गुनाह नहीं माना जायेगा।

साधु - महानुभाव! ये सब कायदे की बातें हैं। वर्तमान व्यवहार भले कायदे के अनुसार चलता हो, परंतु कर्म का सिद्धांत कायदों से नही चलता। रास्ते पर वाहन चलाने के या चलने - फिरने के अधिकार से भी बढ़कर जीवों का जीवन बचना ये बडा मूलभूत अधिकार है। ऐसे कोई भी कारण से कायदे की दृष्टिसे आप सच्चे होंगे, लोग की नजर में न्याय संपन्न होंगे... दुनिया आपको गुनहगार नही मानेगी - फिर भी आपके व्यवहार से यदि दूसरों को पीडा-व्यथा पहुंची, अथवा उनके मनमें दुर्भाव हुआ, उसे थोडा भी नुकसान हुआ, तो आपको कर्मसत्ता माफ नही करेगी।

भगवान ने कहा है कि कोई भी परिस्थिति में जीवों को बचाना आवश्यक है। जीवों से प्रेम ही करना है, जीवों के प्रति दया के भाव रखने हैं। तुमने इस नियम को तुम्हारें माने हुए न्याय के खातिर भी यदि तोडा, तो कर्म सरकार दंड देगी ही। कोई भी कारण क्यों न हो - फिर वो तुम्हारीं या लोग की दृष्टि में उचित भी क्यों न हो, लेकिन जीवों के साथ व्यवहार में द्वेष - दुर्भाव आने पर भयंकर दुख की परंपरा भगवान ने अपने केवलज्ञान में देखी है। इसीलिए जीवदया-अहिंसा-मैत्री के लिए प्रभु का सख्त आग्रह है। कर्म के सिद्धांत और कायदे भगवान ने नही बनाये, परंतु परम उपकार करके हम सब को बताये हैं। जीव कर्म कैसे बाँधता है, कर्म जीव को कैसे चिपकते हैं और किस तरह से उदय में आकर के तरह-तरह के विचित्र अनुभव कराते हैं ये सब बातों का केवलज्ञान से पता लगाकर भगवान सभी के सामने ये रहस्यों को खुल्ला कर सभी को सावधान करते हैं। उसमें भी उन्हों ने कर्मों के बारे में एक मुख्य विषय को पकड लिया है और खुब भारपूर्वक इस विषय को प्रस्तुत किया है। वो है...

यदि तत्काल की कोई भी घटना को आगे करके न्याय - वाजिब है इत्यादि पुकार कर कोई भी जीव के प्रति तुमने दुर्भाव किया, वाणी में कटुता रखी, या अप्रिय व्यवहार किया, तो कर्म तुमको अपने जाल में फँसायेगा ही। बाद में वो ही आपस में वैर-द्वेष की परंपरा खडी करा कर बार बार दोनों के बीच में संघर्ष - दुर्व्यवहार इत्यादि करायेगा ही। इस के बाद कर्म को दोनों को भयंकर दु:ख की परंपरा में कुचलने का मौका मिल जायेगा। इसीलिए यदि तुम्हें ऐसे दुखमय भविष्य के कारणभूत कर्म से बचना हो, तो कोई भी निमित्त से जीव पर दुर्भाव करो नहीं। वर्तमान में जो कुछ भी सहन करना पडे, गँवाना पडे, लेट गो करना पडे, लोग जिससे हांसीपात्र ठहराये ऐसा सब कुछ सहन कर लेना, क्योंकि वर्त्तमान के पीडा-नुकसानी सुई के दर्द जितने हैं, किंतु इसमें चुक गये और दूसरों के साथ सही बात के या न्याय के

नाम से द्वेष आदि किये... तो भविष्य में कर्म जो पीडा-दर्द देगा, वो शूली पर चढने जितनी होगी। इसलिए भगवान सहन करके भी मैत्री ही अपनाने को कहते हैं। मानो कि सहन करना याने मैत्रीभाव नामक हीरा के लिए चुकाया हुआ मूल्य। और सहन करने की स्थिति भी अपने कर्म से ही पैदा हुई है। आपके पुत्रों के प्रसंग से भगवान की इस बात को पुष्टि मिलती है। अस्तु!

बडे भाई की सावधान रहने की बात छोटेभाई ने स्वीकारी नही। नेवला बेचारा अज्ञ था। डरा हुआ था। अत: इधर-उधर दौड रहा था। छोटे भाई ने बैलगाडी की स्पीड कम की नहीं। नेवला गाडी के नीचे आ गया - तडपने लगा... छोटे भाई का तो एक ही रटन था, नेवला इस तरह रास्ते पर दौडता रहे और मरे तो इसमें मेरी क्या गलती?

परंतु बडे भाई को नेवले पर दया आयी। उसने नीचे उतरकर नेवले के पास जाकर प्रेम से सहलाया। वो बचा तो नही, परंतु प्रेम मिलने से पीडा में राहत मिली, संतोष का अनुभव हुआ। इससे कुछ शुभभाव में मरकर इसी हस्तिनापूर में सेठ की बेटी हुई जो तुम्हारी पत्नी है।

कर्म को न्याय करना था, इसलिए बडा भाई पहले मरकर इसी स्त्री के पेट से बडे पुत्र के रूप में जन्म लिया जिसका नाम आपने राजललित रखा। वह स्त्री उस बेटे पर इतना प्रेम क्यों बरसाती है? इसका जवाब आपको मिल गया। इस भव में वह इस बेटे की कहीं पर गलती दिखती ही नही, मात्र प्रेम... प्रेम... प्रेम... कारण मोत के नाजुक वक्त पर इसी राजललित ने प्रेम दिया था... सोचो! क्षणभर के प्रेम का बदला इतना विशिष्ट पुरस्कार, तो हमेशा सबसे प्रेम भरा व्यवहार करेंगे, तो कुदरत कैसा विशिष्ट पुरस्कार देगी? अरे! तीर्थंकर भी बना दे...

और वो छोटाभाई नेवले की मोत के लिए जवाबदार था, फिर भी उसको कोई अफसोस नहीं था, वह तो बेपरवाह था। वो मरकर इसी स्त्री के पेट में दूसरे पुत्र के रूप में आया... गर्भ में आने मात्र से उस स्त्री को इतना सारा द्वेष प्रगट क्यों हुआ? उसका रहस्य मिल गया? न्याय या अन्याय किसी भी बातको आगे रखकर जीव की उपेक्षा - या जीवपर द्वेष कितनें नुकसानवालें सिद्ध होते हैं, वो तुम्हारे छोटे पुत्र गंगदत्त के साथ उसकी माता के व्यवहार से स्पष्ट होता है।

धर्मसार - अरर! प्रेम - द्वेष के संबंध में पूर्वभव के हिसाब-किताब गजब के हैं। लेकर जाओ साहब! लेकर जाओ! गंगदत्त को। भरोसा हो गया, गंगदत्त कितना भी प्रिय होने का प्रयत्न करेगा, फिर भी वह अपनी माता को अप्रिय ही होगा... गंगदत्त को आप ही तालीम दो। उस को पूर्वभव बताना, जिससे माता के इस प्रकार

के व्यवहार के पीछे माता का अपराध नहीं बल्कि खुद का ही पूर्वभव का व्यवहार कारण है इस बात का उसे पता चले। तो ही वो माता के प्रति द्वेष बिना रह सकेगा, और उसका भविष्य सुधरेगा।

अब मुझे भी उसकी माता के इस प्रकार के व्यवहार के लिए आश्चर्य नही होगा। ये तो खाते में रहा जमा-उधार हिसाब ही बोल रहा है।

साधु महाराज ने गंगदत्त को दीक्षा दी। राजललित को छोटे भाई के प्रति गाढ प्रेम था, और माता के छोटे भाई के साथ के व्यवहार से खुब उद्‌वेग था, अत: उसको भी संसार के प्रति वैराग्य हुआ। अत: माता के अनन्य प्रेम को छोड कर, माता की गिडगिडाहट की परवाह किये बिना उसने भी दीक्षा ली। दोनों ने सुंदर आराधना की। गंगदत्त को अंतिम समय में माता का व्यवहार याद आया। मन में व्यथा उत्पन्न हुई... खुद कितना कमनसीब कि माता का प्रेम भी नही पा सका। उसने नियाणा किया, मेरे तप, संयम, ब्रह्मचर्य के प्रभाव से अगले भव मैं जगत के सभी जीवों को प्रिय बनूँ।

दोनों देवलोक में गये। देवायुष्य पूर्ण होने पर राजललित बलदेव - बलराम बना और गंगदत्त बना श्री कृष्ण वासुदेव...। जो आज भी जैनेतरो में सबसे प्रिय इष्ट देव - भगवान के स्थान पर है।

(कथा : आवश्यक निर्युक्ति ग्रंथ)

आदमी जब तक निरुपद्रवी होता है, तब तक उसकी उपेक्षा होती है। फिर वह संतप्त होकर उपद्रव करता है, तब त्रास होता है। यह ही है सरल को मुश्किल करने की कला।

भगवान कहते हैं – कोई भी परिस्थिति में जीवों की रक्षा ही करनी है, जीवों के साथ प्रेमभरा ही व्यवहार करना है।

किसी के भी प्रति किसी भी वजह से द्वेष–क्रोध–वैर–दुर्भाव–अरुचि नहीं होना – इसी में अपना कल्याण है।

जला हुआ दूधपाक

लगभग ३५-४० साल का विक्रम नाम का एक युवक उपाश्रय में महाराज साहिब को वंदन करके उनके पास बैठा। महाराज साहिब से कहा - आपके पास समय हो तो कुदरत के न्याय की - योग संयोग की बात कहुँ।

महाराज - कहो।

विक्रम ने कहा - आज करीबन ग्यारह बजे एक बहन आर्थिक सहायता की अपेक्षा से मुझे मिलने आयेगी। पूरी घटना इस के साथ संबंधित है। मैं पूर्व की घटना से ही शुरु कर पूरी कहानी सुना दूँ, वो अच्छा रहेगा।

महाराज :- जैसी इच्छा।

विक्रम - आज से करीब २४-२५ साल पहले जब मैं पुरानी एस. एस. सी. में फर्स्ट क्लास ग्रेड से पास हुआ था। उस वक्त एस. एस. सी. याने ११वीं कक्षा थी। डीग्री कोर्स ११+४ का था। एस.एस.सी. में फर्स्ट क्लास बहुत बडी बात गिनी जाती थी। महाराज - हाँ... ख्याल है।

विक्रम - हमारे घर में पप्पा - मम्मी, मैं सबसे बडा बेटा और मेरा एक छोटा भाई, मेरी एक छोटी बहन ऐसे ५ का परिवार... हम चाली सीस्टमवाले मकान में भाडे की रुम में रहते थे। हम नीचले मध्यम वर्ग के थे, घर की परिस्थिति ऐसी थी कि हम एक-एक पैसे के लिए तरसते थे। कभी कभी तो घर में दुध भी नही आता। कंपनी में जिस तरह मशीन से १००% केपेसीटी से काम लिया जाता है, उसी तरह हम गरीब खुद के धन-साधन वगैरह का पूरेपूरा कस निकालते थे। श्रीमंत के १०० रुपये के खर्च में शायद एक रुपया जरुरियात के खर्च में जाता है, लेकिन गरीबों का रुपया इतने महत्त्व की जरुरियात के लिए जाता है कि, हम कह सकते हैं, एक रुपया १०० रुपये के भाव में गया।

होटल, पिक्चर, पीकनीक ये सब तो हमारे लिए सपनों की बात थी। कपडे भी ट्रावेलींग करते थे। पिताजी के कपडे मैं पहनता था, और मेरे बाद में मेरा छोटा भाई। पिताजी पहले एक जगह नौकरी करते थे। उनके उपर चोरी का आरोप आया। ६ महिने जेल में जाकर आये। फिर तो निर्दोष साबित हुए। सेठ का आरोप झुठा था।

सेठ को भी बाद में बराबर ख्याल में आ गया था।

परंतु इस आघात से मेरे पप्पा को एक बार माइल्ड अेटेक भी आ गया। फिर तो बजाय नौकरी छोटे बडे धंधे, दलाली, जिसमें रुपया मिले, ऐसा कोई भी कार्य करने को वे तैयार थे। परंतु वे हृदय से इतने भोले, सरल और इतने कमजोर भाग्यवाले थे कि ज्यादातर तो उनको ठगने वाले ही लोग मिलते थे, अमुक तो अपना काम करवा कर रुपया देते नहीं थे, तो कभी कुछ कमाई हुई, तो दूसरे ऐसे मिल जाते थे, जो आकर्षक ऑफर में पिताजी को फंसाकर धन हडप कर जाते थे।

साधु महाराज - आपके पिताजी क्यों लोभ में आ जाते थे ?

विक्रम - सा'ब! मेरे पप्पा लोभी नहीं थे, परंतु घर की गरीबी से खूब दुखी थे। उनके मन में हमेशा चुभता था कि, मैं मेरे परिवार की कोई इच्छा पूरी नही कर सकता। अरे! साल में एकाधबार पिक्चर - होटल में भी नही ले जा सकता। ऐसे विचार से वे अत्यंत व्यथित हो जाते थे।

हम मामा के घर जाते, तब ही पिक्चर - होटल जाते। बस इसी कारण पप्पा छोटी - बडी लालच भरी ओफर में फंस जाते थे। बेचारे परिश्रम भी सख्त करते थे। परंतु दुनिया में ऐसा कहा जाता है कि जिसे दीक्षा की भावना हो और वो शादी कर के संसार शुरु करे, तो वो संसार में दुखी होता है।

महाराज - ऐसा नहीं है! हाँ, उसे संसार में रस नही होने से मानसिक दुख होता है। वैसे तो यह भाग्य का ही खेल है।

विक्रम - आपकी बात सही होगी। परंतु मेरे पिताजी को दीक्षा की भावना थी। परंतु दादाजी की परिस्थिति को देखकर शादी करनी पडी। जो होगा वो। परंतु उनको अत्यधिक दुख सहन करना पडा। हम परिवारने तय किया कि पप्पा बाहर से दु:खी हो कर घर आते हैं, किन्तु पिताजी को यह दु:खभार घर में नही रहना चाहिए। पैसे से मिलती मौज भले ही न मिले, मन से मिलता मजा क्यों नही प्राप्त करना ? जब भी पप्पा घर आते, तब हम आनंद मंगल की बातें करके पप्पा का भार हल्का करते...

शुरु शुरु में तो मम्मी टोकती, आप क्यों ठगनेवाले लोग के पल्ले पडते हो ? जरा लोगों को पहचानना सीखो। पिताजी भी इस बात को स्वीकारते थे। लेकिन भाग्य - भवितव्यता ही ऐसी थी कि ऐसे लोग ही मिल जाते थे। फिर तो मम्मी भी समझ गयी कि जब भाग्य इसी तरह से खेल खेलना चाहता है, तब क्यों बार बार ताना देकर जलते में घी डालना ? ज्यादा दुखी बनाना ?

इसलिए पप्पा को घर में साधनों से नही, शब्दों से, बातों से सुखी रखने के

लिए हम सब हमेशा प्रयत्न करते थे। पप्पा घर में सुखी, बाहर दुखी... परंतु पप्पा मन में हमेशा महसूस करते थे कि इतने अच्छे बच्चो को मैं सुखी नही कर सकता।

उसी अरसे में मैं एस. एस. सी. में फर्स्ट क्लास पास हुआ। वो भी बिना ट्युशन से। मेरी इच्छा सुबह कालेज जाना और दोपहर के बाद पार्ट टाईम जोब करना, ऐसी थी। बी.कोम तक पढ लेने से नौकरी भी अच्छी मिल सकती थी।

हमारी ज्ञाति में स्कुल फीस्, नोट, पुस्तके वगैरह तो मुफ्त में मिलते थे। पिछले चार साल से एक उदार भाई ने अपनी अचानक गुजर गयी पत्नी के नाम से ज्ञाति में कॉलेज में पढते गरीब विद्यार्थियों के लिये स्कोलरशीप की योजना शुरु की थी। उस योजना के जरिये कोलेज फीस्, किताबे, नोट भी मिलते...

पिताजी की आर्थिक स्थिति कोलेज फीस् चुकाने की नहीं थी। यदि योजना का लाभ मुझे मिले, तो ही मैं आगे पढ सकता था ऐसी परिस्थिति थी। इसलिए मैंने ज्ञाति की योजना में अरजी दी। मुझे वहाँ बुलाया गया। परंतु भाग्य को मेरे साथ खेल खेलना ही पसंद था। भावि के भीतर में क्या छुपा होगा?

जिस भाई ने योजना शुरु की थी, उसी का २० साल का बेटा ज्ञाति की ऑफिस में आया। ऐसे तो ज्ञाति के ही युवकों कार्य संभालते थे। लेकिन किसी युवक के कहने से वो आज पहली ही बार आया, लखपति पिता का वह इकलौता बेटा था। उसके दिमाग में धन का गुमान, पिताने शुरु की योजना का घमंड था।

मैं वहाँ गया। उसने ही मेरा इंटरव्यु लेने का शुरु किया। उसका इतना रफ टफ व्यवहार... मुझे पूछा - इधर के सिवाय और कहाँ पर स्कोलरशीप के नाम से रकम हडप करने की योजना है?

महाराज - इसका क्या तात्पर्य?

विक्रम - जिस तरह ज्ञाति में योजना चलती है, उसी तरह कालेज में भी चलती है, और इसके सिवाय संघ में भी चलती है। बेशक, ये बाते झूठी नही कि गरीब विद्यार्थी दो-तीन जगह पर अरजी देते हैं और चान्स मिलने पर सब जगह से रकम ले भी लेते हैं। परंतु इसके पीछे गरीबी की भरपूर बेबसी ही काम करती है। क्योंकि अगर थोडी रकम ज्यादा मिले, तो एकआध विषय की कोचिंग क्लास भी कर सके। कोचिंग क्लास की फीस कोई संस्था से या योजना में मिलती नही। और रुपया थोडा ज्यादा मिले तो घरवालों को भी सहारा मिलता है। सा'ब! सही गरीबी जिसने देखी है, उसको ही पता होता है कि एक-एक रुपये की किमत क्या होती है? मेरी मम्मीने घर चलाने के लिये खाखरा-पापड बेचने जैसे भी काम किये हैं। मुझे डंक इस बात का

था कि वो युवक गरीबी से बेबश बने हुए को स्कोलरशीप के नाम से सहायक बनना चाहता है या फिर अपमानित करने का आनंद प्राप्त करना चाहता है?

महाराज - मिली हुई संपत्ति को जो स्वस्थता से पचा सकता है, वो ही दान के झरिये से धन लेने वाले को खुद का उपकारी मानता है, ऐसा सोच कर कि, पाप की गंदी नाली में जाने वाले मेरे धन को यह भाग्यशाली पुण्य की पवित्र गंगा की ओर मोड दिलाने में सहायक बना। आम तौर पर दान लेने वाला उपकारी लगने से ही देनेवाला नम्र रह सकता है।

परंतु जो खुदके या खुद के पिता के धन को स्वस्थता से पचा नही सकते, उनके दिमाग में दौलतमंद होने की राई भर जाती है, फिर भले ही वो धन अन्याय से पाया हो। और दान भी करेंगे तब भी यही समझते हैं कि, हम दूसरों के प्रति उपकार करते हैं। इसलिए दान देते वक्त भी व्यवहार में तिरस्कार, अपमान करने की वृत्ति आ जाती है। हाँ! फिर क्या हुआ?

विक्रम - मैंने इस तरह के प्रश्नों के विषय में घृणा व्यक्त की। थोडी गरमा गरमी भी हुई। वहाँ बैठे हुए दूसरे युवकों को भी ऐसा व्यवहार पसंद नही आया। परंतु योजना के रुपये उसके बाप के जो थे, उसको कौन कह सकता था? उपर से उसने तो ताना भी कसा कि, योजना तो वास्तव में जरुरियात वालों के लिए है, उसका कोई गैरलाभ उठा न जाये, यह देखना मेरा फर्ज है, और तेरे पप्पा भले निर्दोष साबित हुए, परंतु आरोप तो चोरी का ही था ना...!

महाराज - गजब! चोरी का आरोप महत्त्व का, उसमें निर्दोष होना वो गौण।

विक्रम - सा'ब! इसी का नाम गरीबी। जिस तरह ट्राफिक वाले रोड पर मरे हुए कुत्ते के शब पर से सब अपने वाहन ले जाते हैं, उसी तरह गरीब का अपमान हर कोई कर सकता है। मेरा मन खट्टा हो गया। बिना स्कोलरशीप लिए वहाँ से निकल गया, मुझे जाते देखकर उसने वापस ताना मारा - लो देखो! स्कोलरशीप लेने निकला है और घमंड तो लाटसाहेब का रखता है।

सा'ब! पच्चीस साल हो गये, लेकिन मैं प्रसंग अभी तक नही भुला सकता। याद आते ही मन कडवी बदाम खाने जैसा हो जाता है। रह रह कर मन में हो जाता है, साले को एक थप्पड दी होती तो ठीक हो जाता... फिर देखा जाता।

महाराज - मन में जिसका पुनरावर्तन नाम का स्वाध्याय बार बार होता है वो बराबर पक्का हो जाता है... याद रह जाता है।

विक्रम - यानी क्या ?

महाराज - प्रवचन याद नही रहता क्योंकि जो सुना उसका पुनरावर्तन नही होता। उसका कारण यही है कि, उसमें रस नही है, उसका आकर्षण नही हैं, परंतु किसी ने ताना दिया तो उसको याद रखने में मन को रस है। मन को भूतकालीन अच्छी बातों को चाकलेट की तरह चुसने की अपेक्षा, खराब बातों की कडवी सुदर्शन घनवटी चुसने में ज्यादा अच्छा लगता है। इसलिये, कोई ताना मारे, एकआध बार दुखी करे, तो मन उसे बार बार याद करके जीव को बार बार दुखी करता है, और जैसे जैसे याद करें वैसे वैसे मन में उसका पुनरावर्तन होता है। जिससे वो बात ज्यादा मजबूत बनती जाती है। उसी कारण से २५ साल के बाद भी भुलाती नही है। विक्रम - तो क्या करुँ ?

महाराज - उस बात को मन में से निकाल देनी और छोड देनी चाहिए।

विक्रम - ऐसे कैसे छोड दूँ ? इस तरह का अन्याय कैसे चला लेना ?

महाराज - छोडेंगे नहीं, तो पकडके रखने से क्या लाभ हुआ ? मन में ऐसे विचार करने मात्र से कैसे अन्याय का बदला ले सकते हैं ? जमाली ने भगवान महावीर स्वामी का भर सभा में अपमान किया। लेकिन भगवान ने बात को पकडी नही, प्रभु जरा भी विचलित या दुखी नही हुए। और तुम एक ही बात को लेकर २५ साल से दुखी हो रहे हो। तुम्हें ऐसा लगता है कि, उसको थप्पड लगा दूँ ! तो क्या तुम थप्पड दे सकते हो ? और अब उस बात को याद करके थप्पड लगा भी दों, तो क्या तुम होशियार गिने जायेंगे ? बात यही है कि अपमान किसी को अच्छा नही लगता क्योंकि वो दुखी करता है। बस उसी तरह मन भी प्रसंग को बार बार याद कराकर दुखी बनाता है, तो क्या मन को भी सजा करेंगे ना ?

विक्रम- परंतु सा'ब ! ऐसी बाते छोडना चाहे तो भी छोड नही सकते।

महाराज - हाँ ! यह बात सच है। बहुत सारी अच्छी बातों में भूलक्कड बनता मन ऐसी बातों को छोडता नही है, क्यों कि मन का प्रिय विषय है - जीवद्वेष।

मन को किसी भी निमित्त से जीवद्वेष का अवसर मिल जाता है, तो वह उसी निमित्त - बात पर सतत घुमड़ी लेता रहता है। ऐसा कर वह जीवद्वेष को तीव्र-तीव्रतर-तीव्रतम बना देता है। अत: मन ऐसी बात को छोडने के लिए तैयार नहीं होगा। परंतु हम चाहे तो मन को इस घुमड़ी से मुक्त कर सकते हैं, क्यों कि अंत में हम ही अपने मन के मालिक हैं।

विक्रम - किस तरह से छोड सकते हैं ?

महाराज - कर्म और भवितव्यता को आगे करने से... उस युवक का क्या नाम था?

विक्रम - विजय।

महाराज - उस युवक को तेरा ही अपमान करने का मन क्यों हुआ? क्या इस भव में तेरा उसके साथ कोई गलत व्यवहार हुआ है?

विक्रम - नही ! इसलिए तो मुझे चुभता है। क्योंकि मैंने कभी उसके साथ ऐसा व्यवहार नही किया, यदि मैंने पहले उस के साथ कुछ गलत किया होता, तो मैं ऐसा मान लेता कि मैं ने जो गलत व्यवहार किया था, उस का बदला लेने उसने मेरे साथ ऐसा किया। तो मुझे इतना दुख नही लगता। मन को समझा देता कि वो अपमान का बदला ले रहा है।

महाराज - बस! बात को मन से निकाल देने की यही चाबी है, यदि यह व्यवहार बदलारूप - प्रतिक्रिया रूप लगे, तो ही प्रसंग का वजन घट जाता है, नहींवत् हो जाता है। फिर भूलने में दिक्कत नही आती। भगवान भी यही कहते हैं, उसने तेरा अपमान किया यह एक प्रतिक्रिया ही है, तेरे द्वारा इस भव में नही, परंतु पूर्वभव में उसके साथ किये गये अयोग्य व्यवहार की। इतना समझ लो कि, दूसरों का अपने साथ का बिना कारण जो अच्छा या बुरा व्यवहार होता है, वो पूर्वभव में अपने द्वारा उसके साथ के व्यवहार का ब्याज के साथ मिला हिसाब है। प्रतिक्रिया है। दूसरों के साथ के व्यवहार में जो सामान्य भूमिका में रहता है, वो ही अपने साथ के व्यवहार में जो अच्छापन या बूरापन दिखाता है, वो बिना कारण तो हो ही नहीं सकता। अगर कारण इस भव का नहीं है, तो मानना ही चाहिए कि वह पूर्वभवीय है। इस में कर्म बीच में दलाली का काम करता है। तूने पूर्वभव में उसके साथ गलत व्यवहार किया। तभी दोनों को ऐसे कर्म का उपार्जन हुआ, - जिसके उदय में उसे तुझे देखकर ऐसा व्यवहार करने की इच्छा हुई। और तुझे सहन करने का अवसर आया। 'अत: यह मेरे ही अनुचित व्यवहार का बदला है' ऐसा मन को लग जाय, तो बात को भूलना सरल है। और यह भूलने से तुझे तत्काल में भी लाभ होगा कि ऐसी बातें याद आने पर तू मन में दुखी होता था उससे बच जायेगा।

विक्रम - परंतु ऐसा व्यवहार करने का उसको उसी समय मन क्यों हुआ?

महाराज - बस, इधर ही भवितव्यता मुख्य भाग भजती है। कर्म के उदय से जो फल मिलने ही वाला था, उस के लिए ऐसा अवसर खडा करने में भवितव्यता का मुख्य हाथ होता है।

अत: वो भी वहाँ पहलीबार आया और तू भी उसी दिन गया। सचमूच में तो तुझे सोचना चाहिए कि, तभी ही भवितव्यता और कर्म ने हिसाब चुकता किया। यदि इस से भी और महत्त्व के अवसर पर ऐसी स्थिति निर्माण होती तो? इसलिए मेरी सलाह तो यही है कि, इस बात को मन में से निकाल दे... क्योंकि बार बार याद करने से इस से इस भव में बिना कारण दुख, संक्लेश, दुर्भाव होगा और परभव में भी वैर की परंपरा खडी होगी जो बहुत भवों को बिगाड सकती है। मैं तो कहता हुं, तू रोज प्रभुपूजा करके प्रभु के पास यही मांग कि, मुझे सभी जीव प्रिय लगे, दूसरों के अच्छे-बूरे सभी प्रकार के व्यवहार मुझे पसंद ही आना चाहिए, क्यों कि मेरे साथ होनेवाली कोई भी गलत घटना में मूलभूत तो मेरी ही गलती है।

विक्रम - सा'ब! ये सब बातें हुई तो ज्यादा अच्छा हुआ, क्योंकि आज ही ये बातें उपयोगी होगी।

महाराज - कैसे?

विक्रम - मैंने आरंभ में ही आपको कुदरत के न्याय की बात की थी, और कहा था, मुझे एक बहन मिलने आने वाली है।

महाराज - हाँ।

विक्रम - बस! उसी के संदर्भ में उपयोगी होगी।

महाराज - किस तरह?

विक्रम - चलो! वापस मैं मेरी बात का अनुसंधान जोडता हुं। जिस दिन मेरा अपमान हुआ, उसी दिन मेरा आगे पढने का मूड खत्म हो गया। मेरा निर्णय मैंने पप्पा को बता दिया। पप्पा कुछ भी बोल नहीं सके क्योंकि उनकी ताकत तो मेरी कॉलेज पढाई के लिए आवश्यक रुपयें निकालने की थी ही नहीं। परंतु उनको मन में सख्त आघात लगा कि धन के अभाव में बेटे को मौज नही करा सकता ये तो फिर भी चल सकता है, किंतु, मैं तो बेटे का भविष्य को सुधारे ऐसी पढाई भी पूरी नही करा सकता। पिताजी के मन में ये बात बहुत चुभी। यदि मैं संतानो के लिए कुछ नही कर सकता, तो उन को जन्म ही क्यों दिया? मुझे लोग इन के पिता के रूप में पहचानते हैं, फिर भी मैं ने मेरे इन संतानों को दु:खी करने का ही काम किया। और यही आघात शायद उनकी मौत का कारण बना।

महाराज - उनको गुजरे कितने साल हुए?

विक्रम - बाईस! उस वक्त उनकी उम्र मात्र अडतालीस साल की थी। उनकी मौत हार्ट अेटेक से हुई। चलो! मेरी बात आगे चलाता हुं।

एक भाई जो पहले हमारी ही बिल्डींग में रहते थे फिर तारदेव रहने गये,

उन्होंने मुझे हार्डवेर की उनकी ऑफिस में नौकरी दी... हार्डवेर में शुरुआतमें वेतन कम होता है और मेहनत ज्यादा। परंतु यदि व्यापार की कसब हाथ में आ गयी, तो स्कोप बहुत अच्छा...

मेरे मन में सनक थी पप्पा को सुखी करने की। पप्पा बहुत रुपये देख सके.... जहाँ चाहे वहाँ खर्च कर सके। मेरे मन में जुनून था, दुनिया को दिखा देना का कि आज का गरीब कल खुद के पुरुषार्थ से श्रीमंत बन सकता है। आज उसे गरीब - बेबस मान कर चलोंगे, तो कल भारी पड़ सकता है। मुजे जोश था, उस घमंडी युवक को बता देने का कि, पैसा कमाना तो हमें भी आता है। बदमाश! तू तो बाप के पैसे पर घमंड करता है और गरीब का अपमान करता है। मैं खुद अपने बाहुबल - ताकात से कमा सकता हुं...

सा'ब! बस यही सनक, सोच के तुफान से मुझे ऐसा जोश और प्रेरक बल मिला कि, मैं उस लाईन में मन लगाकर बराबर लग गया। मान-अपमान की परवाह किये बिना मेहनत करने लगा। सेठ का साथ-भाग्य का सहकार और जबरदस्त पुरुषार्थ, करीबन तीन साल में ही स्वतंत्र धंधा शुरु कर दिया। कमाने की शुरुआत हुई।

परंतु यह सब पप्पा देख नही सके। एकबार एक बडे सोदे में पप्पाने सख्त मेहनत की, दौडधूप की, यदि सोदा हो जाये तो करीब लाख रुपया कमीशन के रूप में मिलने की संभावना थी। परंतु पप्पा का दुर्भाग्य, जब सौदा तय होने ही वाला था, तब एक पार्टी खिसक गयी। सौदा फोक हुआ। पप्पा ने जो मेहनत की थी....! साहब! पूरी घटना नजर समक्ष आते ही आँखे आंसु से भर जाती है। साहिब! मेरे पप्पा के साथ ऐसा क्यों हुआ?

महाराज - जैन इतिहास कहता है, जिसने पूर्वभव में देवद्रव्य वगैरह शुभ खाते की बोली बोल कर रकम नही भरी हो, अथवा टीप में लिखाये रुपये भरे न हो अथवा वो रकम संसारिक कार्यो में उपयोग की हो, ऐसे कोई भी कारणसे शुभद्रव्य का नुकसान किया हो, तो ऐसे दुर्भाग्य जनक कर्म का उपार्जन होता है - जिसके उदय के प्रभाव से सैकडों प्रयत्न के बाद भी, हजारों धंधे करने के बाद भी - सभी सेठों की नौकरी के बाद भी उसके पास धन आयेगा ही नही और आयेगा तो टिकेगा नही...

उसी तरह यदि पूर्वभव में व्यापार में छोटी बडी अनीति कर बहुत लोगों के साथ ठगाई की हो अथवा बहुत लोगों के पैसे डुबाये हो, तो भी ऐसा होता है। फिर, उस वक्त ये सज्जन है या भला है, ऐसी सब बाते वहाँ रहती नही। जिस तरह सरकारी कर्मचारी को कार्य करने से भी ज्यादा रस कायदा का पालन कराने में होता है। उसी

तरह कर्म को भी तुम्हारें वर्तमान के सुंदर कार्य की जगह खुद के कायदे का पालन कराने में ज्यादा रस है।

विक्रम - आप तो हर बात में पूर्वभव को ले आते हो! उसी के कारण सब गड़बड़... ?

महाराज - हाँ! अपने आज के प्राय: हर एक अनुभव पर पूर्वभव के व्यवहार की छाया रहती है और यही सही निष्कर्ष है, सर्वज्ञ भगवंतो ने अपने केवल ज्ञान में देख कर बताया सच्चा कारण है। विकट परिस्थिति में अपने मन में उठते दुर्भावों का यही निवारक है। मन को गलत उपाय इस्तेमाल करने से रोखने का यही तरीका हैं।

विक्रम - साहब! मेरे पिताजी जिंदगीभर दुखी रहे और इस सौदे की निष्फलता के कारण जो कमीशन गँवाया, उस से उनकी छाती बैठ गयी। भयंकर हार्ट एटेक आया और चल बसे।

मैं व्यापार में आगे बढता गया। दोनों भाई - बहन को पढाया। परंतु वे दोनों समझदार निकले। संसार का डरावना स्वरूप साक्षात देखकर वैरागी हो गये। पप्पा की अकाल मौत को देखकर ऐसे हिल गये कि दोनों ने दीक्षा ले ली। आज दोनों दीक्षा जीवन में खुब आगे बढे हैं। पू. भाई महाराज तो जहाँ पर चौमासा करते हैं, वहाँ पर अच्छी जमावट करते हैं। पू. बहन साध्वीजी भी खुद के समुदाय में शांत स्वभाव, सहायक भाव और विद्वत्ता से प्रिय बनी हैं।

महाराज - बहुत अच्छा! यही सही मार्ग है। संसार यानी घोर स्वार्थ के खेल का मैदान। संक्लेशों का पुडा। टेंशन का बाजार। संसारी के सातों दिन आनंद में बीते ऐसा तो चक्रवर्त्ती को भी प्राय: संभव नही और साधु के सभी दिन आनंद के, उत्सव के, खुशी के... क्योंकि उनके लिए तो बाहर की सभी परिस्थिति लाभ की ही है। कमाई की ही है। मिले तो संयम वृद्धि, नहि मिले तो तप वृद्धि। हरएक विषय में साधु यही मंत्र रखता है। इसलिए तो वो हमेशा मजे में ही रहता है। और साधु बातें भी किसके साथ करता है? स्वाध्याय यानी पूर्वाचार्यों के साथ संवाद-मधुर वार्तालाप। उन्हें कहाँ पैसो का ध्यान करना है? उनका ध्यान तो परमात्मा का।... ''परमात्मा हृदयमें! खुद परमात्मा!...''

सच कहुँ तो मूर्ख लोग संसार में रहते हैं और समझदार दीक्षा लेते हैं। बाद में तुम्हारी मम्मी का क्या हुआ?

विक्रम - मेरी मम्मी ने खुब उदारता से मेरे दोनों भाई-बहन की दीक्षा करायी। मुझे वैराग्य नही था, मैं तो दुनिया को दिखा देने के मुड़ में था। मेरी शादी हुई। हमारी ज्ञाति की ही लडकी थी। परंतु मम्मी के 'पुत्रवधु सेवा करेगी' ऐसे सपने

अधुरे ही रह गये।

महाराज- बडे बडे मनोरथों के साथ पुत्र की शादी कराती किस माता के सपने पूरे हुए है, जो तुम्हारी मम्मी के पूरे होते? प्राय: हर जगह ऐसी ही कहानी होती है। तुम्हारी पत्नी क्या मम्मी को यानी सास को त्रास देती थी?

विक्रम - नही! परंतु उपेक्षाभाव। घर में दो व्यक्ति, लेकिन हमेशा जैसे मौन की साधना। कहा जाता है कि दो स्त्री मिल जाये तो दो मिनट का भी मौन नही रह सकता। और ये सासु - बहु घंटो तक मौन। मम्मी के कोई भी कार्य में बहु का उल्लास के साथ सहकार नही। अगर मम्मी उसे चाय बनाने का कहे, तो वो ना नही कहती, परंतु कार्य सरकारी पद्धति से होता, यानी, सात बजे मांगी हुई चाय धीरज रखो तो आठ बजे मिले। ऐसे तो मैं मम्मी को खर्च करने रुपये वगैरह कुछ भी दूँ तो पत्नी उसका कोई विरोध नही करती थी, परंतु खुद इतना ठंडा और उपेक्षाभरा व्यवहार करती कि, मम्मी के लिए असह्य हो जाता। इस में शिकायत भी कैसे करनी?

हाँ, वह कभी मम्मी के विरुद्ध में कुछ भी मुझे कहती नहीं थी, किन्तु खुद ही मम्मी के लिए दु:खदायक व्यवहार कर लेती थी, अब कहने का बचा ही क्या? इस उपेक्षा के त्रास से बचने हेतु मम्मी ज्यादातर पालीताणा ही चातुर्मास करती, छरी पालित संघ में जाया करती थी, कभी कभी पुत्र-पुत्री महाराज के पास भी रहती थी। वहाँ के संघ में साधु - साध्वीजी की माता होने के कारण पूजनीय भाव भी रहता और सब आदर-सन्मान भी देते थे।

साहब! मुझे भी विचार आता है कि वृद्ध माता - पिता के लिए दीक्षित बने बेटा-बेटी जितने सहाय रूप बनते हैं, उतने संसारी - संसार की जंजाल लेकर बैठे बेटे-बेटी सहायक नही बनते! और बन भी नही सकते।

महाराज - सही बात है। उसका कारण यही है कि, दीक्षित संतान को खुद को संस्कार देने का और सबसे बडी बात तो दीक्षा की अनुमति देने का माता-पिता का इतना बडा उपकार दिखता है कि, उनके मन में मात-पिता के प्रति जबरदस्त अहोभाव होता है और पूरा ग्रुप भी हरएक साधु - साध्वी के मात-पिता के प्रति ऐसी भावना रखता ही है। और संघ तो समझता है कि, यह हमारे उपर बडा उपकार करनेवाले साधु महाराज को जन्म देनेवाली माता है। यह रत्नकुक्षी माता है। इसलिए वे साधु की माता का सत्कार सन्मान करते हैं।

सामने पक्ष में संसारी बेटा माता का ख्याल रखना भी चाहे, तो भी काम तो उसकी पत्नी को ही करना पडता है ना! वो तो व्यापार - नौकरी में व्यस्त होता है। और जो पराया है, वह तो पराया ही रहेगा। पति की माता पत्नी की अपनी खुद की

माता कहाँ होती है और पत्नी को भी अपने संतानों को - पति को सभी को संभालने की बडी जंजाल है। अत: सहज है कि सास को संभालने में त्रास होगा। अत: तूने जो सोचा वो सही है। क्या तेरे माताजी जिंदा है?

विक्रम - पू. भाई म.सा. की और बहन म.सा. की प्रेरणा से मम्मीने भी दीक्षा ली। आज वे साध्वी जीवन में काफी प्रसन्न हैं। सुंदर आराधना करते हैं। पू. बहन म.सा. भी अच्छी सेवा करते हैं। मुझे एक बेटा-एक बेटी है। मैं दोनों को बार बार भाई-बहन म.सा. के पास ले जाता हुं। उनके पास रहना हो तो रहने देता हुं। उनकी दीक्षा की भावना होंगी तो मैं बीच में नही आऊंगा।

साहब! ऐसे तो आज मैं पैसे टके से बहुत सुखी हुं। संघ में चातुर्मास बिराजमान एक साधु भगवंत की प्रेरणा से और मेरे भूतकाल को याद कर संघ के कमजोर विद्यार्थीओ को ज्ञाति के भेद बिना एस.एस.सी. से लेकर डीग्री तक की पढाई में सहायता मिलती रहे ऐसी अपेक्षा से यथाशक्ति संपत्ति एक कायमी निधि के रूप में दी है, उस के ब्याज से ऐसे विद्यार्थिओं को सहायता मिलती है। इस तरह से साधर्मिक भक्ति का लाभ भी मिलता है।स्वर्गस्थ पिताजी के नाम से ये योजना शुरु की है।

हमारी ज्ञाति में भी जाहिरात करायी है कि, संपत्ति से कमजोर व्यक्ति को योग्य सहायता मेरी ओर से होगी। इसलिए माताजी के नाम से अलग फंड रखा है। विशेष जरुरियातवालों को प्रत्यक्ष मिलकर विशेष मदद भी करता हुं। ऐसे तो पप्पा को खुश करने की इच्छा पूरी नही हुई, परंतु मैं ने अच्छी कमाई की है, ऐसा दुनिया को दिखा देने की इच्छा भी पूरी हो गयी। बेशक, अब तो ऐसा भाव ही नही है।

महाराज- परंतु उस बहन की बात तो आयी ही नही!

विक्रम - साहब! कहता हुं! वो युवक बाप के पैसों के गुमान से रोब लगाता था। वह इकलौता होने से मात-पिताने भी खूब लाड लडाये थे। इसलिए दिमाग में अहंकार का नशा था और मुँह में दारु का...

उसके पिताजी उस प्रसंग के बाद करीब चार साल के बाद अचानक रोड अकस्मात में चल बसे। वह पूरी संपत्ति का मालिक बन गया। पिताजी ने जमाया धंधा हाथ में आ गया, परंतु अनुभव तो कुछ भी लिया नही था। दुर्जन मित्रों का संग था। कुशलता नही थी... छोडो ये सब बातें। भाग्य का चक्कर घुम गया... बहुत कम समय में ही पूरी संपत्ति गँवा डाली। बेचारे को गरीबी - लाचारी का स्वाद अनुभव करने का अवसर आया। शराब की आदत के कारण स्वास्थ्य भी बिगड़ गया।

शोर्ट में कहुं, तो अभी वो अस्पताल में है। लीवर भी बिगड गया है, उसका खर्चा बडा है। उसका बेटा भी अभी बहोत छोटा है। उसकी पत्नी बेचारी कितने मोरचे पर लडेगी? आज-कल में उसका कोई ओपरेशन होने वाला है। अमुक रकम अेडवांस भरना जरुरी है। परंतु लाना कहाँ से?

उसकी पत्नी का सुबह में ही फोन आया था। बेचारी रो रही थी। मैंने उसे आज ग्यारह बजे बुलायी है। कहो साहब! कैसे जोग-संजोग! जिसने मेरी स्कोलरशीप अमान्य कर मुझे डिग्रीधर बनने नहीं दिया। आज उसकी ही पत्नी मेरे पास हाथ लंबायेगी। कुदरत के कैसे चक्कर हैं?

महाराज - तो तुम क्या करोंगे?

विक्रम - सहायता करुंगा। अवश्य करुंगा। परंतु इससे पहले वो प्रसंग उस बहन को सुनाउँगा, उसे तो पता नही होगा। उसके आगे उसके पति के गुमान की बात करुंगा। फिर कहुंगा कि मैं जैसे के साथ तैसा होना नहीं चाहता।

महाराज - दोस्त! एक बात कहुं? विक्रम - जी साहब!

महाराज - तुम किसी के वहाँ भोजन करने जाओ और वो तुम्हें दूधपाक पीरसे लेकिन जला हुआ। जिसमें जलने की गंध आती हो। यजमान को पता है कि दूधपाक जला हुआ है, अत: बेस्वाद हो गया है, फिर भी तुझे परोस दें, तो क्या तुम्हें भायेगा?

विक्रम - मुँह में भी नही जायेगा।

महाराज - तू उस यजमान की भोजन कराने की महानता को थपथपायेगा?

विक्रम - क्या वो भोजन (दावत) कहलायेगा? धुल! वो तो थपथपाने की नही, परंतु थप्पड मारने की बात कहलायेगी।

महाराज - बस! यही बात है! तू उस बहन को मदद करेगा वो दूधपाक है! अब उस वक्त भूतकाल की कडवी बातें सुनाकर उस दूधपाक को जला हुआ क्यों बना रहा है? जला हुआ दूधपाक पीना पडे वो बेबसी गिनी जायेगी और वो पेट में टिकेगा नही! पेट में चुभता ही रहेगा। जब तक ऊल्टी होकर बाहर नही निकलेगा, तब तक चैन नही पडेगा। ऐसा दूधपाक पिरसने वाला भक्ति नही करता बल्कि अपमान करता है। दूसरे को अगर पीना भी पडे, तो वो उसकी बेबसी की मजाक है। मानवता का तिरस्कार है। यदि तू भूतकाल को याद कराकर सहायता करेगा, तो वो जला हुआ दूधपाक जैसा है। उसका सार समझ लेना।

विक्रम - परंतु उसने भी...

महाराज - उसने तेरा अपमान नही किया, परंतु तुझे खुद की मेहनत से आगे बढने के लिए प्रेरणा दी थी। बिचार कर! यदि तू स्कोलरशीप लेकर डीग्रीधारी बन गया होता तो आज तू कहाँ पर होता? ज्यादा से ज्यादा कोई कंपनी में सीनियर कलर्क। नौकरी की पराधीनता और आवक मर्यादित। आज तू सफलता - समृद्धि के जिस मोड़ पर खडा है, वहाँ क्या तू खडा हो सकता था?

स्वीमिंग मास्टर धक्का देता है तो ही सिखने वाला तैराक बन सकता है। एक कडवा घुँट यदि जीवन की दिशा को उज्जवल बना दे, तो वो घुँट पिलाने वाली माता है। बेलन डालके कडवी दवा जो पिलाती है, वो माता कही जाती है। धक्का देनेवाले गुरु गिने जाते हैं। तुम माता और गुरु के मूल्यांकन को तो समझते हो ना!

यदि तुम्हारा मन इस अवसर पर भूतकाल को भूलने के लिए तैयार नही होता हो, तो सबसे पहले भगवान के पास जाओ! भगवान के गुणों की स्तुति करो। फिर प्रार्थना करो - हे भगवान! मुझे सुमति दो। मुझे मैत्रीभाव दो। मुझे जीवमात्र में परम उपकार करने वाले महानुभाव के दर्शन कराओ!

विक्रम ने गद्‌गद होकर महाराज साहब के पैर छुए और कहा - साहब! अवश्य प्रभु के पास प्रार्थना करुंगा, लेकिन मुझे तो आपने ही मार्ग दिखा दिया है। मैं एक साधु का भाई हुं। मेरी मानसिक भूमिका कितनी ऊँची होनी चाहिए उसका भान आपने आज कराया। साहब! आपको आज वचन देता हुं कि उस बहन को मैं मेरी सगी बहन मानूंगा और उस युवक को बहनोई मान कर उसकी हर परिस्थिति में सहायता करूँगा। विक्रम भाई गये...

दूसरे दिन वापस आये! महाराज साहब को आगे की कहानी कहने लगे... अरे साहब! मेरी तो बात उल्टी ही हो गई।

महाराज - कैसे?

विक्रम - साहब! वो बहन आयी और आते ही मेरे पैरों में गिरकर रोने लगी। सहायता के लिए नहि, परंतु माफी के लिए। मुझे कहने लगी - मेरे पति की ओर से मुझे माफ कीजिए। मैंने पूछा - किस बात पर? तब उस बहन की आँखो में से आंसु की धारा बहने लगी। उस बहन ने कहा - मैंने मेरे पति को कहा कि मैं ११ बजे विक्रमभाई के पास सहायता के लिए जाने वाली हुं। तब मेरे पतिने पूछा - क्या उन्होंने तुझे बुलाया है? मैंने कहा - हाँ! और उनके बोलने के अंदाज से ऐसा लगता है कि वे अवश्य मदद करेंगे।

तब मेरे पति की आँखो में आंसु छलक आये। मैंने कारण पूछा - उन्होंने मुझे उस वक्त जब आप स्कोलरशीप के लिए आये थे, उस वक्त की सारी घटना दीन हो कर सुनायी। मुझे कहा - 'मैंने उसकी गरीबी की - विवशता की पैसे के घमंड में मजाक उडायी थी, अपमान किया था, उसके आत्मगौरव का खून किया था और साथ में अभिमानी है, ऐसा ताना भी मारा था! मेरी इसी धिट्ठाई के कारण वो कोलेज का पढ नहीं सका।' मेरे पतिने रोती आँख से कहा - अपनी यह दरिद्रता ऐसे तैसे नही आयी। उस वक्त उस के मन की आग मेरे जीवन के लिए आग बन गयी। तू जा ही रही है, तो मेरी ओर से सच्चे दिल से माफी मांगना। मेरी तो आज तक इसके लिए हिम्मत नही हुई। परंतु तू मेरा इतना काम कर लेना। शायद वो भूल गये हो तो याद कराना। बात याद आने पर शायद अपमान करके तुझ बाहर भी निकाल दे, तो भी तू गुस्सा मत होना। गुजराती में कहावत है ''हाथ ना कर्या हैये वाग्या'' बस मेरी भी यही हालत है। किसी को वर्तमान काल के माप से कमजोर गिनने का दंड भुगतना है। उनकी सहायता नही मिलेगी तो भी चलेगा। परंतु मेरे हृदय को शांति मिलेगी ये सबसे बडी बात है।

उस बहन ने रोते रोते मुझे अपने पति की पूरी व्यथा सुनायी... साहब! उस भाई को ऐसी सन्मति सुझी, वो प्रभु का ही प्रभाव! मैं हिल गया। मेरा हृदय तडप उठा - क्या मैं इस आदमी के बारे में पच्चीस वर्ष से जहर घुंटता रहा? अब मुझे भी पश्चाताप हो रहा है कि मैंने क्यो इतने समय तक बात को पकडकर रखी?

साहब! फिर तो मैं खुद ही उसकी खबर पूछने गया। हम दोनों की आँखे मिली, मन मिला। मतभेद - मनभेद मिट गये। कटुता खत्म हो गयी। मैंने संकल्प किया है, यदि वो अच्छे हो सकते हो, तो मैं उस की परिचर्या के लिए २-५ लाख रुपये खर्च कर लुंगा...। साहब आपका उपकार... आपने ही मेरे मन में से जहर उतारा...

महाराज - तुम दोनों द्वेषमुक्त बन गये, यह सचमुच आनंददायक समाचार है। तुम उसके लिए मदद करने को तैयार हो उसमें द्वेषमुक्ति का आनंद है। दूसरों की आपत्ति में खडे रहने की सद्भावना है। अनुकंपा सम्यक्त्व का लक्षण है, करुणाभाव के प्रभावक परमात्मा के हृदय में प्रवेश की झलक है। सुंदर साधर्मिक भक्ति है। जो दूसरों की आपत्ति में सहायक बनता है, उसे प्राय: भविष्य में आपत्ति नही आती और अगर आये तो उसमें सहारा देने वाला मिल जाता है।

दूसरी बात, अगर कोई भी व्यक्ति किसी और को चाह सकता है और हमको धिक्कारता है, तो उससे चिढ़ने की या उस पर द्वेष करने आवश्यकता नहीं है, बल्कि उसमें पूर्वभव के ऋणानुबंध ही कारण है, पूर्वभव में अपना उस के साथ जो व्यवहार

हुआ था, उस का ही यह प्रतिघोष है, ऐसा समझकर स्वस्थ रहने में और उनके साथ मैत्रीभाव बढाने में ही सार है। जो दूसरों के वर्तमान के व्यवहार को वजन देता है, वो वर्तमान में बेचैनी-दु:ख बार बार पाता है, और भविष्यमें द्वेष की - वैर की परंपरा बढाता है। जो इस व्यवहार के लिए पूर्वभव में खुद के व्यवहार को - और उसी के कारण निर्मित हुए अप्रिय ऋणानुबंध को और अशुभ कर्म को और उससे उदयमें आये ऐसे कर्म को आगे करता है, वो ही स्वस्थ रहता है। मैत्रीभावना में रहता है। भविष्यमें बिना द्वेष-वैरभाव का होने से शीघ्र ही कल्याण को पाता है।

लीला : मीता! उस कंपनी की लीपस्टिक बहुत खराब... उसका रंग खराब... चेहरा सुंदर लगने की बजाय बिगड जायें...

मीता : हाँ! वो लीपस्टिक बिलकुल बेकार है। स्वाद भी इतना खराब है कि मुँह बिगड जायें।

क्रोध खराब लीपस्टिक है - बिलकुल बेकार मेकअप है। वो धारण करने से चेहरा भी बिगड जायें, और जीवनका - मैत्रीका -संबंध का स्वाद भी बिगड जाता है। क्रोध के स्वाद से मन बिगड जाता है।

असंभव - संभव

कूए में रहे हुए कई जवान मेंढक कुद कर बाहर निकलने की कोशीश कर रहे थे। तब वहाँ पानी में रहे हुए वृद्ध मेंढक 'असंभव... असंभव...'' की चीख लगा रहे थे। फिर भी एक मेंढक कुद कर बाहर निकल गया... कारण? कारण वो बहरा था...

जिसको संसार कूए में से बाहर निकलना है, उसे संसारियों की बातें, सलाह के आगे बहरा बनना जरुरी है।

सच्चा हीरा

रमेश नाम के एक भाई ने साधु महाराज साहब को वंदन करके पूछा - साहब। क्या मैं थोडी देर बैठ सकता हुं? मुझे कुछ पूछना है।

म.सा. ने कहा - हाँ! बोलो।

रमेशने पूछा - साहब! लोग कहते हैं कि गाँव के लोग सरल, निष्कपट और भोले होते हैं। इसके बारे में आपका क्या अभिप्राय है।

म.सा. - ऐसा कहा जाता है कि शहर का व्यक्ति सब इक्कठ्ठा करके अकेला खाता है, गाँव के लोग इक्कठ्ठा करके सभी साथ में खाते हैं। परंतु ऐसा एकांत से नही कह सकते। कभी कभार गाँव का आदमी भी भयंकर स्वार्थी हो सकता है।

रमेश - साहेब! बात ऐसी ही है। मैं मूल से गाँव का रहने वाला हुं। गुजरात में डीसा के पास मेरा गाँव है। मेरे पिताजी के पास बहुत बडी खेतीबाडी है। गाँव में भी पुराना परंतु बहुत बडा घर है। हम दो भाई हैं। बडा दिनेश गाँव में ही रहता है। मेरी जमनाभाभी तेज है, देहाती है, पर स्वभाव तेज है। उनको कमल और विमल नाम के दो लडके हैं।

मैंने थोडी पढाई वहाँ की। बाद में एस.एस.सी. तक डीसा में पढाई करके यहाँ आया हुं। ग्रेज्युएट होने बाद यहाँ नोकरी कर रहा हुं। मैं ने **आशा** नामकी लडकी के साथ शादी की, लेकिन वो पिताजी को पसंद नही आया, क्योंकि वो हमारी ज्ञाति की लडकी नही थी। आशा स्कुल में शिक्षिका है। हम दोनों के वेतन सामान्य हैं। भाडे के मकान में हम रहते हैं, लेकिन भाडा चुकाना भी मुश्कील होता है।

म.सा. - मगर इसमें गाँव के लोगों की बात कहाँ आती है?

रमेश - वो ही तो बात है। दिनेश ने पिताजी को अपने विश्वास में लेकर गाँव की पूरी मिलकत अपने नाम पर कर ली। पिताजी का थोडे समय पहले ही देहांत हुआ। इसी प्रसंग पर मेरा गाँव जाना हुआ। पिताजी के संबंध के सारे कार्य निपटाने के बाद मैंने भाई को पूछा... 'अब मिलकत का क्या करेंगे?' मुझे यहाँ खुद के फ्लेट की बहुत इच्छा थी। अगर पिताजी की जायदाद में से कुछ मिल जाये, तो मेरा काम हो जाने की संभावना थी। इसलिये, मैंने भाई को ऐसा पूछा... परंतु भाई ने मुँह तोड

जवाब दिया -पिताजी तेरे से बहुत नाराज थे, तूने दूसरी ज्ञाति में शादी की वो पिताजी को बिल्कुल पसंद नही था। इसी वजह से पिताजी ने सभी मिलकत मेरे नाम पर कर दी है।... गाँव में से तू चपटी धुल की भी आशा मत रखना।

फिर तो मेरी उसके साथ बहुत खटपट हुई। भाभी ने भी बहुत ताने दिये। आखिर मैंने कह दिया - अब तेरे घर का पानी भी मेरे लिए हराम है। तेरी साया भी मुझे नही देखनी... भाई ने भी मुझे कहा - तो तू भी सुन ले, मैं ने भी आज से तेरे साथ का रिश्ता खत्म कर दिया है। मेरा कोई छोटा भाई है यह बात आज से ही समाप्त होती है। कहो साहब - गाँव के लोग सीधे-साधे होते हैं ना। तो इसका जवाब दिजीए...।

म.सा. - भाई! मैंने पहले ही कहा था कि इसमें कोइ एकांतवाद नही है। खेर, आज भी तुम्हारे चेहरे पर उस प्रसंग का भारी आवेश दिखाई दे रहा है।

रमेश - होगा ही ना! पिताजी की जायदाद में से पच्चीस टका भी मिला होता, तो आज यहाँ मेरा फ्लेट हो जाता। परंतु सगा भाई ही सब निगल गया। भाई इतनी हद तक दुष्ट नही था, पर भाभी की बातो में आ गया होगा।

म.सा. - यदि आप मेरी बात मानो तो कहुं - इसमें भाइ-भाभी का कोई दोष नही हैं। रमेश ने मुँह बिगाडते हुए कहा - ऐ... सा। दोनों संतशिरोमणी...

म.सा. - इस तरह मुँह मत बनाओ... भगवान ने कहा है, अपने ही विपरीत कर्म - अपने ही पाप कर्मों का उदय सज्जन को भी अपने साथ दुर्जन जैसा व्यवहार करने की बुद्धि देता है। पापकर्म के उदय के पीछे एक ही कारण है, भूतकाल में उस व्यक्ति का हमने कुछ बिगाडा होगा या फिर उसके साथ गलत किया होगा, इसी कारण इस भव में ऐसा अनुभव हो रहा है। सच में तो आपको ऐसा विचार करना चाहिए कि मेरे कैसे पापकर्म हैं कि, जिस से मेरे पिता तुल्य भाई को ऐसी गलत बुद्धि सुझी कि, जिसकी वजह से (१) इस भव में उसकी सज्जनता की छाप धुल गई (२) आनेवाले भव में उसे इस गलत बुद्धि के दंड के रूप में भारी कष्ट सहन करना पडेगा। अरेरे! कर्म मेरे खराब और खराब होगा भाई का।

रमेश - म.सा.! ये सभी बातें मनमें बैठें ऐसी नही हैं और व्यवहारिक भी नही है। इस जमाने में इस तरह बात को भूल जाना वो कोई अक्लमंदी नही गिनी जाती।

म.सा. - तो क्या आप भाई पर केस करोंगे ?

रमेश - नही! महाराज! आप भारत की कोर्ट को तो जानते ही हो। केस में तो बरसों निकल जाते हैं। जो कुछ मेरे पास है, वो भी वकिलो में उड जायेगा और बार बार कोर्ट के चक्कर में रहने से नौकरी भी खोनी पडेगी।

म.सा. - यह समझ बराबर है। तो अब बात यही है कि जो हुआ सो हुआ, उसमें आप कुछ नही कर सकते।

रमेश - हाँ!

म.सा. - तो फिर ऐसे भी मन को मारकर भी इस कडवे सत्य को स्वीकारना तो होगा ही, तो मैंने कहा वैसे बिचार करके मन को स्वस्थ रखकर स्वीकारने में क्या अक्लमंदी नही है? जिसमें कुछ मिलने वाला नही है और मन भी स्वस्थ रहेगा नहीं ऐसे संताप को मन में से नहीं निकालने से क्या फायदा? और उसमें भी यदि भाई के साथ बैर बढता गया, तो उसकी परंपरा भवोभव तक चलेगी। कल्पसूत्र में नरक में जाने का एक कारण बताया है - स्वजन के उपर द्वेष। क्या मिलेगा भविष्य की भव परंपरा में? ना इस भव में शांति और नही भविष्य में। उससे तो अच्छा है कि मैंने जैसे कहा वेसा विचार करके स्वस्थ रहना।

रमेश - ठीक है! मैं सोचुंगा।

म.सा. - मेरी बात मानो तो आप गई गुजरी भूल जाओ और भाई के साथ क्षमापना कर लो। क्षमा का एक खत लिखकर समस्या को सुलझा दो।

रमेश - मैं भाई को खत लिखुँ? यानी साँप को दूध पिलाने का काम करुँ?

म.सा. - खत लिखना! किन्तु वो साँप को दूध की बात नहीं, आग में पानी डालकर ठंडी करने की बात है।

रमेश - परंतु भाई तो यही मानेगा कि यह नाटक है, हिस्सा चाहिए इसलिए दाव-पेच खेल रहा है।

म.सा. - अवश्य वो ऐसा मान सकता है। मगर बाद में भी कभी कभी उसके घर जाते रहना। ऐसा बार बार करना... कभी जायदाद की बात गलती से भी मत करना। अपने ही काम की सलाह लेने अथवा कोई प्रोग्राम में आने के लिए निमंत्रण रूप व्यवहार रखना।

रमेश - म.सा.! आप ऐसा आग्रह क्यों रख रहे हो?

म.सा. - मन में जरा भी द्वेष न रहे इसलिए और विशेष बात तो यह है कि आखिर भाई तो भाई ही है! उसे भी दिल में दुख होगा कि मैंने छोटे भाई के साथ दगा किया, फिर भी छोटा भाई सब कुछ भूल गया। अगर तुम्हारा उसके साथ व्यवहार अच्छा होगा, तो समय आने पर वो मदद के लिए दौड कर आयेगा। आप मान लेना कि जायदाद गयी नही है, परंतु भाई उसे संभाल रहा है। काम आने पर मुझे काम आयेगी। मगर यह बात तभी मुमकिन होगी, जब भाई के साथ अच्छा व्यवहार होगा। बेशक, ऐसी अपेक्षा मन में भी नही रखना... क्योंकि ऐसा होगा ही उसकी कोई

गारंटी नही है। यह बात पक्की है कि, भाई के साथ सुधरा हुआ संबंध अवसर पर काम आयेगा। और शुभ भाव से की हुई क्रिया कभी निष्फल नही होती। आप दोनों को सगा भाई बनाने के पीछे कुदरत का भी कोई संकेत होगा।

रमेश - साहिब! सोचुंगा... किन्तु घरवाली नही मानेगी।

करीबन चार साल बाद उसी जगह योगानुयोग रमेश को मिलना हुआ। रमेश दो लडको को अपने साथ ले आया था। और म.सा. से कहा - मुझे दस दिन पहले ही आपके आने के समाचार मिले। मगर कुछ कारण से मैं नही आ सका।

म.सा. - ये दो कोन हैं?

रमेश - मेरे बडे भाई के लडके हैं। यह बडा कमल नौंवी कक्षा में है। और यह छोटा विमल सातवीं में है।

यह सुनते ही महाराज साहब को आश्चर्य हुआ, तो क्या बडे भाई के साथ के संबंध सुधर गये?

म.सा.ने पूछा - क्या यहाँ घूमने आये हैं?

रमेश उदास हुये मुख से बोला, ऐसा नही... एक भयानक करुण घटना हो गयी! कमल-विमल! जरा मंदिरजी में दर्शन करके आओ। दोनों गये।

रमेश - आपको मिलने के बाद मैंने भाई के साथ संबंध सुधारने के लिए क्षमा का खत पत्नी को बताये बिना भिजवाया, क्योंकि पत्नी तो मानने को तैयार ही नही थी। बाद में भी प्रयत्न किये थे। किंतु भाई की तरफ से कोई प्रतिभाव नहीं मिला। शायद मैं भाग मांग लूंगा यह वजह होगी।

आज से करीब बारह दिन पहले ही भैया और भाभी किसी की शादी में जा कर जीप में लोट रहे थे और गमख्वार घटना हो गयी। सामने से आ रही ट्रक के साथ जोरदार टक्कर लगी। जीप तो चकनाचूर हो गयी। लगभग दस व्यक्तिओं का देहांत हुआ। उसी में भैया-भाभी का भी देहांत हुआ। ये दोनों स्कुल गये थे, इसलिए बच गये। समाचार मिलने के बाद पत्नी तो मुझे भी जाने नहीं देना चाहती थी ''उनका अपने साथ का नाता तो उस वक्त से ही खत्म हो गया है। वो आपको भाई ही मानने को तैयार नहीं थे, तो अब आप को किस की मौत पर जाना है? अब जाने की कोई जरुरत नही है।'' मैंने कहा - भाई के नाते से लोकव्यवहार के लिए भी जाना ही पडेगा। तब उसने तो मुझे पूरा कडवा भूतकाल सुना दिया। मैंने उसे किसी भी तरह शांत किया। फिर भी वो तो नही आयी, मैं गया। सब कार्यवाही पूरी की। इन दोनों के मामा तो इन दोनों को मुझे सौंपकर तुरंत ही बहाना निकाल कर रवाना हो गये। छोटी उम्र के इन दोनों को देखकर मेरा हृदय पिघल गया। दोनों को मैं वहाँ से ले आया।

म.सा. - तो क्या आपकी पत्नी मान गयी ?

रमेश - अरे! इन्हें देखकर तो वो सुलग उठी। इन दोनों के सामने ही मेरे पर तीखे शब्दों का सख्त प्रहार करना शुरु कर दिया। 'जिसने तुमको भाई की गिनती में से हटा दिया। मुझे कभी घर का सदस्य माना नहीं, उनके ये दो घंट मेरे गले लटकाना चाहते हो ?'

उसे मैंने मानवता की दृष्टि से सोचने को कहा। इन दोनों का क्या अपराध था ? फिर भी आज तक वो पिघली नही है। मगर साहब! आपको इन दोनों बच्चो को समझाने की कृपा करनी होगी, जिससे घर में प्रेम से रह सके।

तभी कमल-विमल वहाँ आये।

म.सा. - देखिए! आपके वहाँ जो घटना हुई, वो तो आप जानते ही हो। दोनों ने अश्रुभरे नेत्रो से हाँ कहा...

म.सा. - आपको थोडा भूतकाल भी जान लेना चाहिए। ऐसा कहकर दिनेश-रमेश की सभी बातें विगत से कही। दोनों ने खूब शांति से सुना। फिर म.सा. ने कहा - आज आपकी चाची बहुत नाराज होने के बावजुद एक मात्र प्रेमभाव के कारण रमेश चाचा आपको यहाँ ले आये हैं। बेशक, आपकी चाची को द्वेष आपके पिताजी के प्रति है, पर वो तो साँप के डंक जैसा है। साँप डसा कहीं पर भी हो, पर जहर पूरे शरीर में फैलता है। उसी तरह आपके पिताजी के उपर का द्वेष आप दोनों पर आया है। पर यह तो अच्छी निशानी है। आप साक्षात् गुनहगार नही हो, उसी वजह से मुझे आपसे थोडी बातें करनी है।

(१) आपके पिताजी अचानक गुजर गये, यह अच्छा नही हुआ। किन्तु उस वजह से आप को निराश नहीं होना है। अभी तो आप किशोरावस्था में हो और यह आपत्ति आप पर आयी है। पर यह आपत्ति आपके जीवन की तालीम के लिए जरुरी है। दुख में परवरिश पाने वाले छोटी वय में परिपक्व-गंभीर-समझदार-जिम्मेदारी को पहचानने में सक्षम बनते हैं। और भविष्य में आने वाली सभी आपत्तिओ में दृढ - स्वस्थ रह सकते हैं, इसलिए आप ऐसा ही समझना कि कुदरतने आपको जीवन का बोध पाठ देने के लिए ही यह क्रुर खेल खेला है।

(२) चाचाजी को ही अब पिता समझ कर पूरी जिंदगी उनको अपने सिर पर रखना। जीवन में कभी भूलना नही कि उन्होंने कैसी मुश्किलों में और कैसी कौटुंबिक विपरीत परिस्थिति में आपको संभालने की जिम्मेदारी उठायी है। कल कितना ही उजाला हो, आज के अंधेरे में आपका हाथ थामने वाले चाचाजी को कभी भूलना नहीं।

(३) आपके चाचीजी को गुस्सा है, पर उनके मनमें आपके प्रति जहर नही है। अब आपको यह मौका गँवाना नही है। आज जिस चाचीजी को आप आँख नही सुहाते, उसको कल आपको नहीं देखने पर बेचैनी होनी चाहिए।

उसके लिए एक वशीकरण मंत्र है... विनय... चाचीजी चाहे जितना क्रोध करे, कडवे बोल सुनाये, द्वेष बरसाये, आपको निकल जाने की धमकी दे, बिना कोई गलती किए आपको डाँटे... एक ही विचार रखना कि चाचीजी हमें जीवन जीने का प्रेक्टीकल पाठ सिखा रही है। चाचीजी के सारे काम खडे पैर करना। उन्होंने दिये हुये सभी काम में उनका वात्सल्यभाव ही देखना। उनका दिल जीतने का मौका समझना।

(४) संपत्ति या मीरास को इतना महत्त्व नही देना कि जिससे दूसरों के सामने देखने का व्यवहार भी न रहे। आपके माता पिताने आपके चाचाजी के साथ जिस संपत्ति के खातिर अपने संबंध बिगाडे, वो संपत्ति नही तो वे भोग सके-नही परलोक ले जा सके। और आखिर में उनके बच्चो को उन्हीं चाचाजी के शरण में आना हुआ। कुदरत जिनको नजदीक का सगा बनाती है, उनको कभी संपत्ति के लिए दूर नही करना।

(५) प्रभुपूजा रोज करना। रोज प्रभु के पास यही मांगना... हमें सतत विवेक बुद्धि मिले, विनय करने की ताकत मिले। गुरु भगवंतो के पास आते जाते रहना। उनके पास से जीवनउपयोगी शांति - स्वस्थता की बातें जानने को मिलेगी। उनके आशीर्वाद से दुर्बुद्धि नाश हो जायेगी। जैन सिद्धांत संसार के सच्चे स्वरूप को और जीवन में बनती घटनाओं के पीछे के परिबलों को जानने में बहुत उपयोगी हैं, इसलिए जैन तत्त्वज्ञान पाने का प्रयत्न करना।

दोनों ने सरलता से बात सुनी और स्वीकारी... फिर तो तकरीबन बारह वर्ष बीत गये। एक बार फिर वापस रमेशभाई को उसी महाराज से मिलना हुआ। अलबत् उसी नगर में दूसरे स्थान में।

रमेशभाई प्रसन्न थे। पहले तो महाराज पहचान सके नहीं, फिर उसने ही बात निकाली, पहचान हुई।

रमेश - साहब! दोनों भतीजे गजब के निकले... सच्चे हीरे!

म.सा. - क्या हुआ?

रमेश - पहले तो मेरी पत्नी आशा बहोत जहरीली रही। दोनों को परेशान करने में कुछ बाकी नही रखा। फिर भी दोनों ने सच्ची लगन से चाचीजी को रीझाया। दोनों भाई चाची के छोटे बडे सभी काम के लिए दौडते रहे। मेरा लडका परेश उनसे

छोटा है। उसका भी वे ध्यान रखते। हमारा घर छोटा होने के कारण दोनों पढाई सडक की रोशनी में करते थे। आखिर मेरी पत्नी अध्यापिका ठहरी। इन दोनों पर उसे प्यार उमडा, बेचारे मुझे खुश रखने के लिए सच्चे दिल से काम करते हैं। बच्चे हैं, उनकी क्या गलती? उनके पिताजी का वैर ऐसे निर्दोष बच्चों पर उतारना योग्य नही है। ऐसा मेरी पत्नी धीरे धीरे समझती गई। और फिर तो कमाल हुआ, आशा ने दोनों को सच्चे दिल से घर के व्यक्ति के रूप में स्वीकृति दे दी।

दोनोंने दसवीं तक पढकर स्कुल छोड दी। हीरे के व्यापारी के वहाँ नौकरी में लग गये। अब खुद का व्यापार करते हैं। लगभग तीन साल पहले मैंने दोनों को कहा - अब आप दोनों परिपक्व हो गये हैं, तो गाँव में रही आपके पिताजी की मिल्कत संभाल लो। मैं सभी व्यवस्था करा दूँगा। दोनों ने कहा - चाचाजी! आपको इस झमेले में पडने की जरुरत नही है। हम संभाल लेंगे। हमें सभी जरुरी कागजात सोंप दीजिए। मुझे क्षणभर तो बडा झटका लगा। बस स्वार्थ पूरा!

तभी मेरी पत्नीने मुझे ढ़ाढ़स बंधाया। उसने कहा वे दोनों भले ही ऐसा कह रहे हैं, मगर आपको दगा नही देंगे, मुझे विश्वास है।

म.सा. - गजब की बात है। जिस स्त्री को दोनों लडके गले की घंटी लगते थे, वही स्त्री आज दोनों के लिये जामीन दे रही है।

रमेश - हाँ! आपने दिए हुये विनय नाम के वशीकरण मंत्र से उन दोनों ने मेरी पत्नी को वश कर लिया था।

फिर तो दोनों हर त्योहार पर मुझे पता न चले इस तरह गाँव में जाने लगे। आज से लगभग छ महिने पहले मुझे गंध आयी कि ये दोनों यहाँ पर भी अपनी कोई प्रोपर्टी खडी कर रहे हैं। दो-चार लोगों ने भी मुझे प्रोपर्टी के बारे में कुछ कहा। मुझे लगा, आखिर दोनों अपने बाप पर ही जायेंगे। दोनों अचानक धडाका करे और मेरी पत्नी कजिया करे उससे पहले, पानी आने के पहले बाँध बाँध लूँ ऐसे आशय से मैंने बात उठाई-

देखो कमल-विमल! अब आप दोनों परिपक्व हो गये हो। अपने पैरों पर खडे हो। शादी के भी लायक हो गये हो। आप तो देख ही रहे हो कि यह घर बहोत छोटा है, उसी वजह से अब आप आपकी जिम्मेदारी उठा लो तो अच्छा होगा। मेरा फर्ज अब पूरा होता है। मुझे संतोष है कि आप दोनों सक्षम हो गये हैं। पर अब मेरी भी उम्र बढ़ रही है। मैं अकेला कहाँ तक खिंच सकुंगा?

तब दोनों ने सहजता से जवाब दिया - 'चाचाजी! आपकी बात सच है। हम जरुर कुछ करेंगे,' ऐसा कहकर बात समेट ली। साहिब! मेरे मन में यह सुनते ही

बहुत गुस्सा आया, परंतु मैं शांत रहा।

आज से तीन महिने पहले ही दोनों ने मेरी गैरहाजरी में मेरी पत्नी - उनकी चाचीजी के चरण स्पर्श करके एक चाबी दी... मेरी पत्नी ने पूछा, ये किसकी चाबी है?

दोनों ने कहा - 'कल चाचाजी को छुट्टी है। हम सबको एक जगह घर देखने जाना है। आपकी दृष्टि पडने से चाबी पवित्र हो जायेगी।

दूसरे दिन दोनों मुझको सपरिवार आग्रह करके यहाँ ले आये। दो मंजिल का बहुत सुंदर बंगला बताया। मेरे और मेरी पत्नी के हाथों से बंगला खुलवाया। इतना सुंदर बंगला देखकर हम दोनों स्तब्ध रह गयें। मेरी बरसों से हमारा खुद का घर हो ऐसी भावना थी। लेकिन आज तक हम कुछ नही कर सके और हमारे यहाँ हमारे खर्चे पर बडे हुये इन दोनोंने खुद का बंगला बना दिया। मैं मन मसोस कर रह गया। अब ये दोनों हमें जलाने के लिये ही यहाँ ले आए हैं।

मैंने पूछा - ये... ये किसका है? और साहिब! वहाँ तो दोनों मेरे और मेरी पत्नी के चरणों में झुक गये और कहने लगे 'यह दस्तावेज है। आप हस्ताक्षर करो।' मैंने दस्तावेज पढा, पूरा बंगला मेरे नाम पर था। दूसरा नाम पत्नी का। मैं चौंका... यह क्या? दोनों रोते हुए मेरे पैर पकडकर बोले - चाचाजी! ये हमारे पिताजी ने किये हुए पाप का हमने किया हुआ छोटा सा प्रायश्चित है। आप दोनों के अगणित उपकारो को श्रद्धा सुमन रूप अर्पण है।

हमारे दोनों की आँखों से भी आंसु की धारा बहने लगी... हमारी इच्छा को दोनों ने इस तरह साकार किया, पूरी गुप्तता के साथ।

मेरी पत्नी ने सजल नेत्रो से कहाँ - अरे! मेरे बेटे!... तुम दोनों ने हमारे लिए यह क्या किया? तुम दोनों को लेकर जब ये आये, तब मुझे बिल्कुल पसंद नही आया और बाद में भी मैंने तुम दोनों के साथ कैसा व्यवहार किया! और तुम दोनों ने...! तुम दोनों को मैं क्या आशीर्वाद दूँ?

दोनों मेरी पत्नी के पैर पकडकर रोते हुए बोले - आपने तो हमें संभाला है। कभी हमें अनाथ होने का एहसास नही होने दिया। ये तो उसके सामने धूलतुल्य है। किन्तु हमें इसके लिए इनाम की इच्छा है। देंगे?

मेरी पत्नी ने कहा - बेटा! कहो, क्या इच्छा है? वे दोनों बहुत भावुक होकर बोले - आप हमारा भतीजे नही, लडके की तरह स्वीकार कर लो। हमें आपको माँ कहने का अधिकार दो। अनंत पुण्य किया हो तो ही ऐसी माता मिलती है। हमें तो बहुत सस्ते में मिल रही है। आप हमें पुत्र की तरह स्वीकार लो।

मेरी पत्नी दोनों को गले लगाकर रोने लगी। मेरी आँखो में से भी आंसु बहने लगे। पत्नी ने कहा - भले ही मैं आपको भतीजे बोलती थी, परंतु तुम दोनोंने विनय से जब से मेरा दिल जीत लिया था, तब से मेरे मन में तुम बेटे ही हो। किन्तु आज से तुम दोनों मेरे आफीसियल बेटे हो।

फिर वो दोनों मजाक से बोले - आप दोनों को तो यहीं ही रहना है, अगर भीड होती हो तो हम उस भाडे के घर में जाए!

मैं ने कहा - यह क्या कह रहे हो? यह बंगला तो चार परिवार का समावेश होने पर भी छोटा नहीं लगेगा। और जब दिल विशाल होता है, तब कोई भी जगह छोटी नहीं होती। किन्तु इतने रुपये तुम दोनों ने कहाँ से निकाले? गाँव में जो जमीन जायदाद थी, उसका क्या हुआ?

दोनों ने कहाँ - गाँव की जगह को जितने पैसे मिले उतने में बेच दी। जो बाकी रहा वो, तो जो कमाए थे उस में से लगा दिये।

साहिब! आपने पहली ही मुलाकात में भाई के प्रति का दुर्भाव निकलवाया, उसका शुभ परिणाम यह मिला। और आपने कहा था - अवसर आने पर भाई जरुर मदद के लिए दौड आयेगा। भाई नही तो भाई के पुत्र सच्चे सगे बने। आपका उपकार कैसे भूला जा सकता है?

म.सा. - इसमें हमारा क्या उपकार? भगवान ने सच्चा मार्ग बताया और शास्त्रवचन के रूप में इस मार्ग पर चलने के लिए राह दिखाई, हम तो वही राह आपको दिखा रहे हैं। उस मार्ग पर आप चले, तो आपको लाभ हुआ।

दूसरे दिन दो युवक आए। वंदन किया। पहचान दी - कमल और विमल। दोनों ने महाराज के प्रति कृतज्ञभाव व्यक्त करते हुए कहा - आपने दी हुई हितशिक्षा ही आज हमें सोने का सूरज दिखा रही है। प्रभु पूजा - भक्ति से जीवन में शांति तो मिली - सच कहे, तो हर एक अवसर पर सही बुद्धि मिली। प्रभुपूजा द्वारा प्रभु की करुणा के प्रपात में नहाने को मिला और आपके आशीर्वाद का हाथ हमारे सर पर है। साहब! हम आपको वचन देते हैं कि, जीवनके कोई भी प्रसंग में हम संपत्ति को हमारे सिर पर चढने नही देंगे। कोई भी संबंध को संपत्ति के खातिर खतम नहीं करेंगे और अनुकंपा का अवसर संपत्ति के खातिर नही छोडेंगे।

संपत्ति या मीरास को इतना महत्त्व मत देना कि जिससे दूसरों के सामने देखने का व्यवहार भी रहे नहीं।

खानदान कुल की खानदानी

एक युवक उपाश्रय में बिराजमान साधु भगवंत को वंदन करने अपनी माता के साथ आया। वंदन करके युवक ने कहा - मुझे आपसे कुछ बात करनी है, अगर आपकी इजाजत हो और आपको अनुकूलता हो तो। वैसे बात कोई धर्मकार्य के बारे में नहीं है। जीवन की समस्या के बारे में है। आपका अभिप्राय - निर्णय चाहिए। आपको कोई दिक्कत तो नहीं होगी ना ?

म.सा. ने कहा - आप समस्या तो कहो। फिर मैं निर्णय करुंगा कि इसमें मुझे सलाह देनी चाहिए या नहीं। मेरे साधु जीवन के लिए उचित है या नहीं ?

युवक ने अपना नाम **महेश** बताते हुए कहा - भविष्य के बारे में मेरे माताजी और मेरे बीच मतभेद खडा हुआ है। उसमें हम दोनों ने एक दूसरे की सहमति से आपको निर्णायक बनाया है।

म.सा. - परंतु मैं आपको पहचानता नहीं, आप मुझे पहचानते नहीं, फिर मुझे निर्णायक कैसे बनाया ? वो भी मेरी इजाजत बिना ?

युवक - अलबत्! आप हमको नहीं पहचानते ऐसा हो सकता है। पर मेरी माताजी आपको पहचानती है। इसके पूर्व आपने यहाँ पधारकर चातुर्मास भी किया है। उसी वजह से माताजी आपको पहचानती है।

म.सा. - ठीक है! अब बताओ, मुझे कौन सी समस्या में पंच होना है ?

युवक - आपके पास समय हो तो मुझे पूर्वभूमिका समझानी पडेगी।

म.सा. - कहो!

युवक - आप इस नगर के नगरसेठ **चंपकभाई** को तो पहचानते ही होंगे ?

म.सा. - हाँ! बहुत ही उदार और उत्तम श्रावक थे। मगर उनके देहांत को तो शायद ६-७वर्ष बीत गए होंगे ?

युवक - हाँ! लगभग नौ बरस हो गए। चंपकभाई को कपास का व्यापार था। मेरे दादाजी यहां प्रायमरी स्कुल में शिक्षक थे। सीधे साधे थे। आमदनी कुछ खास नहीं थी। हमारा घर गरीब - मध्यम वर्ग का... मेरे पिताजी **मगनभाई** पढाई में होंशियार जरुर, किन्तु जो टेलेन्ट माना जाये, वो उनमें नहीं था। पिताजी अठ्ठारह

साल के हुए तब मेरे दादाजी ने चंपकभाई से बात की - इस मगन को कहीं काम में लगाओ।

चंपकभाई को दादाजी के प्रति सद्भाव था और वे अपने परिवार के संतानों के शिक्षक होने के नाते आदर से मेरे पिताजी को अपने वहाँ ही नोकरी पर लगा दिया। वेतन भी देते थे और हर साल बोनस भी देते थे। हर दिवाली के समय दो जोडी वस्त्र भी देते थे।

चंपकभाई ने मेरे पिताजी की शादी के वक्त भी अच्छी-सी मदद की... मेरे दादाजी को वो हमेशा धीरज देते थे और उसमें उनका जरा भी अहंकार दिखाई नही देता था। एक ही बात करते- अरे! मास्तर सा'ब! आपने हमारे संतानों को ज्ञान और संस्कार दिये, इस उपकार के सामने तो ये कुछ भी नहीं है। मेरे पिताजी लगभग बारह वर्ष कारकुन रहे।

एक बार चंपकभाई ने कहा, मगनभाई! आप मुंबई जाओ। ४-६ महिने हीरे के बारे में ज्ञान प्राप्त कर आओ। कच्चे हीरे, घडे हुए हीरे, वजन वगैरह के बारे में कुशल बनकर आओ। फिर यहाँ एक ज्वेलरी की दुकान खोलेंगे। मुझे अब **नरेश** को कपास में नहीं डालना। इसमें कुछ खास मुनाफा नहीं हो रहा है। उसे ज्वेलरी शोप में लगा दूंगा, साथ में आप जैसे विश्वासु हो, तो कोई दिक्कत नहीं आयेगी। ऐसे भी कपास की नौकरी में आप भी आगे नहीं बढ सकेंगे। जाओ! आपका वेतन तो चालु रहेगा और वहाँ आपकी अच्छी व्यवस्था मेरा मित्र कर देगा। वो तो हीरे के राजा है, आपको मन लगाकर सिखायेगा।

मेरे पिताजी मुंबई गये। कुछ नया सिखने के इरादे से उनका भी उत्साह बढ़ गया। और कौन जाने किस तरह हीरे के विषय में उनका टेलेन्ट चमक उठा। छह महीने में तो कडी मेहनत, उत्साह, बुद्धि से हीरे के बारे में अच्छी - खासी जानकारी प्राप्त कर ली। मुंबई में अच्छे वेतन की नौकरी की ओफर भी आयी और पिताजी उसमें ललचा भी गये थे, परंतु एक बार गाँव आना जरुरी था। इसलिए वो आये...

यहाँ चंपकभाई ने सामने से कहा - देखों मगनभाई! मैंने मौके की जगह पर दुकान ले ली है। शहर विकसित हो रहा है, इस वजह से स्कोप भी अच्छा है। इन्वेस्टमेंट के लिए दूसरे ५० लाख की व्यवस्था कर ली है। आप और नरेश पार्टनर। आपका मुनाफा में २० टका भाग। नरेक को भी आपको ही तैयार करना होगा। जिसकी वजह से दुकान में एक से भले दो होंगे तो कोई दिक्कत नहीं आयेगी।

'बीस टके की भागीदारी और वो भी मुनाफा में', ये सुनते ही मेरे पिताजी ने ऑफर स्वीकार कर ली। नरेश ज्वेलर्स के नाम से दुकान भी खुल गई। नरेशभाई भी दो

साल में हीरे की परख में निष्णात हो गए। चंपकभाईने नरेश अब हीरे में कुशल हो गया है, इस खुशहाली में गुरुदक्षिणा के रूप में मेरे पिताजी का मुनाफा में तीस टका भाग कर दिया।

साहिब! वे चार साल हमारे भी जाहोजलाली में गए। पिताजी की आवक अच्छी बढ़ी, किन्तु अब तक की जिंदगी में खास कोई मौज-शोक नहीं पूरे हुए थे। इसलिए पिताजी का झुकाव अब सभी इच्छाएँ पूरी करने की तरफ बढ़ा। इसी वजह से उनकी आवक बडा घर - अच्छा फर्निचर - कार - घूमने - फिरने के कार्यक्रमो में ही व्यय हो जाती। मेरी माताजी पिताजी को बहुत टोकती थी और कहती थी - ऐसे फिजुल खर्च मत करो। बचत कल काम आयेगी। सादगी कभी दगा नहीं देती। ये फिजुल के खर्च करने की आदत आपत्ति के समय में मुश्किल खडी करेगी। और संपत्ति जाने के बाद भी मौज मस्ती की आदत नहीं गयी तो भारी पड जायेगा।

परंतु पिताजी कहते थे - अब मुश्किल से जिंदगी में मौज करने को मिला है, उसमें तू इस तरह सलाह के कंकर मत फेंक। आज का लाभ उठाओ, कल किसने देखी है? मिला है उसे भोग लेने दे। कल की चिंता में आज को बिगाडने की जरुरत नहीं है।

ऐसे करते करते चार साल में आय अच्छी होने पर भी बचत खास नहीं। उसी समय इसी नगर के एक दूसरे सेठ जो शेयर बाजार के खिलाडी थे, बडे सट्टेबाज थे; उन्होंने एक बार मेरे पिताजी को बुला कर कहा - देखो मगनभाई! मुझे लगभग सत्तर लाख रुपये इन्वेस्ट करने हैं। ऐसा करो... आप ज्वेलरी की दुकान खोलो, इन्वेस्टमेंट पूरा मेरा... मुझे हर साल १० लाख रुपये मिलने चाहिए। बचा हुआ मुनाफा आपका..

इस ऑफर से मेरे पिताजी आकर्षित हो गए। मेरी माताजी का विरोध था। चंपकभाई के उपकार पिताजी को याद करवाए। सट्टेबाज के पैसो में कोई सार नहीं है ऐसी चेतावनी भी दी। आखिर में कहा - ऐसा हो तो आप नरेशभाई से बात करो। शायद आपको ३० से ३५ टक्के कर दे। अगर मुझे पूछो, तो आज हमें क्या कमी है कि आप झुठे लोभ में खींचे जा रहे हो? ऐसे भी ज्यादा मिलेगा तो ज्यादा उडाने में ही जायेगा ना? इसमें इस महेश को भी कैसे संस्कार मिलेंगे? अच्छे संस्कार खत्म हो जायेंगे।

परंतु मेरे पिताजी ने मेरी माता को चूप कर दिया - आप स्त्रियों को इसमें कुछ मालुम नहीं पडता। आप रसोई बनाते हो तो क्या मैं उसमे दखल करता हुं? बस, मेरी बात में आपको भी दखल नहीं करनी चाहिए। मैं ज्यादा कमाऊँगा तो क्या आपको साडियाँ - गहने नहीं मिलेंगे? ऐसे संतोष लेकर बैठेंगे तो कभी आगे नहीं बढ पायेंगे। ऐसा अच्छा मौका मिल रहा है तो उसे स्वीकारना चाहिए या ठुकराना

चाहिए? ये ही तो साहस है। वो भी सलामत। आज नरेश ज्वेलर्स चल रही है मेरी होशियारी से। मेरी होशियारी का लाभ नरेशभाई ने बहुत उठाया, अब पूरा लाभ मुझे ही मिलना चाहिए। आप देखना तो सही, नरेश ज्वेलर्स के सामने ही दुकान खोलुंगा।

मेरी मम्मी कुछ नहीं बोली। पिताजी ने दूसरे ही दिन नरेशचाचाजी को कहा - या तो मेरा हिस्सा ५०% करो, या तो मुझे अलग करो... नरेशभाई चौंक गए। पिताजी को समझाने की बहुत कोशिश की। परंतु पिताजी नहीं माने। नरेशभाई के साथ जानबुझ कर बडा झगडा कर दिया। पिताजी और उनके बीच बडी दिवार खडी हो गई।

म.सा. - लोभ का प्रवेश दिवार खडी कर दे उसमें कोई नवीनता नहीं है। जहाँ पर पहले अखंड खंड जैसे संबंध थे, वहाँ दिवाल खडी होती दिखने लगे, तो समझ लेना या तो लोभ का या अपेक्षा का प्रवेश हो चूका है।

महेशने बात आगे बढ़ाई - नरेशचाचाजी को पप्पाने बहोत कुछ न सुनाने जैसा सुनाया। अब से इस दुकान में पैर तो नहीं रखुंगा, बल्कि इस दुकान को ताला लग जाए ऐसी स्थिति खडी कर दूंगा।

उसी वक्त उस बहनने कहा - बेटा! वो बात तो बता दे कि इतना होने के बावजुद नरेशभाई ने तीन महीने के हिसाब से तेरे पिताजी के भाग के देढ लाख होते हुए भी सामने से ३ लाख रुपये भिजवाये।

महेश - हाँ! मम्मी वो बात बताता हुँ। परंतु पिताजी के कहने मुजब उन्होंने वो दुकान जमाने के लिए जितनी मेहनत की थी - और जो शाख खडी की थी, उस हिसाब से तो बहुत कम ही दिये थे ना।

म.सा. ने हँसते हुए कहा - जिसके उपर प्रेम नहीं रहता, वो ज्यादा करे तो भी कम ही लगता है और मिथ्या ही लगता है। उसमें कोई आश्चर्य नहीं... आगे बताओ।

महेश - फिर तो मेरे पिताजी ने अपने और मेरे पहले अक्षर से एम.एम. ज्वेलर्स नाम की ज्वेलरी शॉप खोली। नरेश ज्वेलर्स के लगभग सामने ही समजो... इन्वेस्टमेंट पूरा उस सट्टेबाज सेठ ने ही किया। मेरे पिताजी का दुकान पर कोई अधिकार नहीं। हाँ! मुनाफा पूरा पिताजी का, अलबत सेठ को १० लाख रुपये चुकाने के बाद... मेरे पिताजी को अंदाजा था कि हर वर्ष लगभग १५-२० लाख रुपये तो सहजता से मिल जायेंगे, जिसमें से मुझे ५-१० लाख तो अवश्य मिलेंगे। परंतु होता तो वही है, जो विधि में लिखा हो...।

म.सा. - हाँ! मानव का अधिकार मनोरथ करने तक ही है। आयोजन करना ही है। उसके मुताबिक मेहनत करने का ही है। आखिर फल तो भाग्य और

भवितव्यता के आधीन है।

महेश - ऐसा ही हुआ। पहले ही वर्ष मुनाफा मात्र ४ लाख! वो तो वे सेठ ले गए और उदारता बतायी, बाकी के ६ लाख रुपये पर ब्याज नहीं लेंगे। घर तो पुरानी बची हुई रकम पर चल गया, परंतु दूसरे वर्ष तो मुनाफा मात्र दो लाख का! वो सेठ भडक गए, पिताजी पर धन घर ले जाने का आक्षेप किया, और दो साल के बाकी रहे हुए कुल १४ लाख पर अब देढ लाख ब्याज भी लूंगा ऐसा कह दिया। इसका अर्थ यह हुआ कि पिताजी जब तक तीसरे वर्ष में २५ लाख न कमाए तब तक घर में कुछ नहीं आयेगा। तीसरे वर्ष के अंत में सेठ का कर्ज इक्कीस लाख पर पहोंच गया। चौथे वर्ष में लगभग साल पूर्ण होने आया, तभी पिताजी को जिस पर विश्वास था, वो नौकरी छोड गया। वो नगर छोडकर कहीं ओर चला गया। बाद में पता चला कि उसने विश्वास का गैरलाभ उठाया था। लगभग पाँच लाख के असली जवेरात चोरी करके नकली रख दिये थे। दूसरी ओर सेठ का दबाव बढ़ गया, क्योंकि इतना बडा इन्वेस्टमेंट करने के बाद भी उनको उनकी धारणा से तीस लाख रुपये कम मिले थे। सेठ को लगा, मेरी सारी पूंजी डुब जायेगी। इन सारे टेंशन में पिताजी का हार्ट फेल हो गया। वे परलोक रवाना हो गये। हमारे कोई देनदार शायद नहीं होंगे। तभी तो पिताजी के मोत पर कोई रकम देने तो नहीं आए, परंतु लेनदारों की तो लाईन लग गयी।

दुकान तो गई। कर्ज चुकाने में घर भी गया। मम्मी की एक ही बात थी, सिर पर किसी का कर्ज नहीं चाहिए। कोई ऐसा कहे कि 'वे तो मर गये और हमको मारते गये,' तो वो मैं सुन नहीं सकुंगी। तेरे पिताजी के पीछे दूसरा कुछ नहीं कर सकेंगे तो चलेगा, पर उनके सिर पर जो कर्ज का भार है, वो उतार देंगे तो उनकी आत्मा को शांति मिलेंगी। कोई लेनदार तेरे पिताजी को बददुआ दे, और कर्जभार के कारण तेरे पिताजी को लेनदार के वहाँ बैल बनना पडे तो ठीक नहीं होगा। उनके नाम पर कोई थुंके नहीं वही उनको श्रेष्ठ श्रद्धांजली है।

उसी वजह से हमने सभी लेनदारों की रकम चुका दी। कुछ भी नहीं बचा, छोटे से घर में रहने आये। खाना क्या बनाना, यह प्रश्न था। एक दिन एक सुंदर डब्बी मिली, उसमे बहुत सारे हीरे दिखे। आशा पैदा हुई कि इनको बेचने से कम से कम एक-दो साल निकल जाय उतने रुपये तो मिल ही जायेंगे। मैं अठारह साल का था, परंतु मुझे हीरे की परख नहीं थी। तो फिर ये हीरे दिखाने किसको? कौन उसकी सही किंमत बतायेगा? कौन उसे खरीदेगा?

मम्मीने मुझे कहा - तू नरेश चाचाजी के पास जा, उनको बता। मैंने आश्चर्य से पूछा - नरेश चाचाजी के पास? वे खडे भी तो रहने देंगे? पिताजी ने पिछले चार

साल में चाचाजी के ग्राहकों को तोडने के लिए जो दाव-पेच आजमाए थे और लोगों के बीच नरेशभाई के लिए जो भला-बुरा कहा है, उसे देखते हुए तो लगता नहीं कि वे मुझे अपनी दुकान में पैर भी रखने देंगे।

मम्मीने कहा - बेटा! मुझे उस खानदान पर विश्वास है। तेरे पिताजी ने उनके साथ नाता नहीं रखा और गलत व्यवहार किया, फिर भी नरेशभाई ने तीन लाख रुपये भिजवाए थे ना। बेटा खानदानी खून कभी बिगडता नहीं। उस परिवार ने बाप-दादा के समय से लक्ष्मी को देखा भी है और पचाया भी है। तू ही बोल, तेरे पिताजी ने भले ही जो भी व्यवहार किया, लेकिन नरेशभाई के लिये क्या तूने कभी सुना है कि उन्होंने तेरे पिताजी के बारे में कुछ गलत बात किसी को कही हो? जा बेटा... जा! मुझे उस परिवार पर विश्वास है।

मम्मी के आग्रह से काफी संकोच के साथ मैं वहाँ गया। दुकान में पैर रखने के लिए में झिझक रहा था, उसी समय नरेश चाचा ने मुझे देखा... तुरंत हुलास से दौड आए। मेरा हाथ पकडकर दुकान में ले गये और कहा - 'आओ! आओ! महेश! जरा भी संकोच मत रख।' ऐसा कहकर सीधे मुझे अपनी केबीन में ले गए।

वहाँ पर मुझे प्रेम से बैठाया। पिताजी की मौत कैसे हुई? इत्यादि प्रश्न पूरी सहानुभूति के साथ पूछने लगे। मैंने सजलनेत्रों से सभी बातें बतायी। उनकी भी आँखे गिली हुई। बात बाद में मैंने डब्बी दिखाई और कहा - अभी तो इतनी ही पूँजी बची है। ये यदि बिकेंगे तो घर चलेगा। सही किंमत आप ही कर पायेंगे ऐसे विश्वास से मम्मी ने मुझे आपके पास भेजा है। नरेश चाचा ने डब्बी देखी - हीरे देखे, वापस डब्बी में रख दिये और जोर से आवाज लगाई... ओ **जयेश**! यहाँ आओ! देखो तो, ये एक पार्टी के हीरे हैं, इनकी क्या किंमत आँकी जा सकती है?

जयेशभाई डब्बी में रहे एक-एक हीरे को आई ग्लास से देखने लगे! लगभग सभी हीरे देखने के बाद नरेशभाई को कहा - लीकन...

म.सा. ने पूछा - ये लीकन यानी क्या?

महेश - उस वक्त तो मुझे भी पता नहीं चला। परंतु नरेशचाचा गंभीर हो गये। कुछ विचार करके बोले - महेश! एक काम कर। डब्बी तू घर ले जा। संभाल के रखना, अभी बेचने की उतावल मत करना। और कहा - तू तेरी मम्मी की संमति लेकर आज से ही इस दुकान में नौकरी लग जा। तेरे पिताजी का मेरे उपर बडा ऋण है। उन्होंने मुझे हीरे का ज्ञान दिया है। अब मैं यदि तुझे हीरे की परख में कुशल बनाऊँ, तो ही वो ऋण अदा होगा।... और आज से ही तेरा वेतन बांध देता हुँ। पंदर सौ रुपये मासिक, इस महिने के ये एडवान्स लो।

मैं तो इस पूरी घटना से चक्कर खा गया। डब्बी लेकर घर आया, मम्मी को सभी बातें बताई। मम्मी ने आशीर्वाद दिये। मैं नरेश चाचा के वहाँ नौकरी पर लग गया। उन्होंने मुझे आठ महिने में तो हीरे की परख में कुशल बना दिया।

आठ महिने के बाद एक दिन मुझे कहा - जा महेश। वो डब्बी लेकर आ। मैं घर से वो डब्बी लेकर आया। चाचा ने कहा - अब तू हीरे की परख में होशियार है, अब तू ही इसकी किमत बता दे।

मैं एक एक हीरा लेकर देखने लगा। सभी को परखने के बाद मेरा मुँह उतर गया। मैंने रोते आवाज में कहा - चाचा! ये तो सभी हीरे नकली हैं।

चाचा - महेश! जयेश ने मुझे उसी वक्त कहा था, लीकन! इसका उल्टा करो। और उस समय मुझे प्रकाश हुआ। सभी नकली हीरे... मैंने चाचा से पूछा - आपको उसी वक्त पता था, तो मुझे कहा क्यों नही और इतने महीने नकली हीरे संभाल कर रखवाएँ... ?

चाचा - बेटा! उस वक्त की परिस्थिति ऐसी थी कि सही बात भी तुम्हें बताने जैसी नहीं थी। तू मेरे पास एक आश लेकर आया था, तेरी आशा अगर टूट जाती, तो तुझे कितनी मानसिक चोंट लगती ? तदुपरांत उस वक्त यदि मैंने ऐसा कहा होता, तो तुम्हारे मन में बात बैठ जाती कि चाचा हीरे मुफ्त में लेना चाहते हैं इसलिए नकली बता रहे हैं। क्या मेरे पिताजी मूर्ख थे कि नकली हीरे संभालकर रखे ? ऐसे भी तुम्हारे पिताजी के मन में मेरे प्रति दुर्भाव तो था ही! बोल, उस वक्त मैं तुझे सही बात कैसे बता सकता ?

अब तुम खुद ही कुशल हो गये हो। और तुमने ही असली - नकली का फैसला कर लिया। अत: मुझे बडी राहत हुई। परंतु तुम निराश नहीं होना, आज से तेरा वेतन पच्चीस सौ कर देता हुं। जा, टेंशन मत लेना।

म.सा. - आपने बडी लंबी-चौडी बात की। इसमें तुमने तुम्हारे सेठ नरेशभाई के उत्तम चरित्र का भी दर्शन करवाया। किन्तु अब समस्या क्या है ?

महेश - बस! अब वही बता रहा हुं। जब नरेश चाचा ने मुझे इस तरह नौकरी पर रखा, तब तो मुझे बहोत अच्छा लगा। परंतु पिछले तीन साल से नरेशचाचा ने मेरा वेतन बिल्कुल बढ़ाया ही नहीं, काम तो इतना करवाते हैं कि मैं थक जाता हुं। मेरे पर इतना विश्वास है कि लाखो रुपयों के काम जो किसी को नही बता सकते, वो बेधडक मुझे सौंप देते हैं। सबके आगे मेरी प्रमाणिकता, मेहनत, विश्वास के बारे में प्रशंसा करते हैं।

म.सा. - तो फिर अब तुझे क्या चाहिए ?

महेश - (गुस्से में ...) - महाराज! प्रशंसा या खुशामद से पेट नहीं भरा जाता। मेरी प्रमाणिकता, मेहनत, बिश्वासनीयता का बदला मात्र प्रशंसा के दो शब्द! ये कैसे चलेगा? कल ही मुझे उस सेठ ने बुलाया था और कहा, देख महेश! तेरे पिताजी को मैंने पुंजी लगा कर दुकान करवा दी थी। पर उनको चलानी आयी नहीं। यदि तेरी इच्छा हो तो तुझे दुकान करा दूँ। आज के भाव से मुझे करोड रुपये का इन्वेस्टमेंट करना होगा। या तो हर साल तुम्हें मुझे पंद्रह लाख रुपये देने होंगे और बाकी का मुनाफा तेरा, या तो हर साल तू लाख रुपये लेना और बाकी का मुनाफा मेरा। जो अच्छा लगे वो तेरा...

एक तरफ मुझे ऐसा लगता है कि नरेशचाचा मेरे पिताजीने उन्हें जो नुकसान पहुँचाया था, उसका हिसाब मेरे पास से निकाल रहे हैं, अत: एक रुपया भी वेतन नहीं बढ़ा रहे हैं। अरे! बोनस भी नहीं! मम्मी ने मना की है, अत: मैं उनके आगे इस बारे में कोई बात नहीं करता, तो वे मेरा फायदा ही उठा रहे हैं और दूसरी तरफ ये ऑफर आयी है। मेरा मन तो ऑफर स्वीकारने के पक्ष में है। बेशक, मैं सलामत रहना चाहुंगा कि मुनाफा सेठ का और मुझे लाख मिल जाय तो मैं संतुष्ट।

परंतु मम्मी नरेशचाचा को छोडने के लिए मना कर रही है। मम्मी के मनमें अभी भी आशा है कि जो कुछ भी अच्छा होगा - अच्छा करेंगे - वो नरेश चाचा ही करेंगे। मम्मी को उनकी खानदानी - उनके स्वभाव पर ज्यादा एतबार है। बस यही समस्या है। आपकी क्या राय है? नरेशचाचा को छोडना नही, या आयी हुई ऑफर का स्वीकार करना?

म.सा. - पहले एक बात मुझे समझ में नहीं आयी कि असली हीरे के व्यापारी के वहाँ नकली हीरे कैसे आ सकते हैं? इसमें नरेशभाई का तो कोई खेल नहीं है ना?

महेश - इसमें नरेशभाई का कोई खेल नजर नहीं आता। उन्होंने और जयेशभाई ने हीरे मेरे सामने ही देखे थे। तब कोई गडबड नहीं हुई, यह बात पक्की है। जब कि मुझे भी यह समझ में नहीं आया कि पिताजी ने नकली हीरे क्यों रखे? वो भी डब्बी में संभाल कर? मम्मी भी यह बात समझ नहीं सकी। परंतु यह बात तो पक्की है कि इसमें नरेशचाचा का कोई हाथ नहीं है।

म.सा. - इस समस्या में कोई भी निर्णय देना मुझे योग्य नहीं लगता। भविष्य के रहस्य को परखने में मैं समर्थ नहीं हुं। मैं विचार करके फैसला करुं और वो ऊल्टा पड जाए, तो वो उचित नहीं होगा। इसलिये निर्णय तो आप दोनों को ही सोच कर करना होगा। मेरी सलाह तो इतनी ही है कि (१) आपकी माताजी परिपक्व है।

आपकी हितचिंतक है, उनके हृदय के आशीर्वाद से जो भी निर्णय लोगे, वो आपके हित के लिए ही होगा ऐसी बडी संभावना है। हितकारिणी माता के आशीर्वाद कभी निष्फल नही जाते (२) जुआ, लोटरी, सट्टा से आई हुई लक्ष्मी कभी पवित्र नहीं होती। शायद यह भी संभव हो कि उसी रकम से व्यापार करने पर आपके कुशल पिताजी भी डूब गए। ऐसी लक्ष्मी झट से आती है और झट से जाती है। पुण्य की हानि और पापकी पुष्टि करती है। क्योंकि वो रकम पवित्र नहीं होने के कारण वो जिसके हाथ में जाती है उसके प्राय: अच्छे संस्कार नष्ट हो जाते हैं। बुरी आदतें लग जाती है। (३) शायद हो सकता है कि आपका खुद का स्वतंत्र पुण्य न हो, नरेशभाई जैसे पुण्यशाली के सहारे पुण्य खिले और उनके जाने से पुण्य मुरझा जाए। वृक्ष अपने ही बल से आसमान की तरफ आगे बढ़ता है और लता को उसके लिए उचित सहारे की जरुरत होती है। (४) नरेशभाई के जो विशिष्ट गुण दिखाये, और उन्होंने अपने आप तीन लाख रुपये भिजवाए, इन बातों को देखते हुए तो ऐसा लगता है कि वे कदापि आपका गलत फायदा नहीं उठायेंगे। आज आपका कचूमर निकाल रहे हैं, हो सकता है, आपके पास कडी मेहनत कराने के पीछे आपको कुशल बनाने का सही दाव खेल रहे होंगे। आपकी बराबर कसौटी करने के बाद आपके उपर प्रसन्न हो जायेंगे ऐसी भी शक्यता है।

अत: अगर आज की जरुरियात मुताबिक मिल जाता है, तो गलत लोभ में बहने जैसा नहीं है। लोभ को रोक नहीं है। लोभ की खाई जिंदगी को खा जायेगी। जीवन में करने जैसे आत्म हितकर कार्य जैसे की दान-शील-तप-भाव-सामायिक-पूजा वगैरह के लिए जिसको कभी समय नहीं मिलता, ऐसे लोभिओं की जिंदगी तुम देख लो... काफी कुछ मिलने के बावजुद भी उनको शांति कहाँ है? मिला हुआ कितना उपयोग में ले सकते हैं? दूसरों के काम कितने आते हैं? जिंदगी का महामूल्य समय मात्र फिजुल की रकम जमा कर फिजुल खर्च करने में या अतिरिक्त केपिटल जमा करने में ही पूरा हो जाता है। परलोक को सुधारने के लिए अति जरुरी माना जाता समय मात्र फिजुल के कार्य में ही पूरा हो जाता है। ये तो खाने का समय हाथ धोने में ही पूरा करने जैसी या परीक्षा का समय कंपास सजाने में पूरा करने जैसी बात है। खेर! इसमें निर्णय तो आपको ही लेना है। मुझे जो उचित लगा वो मैंने बताया।

दोनों गए। चार साल के बाद फिर मिलना हुआ। महेशने पहचान देते हुए बात का अनुसंधान किया।

आपके पास से घर जाने के बाद मैंने मम्मी की बात मान्य रखी, पर मेरी खूब कसौटी हुई। एक तरफ ज्यादा वेतन की ऑफर आती थी, दूसरी ओर नरेशचाचा

वेतन बढ़ाते ही नहीं।

मैंने भी मम्मी के उपर की चिढ़ के कारण जुनून से विचार किया, अब तो पूरेपूरा ही मुंडवाना है। मुझे वेतन में बढोतरी मांगना ही नहीं है। घर खर्च में जब कम पडेगा और मम्मी व्याकुल होगी तब बात... वास्तव में वैसा ही हुआ। दूसरे तीन साल बीत गये, परंतु वेतन बढ़ाने की बात ही नहीं। मुझे नयी ऑफर भी आई, मासिक १०,०००/- का वेतन। कहाँ २५००-३००० का वेतन और कहाँ १०,०००? मम्मी भी ढीली पड गई। मम्मी को भी लगा - नरेशभाई अब वास्तव में सरलता का लाभ उठा रहे हैं। नौकरी पर रखने के उपकार का बदला ले रहे हैं। पिताजी की गलती की सजा दे रहे हैं। अत: मम्मी ने मुझे कहा - देख! इस दिवाली तक नरेशभाई कुछ वेतन में बढोतरी न करे, तो फिर तुझे जो उचित लगे वो कर लेना। अब तक तेरे विकास में मैंने रुकावट डाली, उसका मुझे बहोत अफसोस है।

हम माँ-बेटे ने तो दिवाली के बाद धडाका करने का निर्णय ले ही लिया था। दूसरे सेठ की ऑफर के लिए लगभग सम्मति जैसी बात भी कर दी थी। उसी में धन तेरस के दिन नरेशचाचा ने मुझे कार में बैठाकर कहा -

चल तेरे घर! मुझे आश्चर्य हुआ, परंतु पूछने की हिम्मत नहीं हुई। मेरे घर के आगे कार खडी रखी और कहा-तेरी मम्मी को भी कार में साथ ले जाना है। बुलाकर लाओ। मैं बुलाकर आया। मम्मी भी आश्चर्य में थी। पर कुछ बोल नहीं पायी, उसे कार की पिछली सीट पर बैठाकर हम शहर के एक दूसरे विस्तार में गए, जो अभी अभी अच्छा विकसित हुआ है। एक नये मकान के नीचे एक नयी दुकान के पास कार खडी रही। बोर्ड पर कपडा था। नरेशचाचाने हम कार से नीचे उतरते ही मम्मी से कहा - यह रस्सी खींचो। मम्मी ने खींची। वो कपडा हट गया। नाम पढ़ने में आया। एन.एम. ज्वेलर्स। कुछ समझ में नहीं आया। उन्होंने ही दुकान खोली। ज्वैलरी की दुकान! दुकान की माल के साथ किंमत लगभग साठ लाख रुपया होगी। अंदर आकर साथ में लाये हुए कुम कुम से मेरे भाल पर तिलक कर मुझे कहा - महेश! पहले तो मैं तुमसे माफी मांगता हुं कि पिछले छह-सात साल से मैंने तेरा पूरा कचूमर निकाल दिया। बदले में वेतन भी बिल्कुल बढ़ाया नहीं... जब कि उसमें मेरी यही इच्छा थी कि तुझे अच्छी तरह से तैयार करना है और पैसे का मूल्यांकन समझाना है।

उसके बावजुद भी तुमने धीरज रखी। एक बार भी वेतन बढ़ाने की बात किए बिना जिस परिश्रम, विश्वास, दक्षता से काम किया उसका यह मुआवजा है। यह दुकान तुम्हारी है, केवल मुनाफा नहीं, इस दुकान की पूरी मिलकत में तेरा ८०% भाग है। आज से तुम इस दुकान के मालिक हो। इस दुकान को संभालना है। मेरा बीस टका

भाग भी इसलिए है की मेरा नाम होने से तुझे दूसरे किसी की तरफ से कोई भी प्रकार की परेशानी न आएगी।

इतना समझ लेना कि मैं कभी भी तुझे परोक्ष रूप से भी नहीं पुछूंगा कि दुकान कैसी चल रही है ? मुनाफा कितना हुआ ? समझ ले कि इस दुकान के साथ मेरा कुछ लेना देना नहीं है।

मैं और मेरी मम्मी तो हक्के - बक्के रह गए। खानदान कुल की खानदानी जिस तरीके से प्रकाशित हुई थी वो तो अद्‌भुत - अकल्प्य थी। मैं तो क्षणभर कुछ बोल ही नहीं पाया। मेरी आँखे भर गई। इस देवात्मा के लिए मैंने कैसी कैसी कल्पना कर ली ? मैं उनके पैरो में गिरकर फुट फुट कर रो पडा। उन्होंने मुझे प्रेम से खडा किया, गले लगाकर आँखो से दो बुंद आंसु के गिराते हुए कहा - बेटा ! मैंने यह काम करके कितनों को जलांजलि कर दी। मेरे पिताजी चंपकभाई और तेरे दादाजी दोनों, आसमान में बैठे - बैठे मुझे कितने आशीर्वाद बरसा रहे होंगे ! एवं तुम्हारे पिताजी मगनभाई ने तो मुझे यह धंधा सिखाया था। आज उनके लडके को यह दुकान सोंप कर मैं उनके उपकारों के सामने कुछ हल्कापन महसूस कर रहा हुं। मेरी तरफ से उनको काफी अन्याय हुआ था। अत: वे मुझसे खूब नाराज हुए थे।

मम्मी ने भी नरेशचाचा का बार-बार आभार माना। हमनें उनके लिए जो सोचा था वो भी कहा। परंतु नरेश चाचा ने वह कान पर नहीं लिया। दो दिन बाद उन्होंने एक बार मुझे अपनी केबिन में बुलाकर कहा - ऐसे तो मुझे तुझे कुछ नहीं कहना है। परंतु तू एक बात का विचार कर, तेरे घर से नकली हीरे क्यों निकले ? असली हीरे के व्यापारी के वहाँ नकली हीरे कैसे आ सकते हैं ?

मुझे तुम्हारे पिताजी की निंदा नहीं करनी, किंतु हकीकत कह रहा हुँ। मेरे साथ स्पर्द्धा करने के मूड में तुम्हारे पिताजी असली हीरे के गहने में २०-२५ असली हीरों के साथ, दो-चार नकली हीरे जड देते थे। फिर मेरी दुकान से कम भाव में बेचने का प्रयत्न करते थे। खेर ! मुझे बार-बार वो बात दोहरानी नहीं है। परंतु तुझे सलाह है-कम आमदनी में संतुष्ट रहना पर कभी झूठा काम मत करना। दुकान में जो आगे एन. है, वो मेरा नाम है। इस बात का ख्याल रखना कि झूठी नियत आगे जा कर भयंकर नुकसानकारी साबित होती है। ज्यादा तो तुझे क्या सलाह देनी ?

साहिब ! यह है रोमांचक विगत... आपका आभार कि आपने माताजी की बात मानने की सलाह दी थी। आज उस दुकान का मैं मालिक हुं। साल में अच्छी कमाई होती है। सिर पर किसी का कर्ज नहीं है। नरेशचाचा कभी परोक्ष रीत से भी पूछते नहीं। इस साल जो कमाई होगी, उसमें से जो २०% मैं दूंगा, वो वे स्वीकार लेंगे।

उस रकम को मगनभाई एवं चंपकदादा के नाम से इसी शहर में जैन स्कुल में डोनेट कर देंगे।

साहिब! खानदान कुल की खानदानी क्या चीज है, उसका मुझे स्वयं अनुभव हो गया।

म.सा. - सुंदर अनुभव हुआ। इस अनुभव का उजाला तुम्हारे समग्र भविष्य को उज्जवल बना सकता है। यह बात पक्की कि कोई भी व्यक्ति बिना कारण अपना लाभ नहीं उठाता। जो जो लाभ लेता हुआ दिखाई देता है, वो समझ लेना, इनाम देने का जरुरी इंतजाम कर रहा है।

महेश - तो क्या नौकरो के पास सख्त मजदूरी करानेवाले सभी सेठ नरेशभाई हैं?

म.सा. - ऐसा तो नहीं कहा जा सकता, परंतु ऐसा होता जरुर है कि गए भव में नौकर - चाकर, बैल या अन्य कोई भी तरिके से अपने हाथ के नीचे रहे हुए जीवों से हमनें भारी काम निकलवाया हो और उचित वेतन चुकाने में कृपणता रखी हो, देते वक्त बिलखाया हो, तो वो इस भव में सेठ, बॉस, मालिक इत्यादि बनकर अपना पूरा कचूमर निकाल लेता है। मानो कि वह पूर्वभव का हिसाब बराबर कर रहा है।

महेश - इसका अर्थ यही है कि जो कचूमर निकालते हैं, वे सभी निर्दोष हैं, एवं पूर्वभव का हिसाब बराबर कर रहे हैं।

म.सा. - पूर्वभव के निश्चित ऋणानुबंध - परस्पर कर्म के ही कारण सेठ को नौकर के पास से अच्छा-खासा काम निकालने के बावजुद भी कुछ ज्यादा देने का मन नहीं होता यह हकीकत है, किन्तु उस से हिसाब बराबर नहीं होता। यह तो विषचक्र है। बाद के भव में इस भव का नौकर वापस सेठ बनता है और सेठ नोकर... उस भव में भी यही चक्र चलता है।... जो फिर वापस उल्टा होकर चलता है।

महेश - तो... तो... फिर इसका अंत नहीं आता।

म.सा. - ऐसा भी नहीं है। दोनों में से जिसको प्रभुवचन के आधार पर या गुरु महाराज के उपदेश से अथवा सहज कर्म ढीले पड जाने से ऐसा खुद को समझ में आ जाए कि ''मुझे ही सहन करना है, परंतु किसी को सहन करवाना नहीं है। मेरा भले ही सब गैरलाभ उठा ले, मुझे किसीका गलत लाभ नहीं उठाना है। सभी मित्र हैं... स्वजन हैं... अच्छे हैं... मेरे हैं...'' वो इस चक्र को तोडकर मुक्त होता है। फिर दूसरा भी कर्म की मार अन्य तरीके से सहन करके मोक्ष मार्ग में आगे बढ़ता है।

पराये दिये से उजाला

मनोजभाई नाम के एक वृद्ध पुरुष लगभग सवेरे आठ बजे परिचित साधु भगवंत को मिलने आये। आते ही महाराज साहिब के पैरों में गिर कर फूट-फूट कर रोने लगे... थोडी देर तक तो रोते ही रहे। उनका हृदय जब थोडा हल्का हुआ, तब अचानक उनके व्यवहार से आश्चर्य और आघात से भरे म.सा. ने उनकी पीठ पर वात्सल्य से हाथ थपथपाते पूछा - मनोजभाई! ऐसा क्या हो गया कि सवेरे - सवेरे इस तरीके से फूट फूटकर रोते हुए मेरे पैर पकड लिए?

मनोजभाई ने रोती आँखो से कहा - साहिब! यह दिल अब तक धडक रहा है वही आश्चर्य है। खुद का कहलाने वाला पराया हो गया। मेरे अंशने ही मुझे डंस दिया है। अंधे की लकडी को छिनकर, उसी से अंध पुरुष पर प्रहार किया जा रहा है। प्रेम के बहते ठंडे प्रवाह में से जलती हुई आग प्रगट रही है। साहिब! क्या बात करुँ? मेरा पुत्र कपुत्र निकला। आज दस बजे वो मुझे वृद्धाश्रम में भेज रहा है।

इतना बोलते बोलते फिर रोने लगे। म.सा. ने आश्वासन देते-देते पूरा ब्योरा देने को कहा।

मनोजभाई ने खुद की कर्मकुंडली की कहानी पेश करते हुए कहा - कभी कुछ आशय से व्यक्त किया हुआ अभिप्राय बरसों बाद बीज में से पेड बनकर सीधा सिर पर गिरने जैसी यह बात है। मैंने एवं **सुनीता** ने आज से करीब बियालीस साल पहले लव मॅरेज किया था। बेशक घर के बुजुर्ग भी उसमें सहमत थे। किन्तु शादी के बाद लगभग सतरा साल तक हमें कोई संतान नहीं थी। इसलिए हमने दोरा-धागा जैसी अंधश्रद्धा का भी सहारा लिया, एवं डॉक्टरो - हकीमों की दवाई लेने रूप में आधुनिक विज्ञान पर भी बिश्वास रखकर देखा। परंतु निष्फल रहे।

उसी में एक डॉक्टर ने उस वक्त का आधुनिक इलाज किया। मेरी पत्नी को गर्भ रहा, हम दोनों बहुत आनंद में थे। नौ महीने नए नए मनोरथ करने में कहाँ बीत गए पता ही नही चला।

चालीस साल की ढलती जवानी में भी मैं फिर से नवजवानी जैसी स्फूर्ति का अनुभव करने लगा। सुनीता तो लगभग पागल जैसी हो गई थी। हम बहुत

सेवाटहल से गर्भ को संभालने लगे। परंतु शायद गर्भ पोषण के बजाय ये सेवाटहल कुदरत को मंजुर नहीं होगी...

लगभग प्रसूति के अवसर पर ही सुनीता को भयंकर वेदना हुई।... तत्काल अस्पताल में दाखिल किया गया। पूरा चेक अप करने के बाद डॉक्टर ने गंभीर स्वर से कहा - मनोजभाई! गर्भ में रहा हुआ बालक अब ऐसी स्थिति में आ गया है कि ऑपरेशन के बिना दूसरा कोई उपाय नहीं है।

मैंने कहा - तो ठीक है, ऑपरेशन हो जाए। परंतु दोनों को आँच नहीं आनी चाहिए।

डॉक्टर ने तब कहा - यही तो मुसीबत है। इसलिए तो मैं गंभीरता से कह रहाँ हुं। मुझे ऐसी संभावना दिख रही है कि ऑपरेशन करते समय दोनों में से एक की मौत हो सकती है। या तो बालक की या तो माँ की। परिस्थिति इतनी हद तक बिगड गई है कि तत्काल निर्णय लेना होगा, नहीं तो दोनों की मौत हो सकती है। आपकी इच्छा हो तो दूसरे कोई डॉक्टर का अभिप्राय ले लेते हैं। परंतु जो भी करना है उसमें अब ज्यादा समय बिगाडना उचित नहीं।

डॉक्टर का खास मित्र जो बडा डॉक्टर था, उन्हें बुलाया गया। उन्होंने भी चेकअप किया और तुरंत ऑपरेशन की ही बात की... उनका भी यही कहना था कि ऐसे ऑपरेशन में भगवान की दुआ हो तो ही दोनों बच सकते हैं... बाकी एक की तो मौत लगभग निश्चित है।

डॉक्टर ने मुझे कहा - आपका अभिप्राय आपको मुझे लेखित देना होगा। वो भी तत्काल।... मुझे सुनीता से बहुत प्यार था। हमारी शादीशुदा जिंदगी केवल बच्चे की बात जाने दो, तो देवों को भी ईर्ष्या करा दे, ऐसी गुजरी थी। वो बहुत ही प्यारी - समर्पित - विवेकी... कभी मेरा दिल नहीं दुखाया। कभी ऊँची आवाज से बात नहीं की। मेरे पिताजी का भी अत्यंत उचित विनय वगैरह करती थी। मुझे उसके बिना जीने की कल्पना ही मारनेवाली लगती थी। वो न हो तो मैं किस तरह जी पाऊंगा ऐसा विचार ही मुझे थरथरा देता था। मेरी सभी चिंताएँ उसके सिर पर थी। वो मुझे बहुत चाहती थी और मैं भी उसे... दूसरी ओर बालक का तो अभी तक मुँह भी नहीं देखा था। वो भविष्य में कैसा होगा? तदुपरांत डॉक्टर ने भी आश्वासन दिया था कि पत्नी दूसरी बार गर्भवती हो सकती है। अंत में अनाथाश्रम में से बालक गोद भी मिल सकता है।

ऐसे सभी बाजु से सोच कर मैंने मेरा अभिप्राय दे दिया। बालक बचे तो ठीक है, परंतु सुनीता मरनी नहीं चाहिए। मैंने लिख के दिया एवं हस्ताक्षर भी किये।

परंतु नसीब को मुझे पत्नी की ओर से मिलते सुख की ईर्ष्या हुई होगी। मेरे सुख के दिन पूरे होने वाले होंगे। शनी ग्रह की पनोती बैठने वाली होगी। ऑपरेशन के समय पर ही परिस्थिति ऐसी खडी हुई कि पत्नी का बहुत ही खून बह गया। उसके बचने की आशा ही खत्म हो गई। डॉक्टर ने बडी मुश्किल से बालक को बचाया। बेटे का चेहरा देख कर संतोष के साथ सुनीता ने अंतिम श्वास लिया। मुझे इस समाचार से सख्त आघात लगा। जिसके बिना क्षण भी जी नहीं सकता ऐसी मनोदशा में था, अब मुझे उसके बिना पूरी जिंदगी बितानी होगी।

जैसे की यह प्रसंग आज ही बना हो वैसे मनोजभाई गमगीन हो गये।

म.सा. ने आश्वासन देते हुए कहा - मनोजभाई! इस प्रसंग को बरसों बीत गए, अब उस पुरानी बात को याद करके दुख के गडे मुर्दे क्यों उखाड रहे हो? कुदरत में ऋणानुबंध नाम का भी एक तत्त्व है। जिसके साथ जितना ऋणानुबंध होगा उतना ही समय उसका सहकार मिलता है। हम उस ऋणानुबंध को देख-समझ नहीं सकते, अत: जिसके साथ मन मिलाव हो गया उसके साथ मानो कि अब अनंत काल तक साथ में ही रहना है, ऐसी धारणा में आ जाते हैं। उसका भी वियोग अचानक हो सकता है ऐसी बात अपनी कल्पना में भी नहीं आती और फिर जब यकायक वियोग हो जाता है, तब वह असह्य हो जाता है। इसीलिए प्रभु कहते हैं - जो संयोग वियोग के वक्त दु:खदायक लगता है, वो संयोग ही दुख का बीज है। क्योंकि संयोग के साथ वियोग आम के साथ गुटली की तरह जुडा हुआ है। खेर! पत्नी का वियोग हुए बरसों बीत गए। अब उस भूतकाल को भूल जाओ। पुत्र में ही पत्नी का अंश देख कर उसे संभाल लो।

मनोजभाई ने अत्यंत दर्दभरे स्वर से कहा - साहिब! उसी तंतु के सहारे आज तक जीवन टिक रहा था। पत्नी के मौत का आघात पुत्र के दर्शन से ही कुछ हल्का हुआ था। क्योंकि उस पुत्र में मुझे पत्नी के चेहरे के अंश मिलते दिखते थे, मैंने उसी तरह मन को मना लिया था कि पत्नी मरी नहीं, परंतु इस बालक के रूप में मुझे वापस नये रूप में मिली है। पत्नी की ही अनमोल भेंट एवं पत्नी के चेहरे को मिलता चेहरा, बस इस बातने मुझे धीरज दी और मुझे एक नयी दिशा मिली।

फिर तो मैं पत्नी का प्रेम भी पुत्र पर ही बरसाने लगा। नाम रखा सुनीत... उसे बुलाऊँ - उसका नाम पढुँ और मुझे सुनीता हाजिर होने का एहसास होता। मैं पिता-माता दोनों का रोल निभाकर सुनीत को पालने लगा। लाड भी लडाएँ और कुसंस्कार न आए इस हेतु से कडी निगरानी भी रखी। वात्सल्य तो दिया, साथ में काहिल - कुसंगत वाला न बने इसलिए सख्ताई भी रखी।

सुनीत भी बहुत समझदार, विनयी था। मेरे प्रति अनहद प्रेम रखता था। मेरे इशारे में मेरी इच्छा जानकर उसके अनुसार ही बर्तन करता था। सच कहुँ साहिब! मैं पत्नी के विरह की वेदना भी भूल गया था। घाव भर जाने की अनुभूति में था। सुनीता को भूला नहीं था, परंतु सुनीत में ही मुझे सतत सुनीता की मौजुदगी लगती थी। मैं विधुर होने पर भी प्रसन्न था।

म.सा. - तो फिर तकलीफ कहाँ हुई?

मनोजभाई - करीब दस दिन पहले रात को सुनीत उसकी पत्नी के साथ बात कर रहा था, वह मैंने सुना। आज ऐसा लगता है कि वो नहीं सुना होता तो अच्छा होता।

म.सा. - हाँ! कई बातें नहीं सुनने में ही मजा है। जैसे देखना नहीं और जलना नहीं, वैसे सुनना नहीं और जलना नहीं भी बराबर है। जो सुनने से बिना कारण दु:ख होता है, दूसरों के प्रति द्वेष - पूर्वग्रह पैदा होता है, दूसरों के प्रति का अच्छा अभिप्राय खत्म होता है, ऐसा हकीकत में सुनना ही नहीं चाहिए। मैं तो तुम्हें सलाह देता हुं कि, तुमने जो सुना था वो सुना ही नहीं ऐसा मान कर स्वस्थ हो जाओ।

मनोजभाई - साहिब! वो सुनकर मैं उस रात को बेचैन बन गया था। मरने - मारने की सोच तक पहुंच गया था। परंतु दूसरे दिन भी सुनीत के व्यवहार में कोइ फर्क नहीं देखने से मैं उस बात को भूल जानेवाला ही था। परंतु मुझे क्या पता कि ये रोज का अच्छा दिखता व्यवहार तो छल प्रपंच है। मुझे बहुत बडे आघात में डालने की एक खतरनाक चाल है।

म.सा. - ऐसा क्या हुआ?

मनोजभाई - बात ऐसी है कि मेरा पुत्र उसी डॉक्टर की पुत्री के प्रेम में था। दोनों कॉलेज में सहाध्यायी... प्रेममें लिपट गये... मुझे पुत्र ने बात की। मैंने कहा - तुम्हें जो पसंद आए, वो तुम्हारी रानी। मुझे कोई एतराज नहीं। उसने अपने डॉक्टर ससरे को कहा - मेरे पिताजी तो राजी है। मैं पिताजी की इच्छा बिना आगे नही बढ़ता। किंतु पिताजी सहमत है। मेरे पिताजी मेरे लिए भगवान है। मेरे पिताजी मेरी हर एक योग्य इच्छा पूरी करते ही हैं। मेरे लिए तो पिताजी ही माताजी है, भाई भी है एवं गुरु भी है।

मेरे पुत्र की यह बात सुनकर डॉक्टर हँस पडे। महाराज! यह बात लगभग दो साल पुरानी है। मुझे इसकी खबर दस दिन पहले ही पुत्र और उसकी पत्नी के वार्तालाप से मालुम हुई।

मेरे पुत्रने डॉक्टर को पूछा - आप क्यों हँसे? तब वे डॉक्टर मेरे पुत्र को खुद

की केबिन में ले गया और, गुप्त रूप से मेरे हस्ताक्षर वाला वह पत्र पढाया, जिसमें लिखा था ''पत्नी तो बचनी ही चाहिए।'' याने की बालक मरे तो दिक्कत नहीं!

साहिब! आप समझ सकते हो कि मैंने वह अभिप्राय किस परिस्थिति में लिखा था। परंतु मेरा बेटा मेरा प्यार - भूमिका - संयोग समझ नहीं सका। उसे उसी दिन जोरदार झटका लगा। जिस बाप को भगवान मानता हुं, वो तो शैतान है। वो सांई नहीं कसाई है। पिता नहीं पापी है। मेरी माताने तो मुझे बचाने के लिए खुद के प्राण दिए और ये तो मेरी मौत के लिए तैयार थे। मैं बच गया और आज जवानी में हुँ इसमें बाप का नहीं, मेरे बलवान भाग्य का प्रताप है। साहिब! क्या बात कहुँ? यह एक ही बात से मैंने अब तक दिया हुआ प्यार - बलिदान - वात्सल्य सब कुछ वह भूल गया।

महाराज - परंतु दो साल पहले उसकी ओर से व्यवहार में आये फर्क का आपको ख्याल नहीं आया?

मनोजभाई - नहीं! उसने प्लान किया। पिताजी ने इतने बरस तक प्रेम का नाटक करके वास्तविक बात से मेरी ठगाई की। अब मैं अपने बाप को शीशे में उतारुं। अरे! ये बाप ही कहाँ है? अत: उनके साथ खेल खेलने में कोई पाप नहीं।

दूसरे दिन से वो मेरा ज्यादा विनय करने लगा। मुझे इस तरह बातों में लेते गया और मैं भी प्रेमवश बातों में इस तरह लिपटता गया कि उसने धीरे धीरे मेरी सारी मिलकत, घर सब कुछ खुद के नाम करवा दिया। मैं भी पुत्र और पत्नी के प्रति रहे प्रेम के नाते उसके खेल में फँसता गया। मैं ऐसा ही मानता रहा कि पुत्र मेरा ही है ना! ऐसे भी पूरी मिलकत बाद में भी उसे ही देनी है। तो भले अभी से वो जिम्मेवारी ले। बस, अब वो मुझे संभालेगा और मैं शांति से उसकी सेवा लुंगा और उसके पुत्र वगैरह को संभालुँगा। मैंने कैसी कैसी कल्पना की थी?

म.सा. - तो दस दिन पहले उसको अपनी पत्नी के साथ ऐसी कोई बात करने की वजह क्या थी?

मनोजभाई - बात ऐसी है कि उसकी पत्नी बहुत आजाद है। उसके पिताने उसे बडे लाड में पाली है। उसे स्वतंत्रता के नाम पर स्वछंदता चाहिए। और मैं बुढा आदमी उसमें दिवार बन रहा था। सुनीत ने तो मुझे गूमराह कर निवृत्त ही कर दिया था। घर पर मैं और पुत्रवधु दो व्यक्ति ही रहते थे। पुत्रवधु को छुटछाट मौज मस्ती करने में घर में ही दटा रहा हुआ मैं विघ्नरूप बन रहा था, जो उसे पसंद नही था।

उसमें उसका उद्‌भट वेश देखकर दस दिन पहले ही मैंने टकोर की थी कि, इस तरह के वेश में आप अच्छे नहीं लगते। वो मन में जल गई, तब तो कुछ बोली

नहीं। परंतु रात को सुनीत के कान में जहर डाला - आपके पिता की नजर बराबर नहीं लगती। मुझे डर लगता है। पत्नी को मरे बरसों बीत गये। उस वजह से बाकी रही कामवासना मुझे देखकर भडकने लगी है। मुझे डर है, मेरे पर बलात्कार करेंगे। आप तो काम धंधे पर निकल जाते हो। पूरा दिन मुझे फडफडाट रहती है। ससुर और पुत्रवधु पूरा दिन घर में अकेले रहते हैं वो व्यवहार में भी अच्छा नहीं लगता। लोग गलत कल्पना कर रहे हैं। या तो हम पिता से अलग हो जाते हैं, या तो मैं मैके चली जाऊँ।

तब सुनीत ने उसे कहा - ऐसे तो ये बाप होने पर भी बाप नहीं है, घर का पाप है। मैं उसे घर से निकालने के प्लानींग में ही हुं। मैनें सब कुछ मेरे नाम पर कर लिया है। अब उनके दिन की गिनती हो रही है।... वृद्धाश्रम में ही भेजना है।

तब उसकी पत्नी ने आनंद और आश्चर्य से पूछा - आपको क्यों इतनी नफरत है? तब सुनीतने ससुर डॉक्टर के साथ हुई सभी बातें बताते हुए कहा - इस दुर्जन को मैं जिंदा रहुँ उसमें जरा भी रस नहीं था। वो तो पत्नी मर गई तो समाज में अच्छा दिखाने हेतु मुझे पाला है। मैं भोला उन्हें भगवान मानता था। ये तो अच्छा हुआ कि तुम्हारे पिताने सत्य हकीकत बतायी।

इतना बोलते ही फिर से मनोजभाई की आँखे छलकने लगी। साहिब! सच कहुँ, मैंने मेरी जिंदगी में किसी को भी नुकसानी में उतारने का काम किया नहीं है। किसी का कुछ भी बिगाडा भी नहीं। फिर भी यह पुत्र मेरी उस वक्त की वास्तविक परिस्थिति को बिना समझे मेरे पर अन्याय कर रहा है। मुझे बाप के बदले पाप मान रहा है। और उस डॉक्टर ने भी कैसा घोर विश्वासघात किया? क्या वह पत्र इस तरह बता सकता है? और उस वक्त की मेरी सही परिस्थिति से क्यों वाकिफ नहीं किया।

साहिब! मैंने किसी का कुछ नहीं बिगाडा, फिर भी यह डॉक्टर मेरे पुत्र को गलत विचारधारा में चढा रहा हैं। मेरा पुत्र मेरे इतने साल के प्यार को - मेहनत को एक झटके में तोडकर मेरी मिलकत हडपकर मुझे घर से निकालने के लिए तैयार हो गया है। और पुत्रवधु मेरे चरित्र पर भयंकर दाग लगे ऐसा आक्षेप कर रही है। महाराज! क्या दुनिया में सज्जनता मर गई है? क्या अच्छा करने का बदला ऐसा मिलता है? क्या धर्म कर्म कुछ भी नहीं?

अपनी पत्नी के साथ ऐसी बात करने के बाद मेरा वह पुत्र दूसरे दिन से बाहर से सौम्य व्यवहार करता रहा और बाहर जाकर मुझे वृद्धाश्रम में धकेलने का आयोजन करने लगा। आज सवेरे ही उसने धडाका किया है। मुजे बाप कहने की बजाय - ए बुढा! सुन ले! दस बजे तुम्हें वृद्धाश्रम में भर्ती होना है। और फिर मुझे जो खरीखोटी

सुनायी, पेट में रहा हुआ पूरा जहर बाहर निकाल दिया। मैं खुलासा करने गया, किन्तु... वो मेरी एक बात भी सुनने को तैयार नहीं है। साहिब! जिसे मैं मेरी पत्नी का अंश मानकर प्यार करता था, वह मुझे गालियाँ दे कर दर्द देने बैठा है। महाराज! मुझे जवाब दीजिए - मेरा क्या गुनाह है? मेरा कौन सा अपराध? मुझे किस बात का यह दंड? मेरे बुढापे में मुझे किस का शाप परेशान कर रहा है?

मनोजभाई फिर से फूट फूटकर रोने लगे। महाराज साहिब की आँखें भी सजल हो गई। संसार की डरावनी कथा की व्यथा चेहरे पर अंकित हो गई। संसार घोर अपार है, इस बात का साक्षात्कार हुआ। प्रभुने जो कहा है कि ''संसार ऐसा ही होता है, यहाँ ऐसी विचित्रता - विडंबना होनी सहज है। संसार कभी अच्छा था ही नही, और जो अच्छा दिखता है, वो मात्र भ्रमणा है। पूर्वकृत अल्प पुण्य का क्षणिक चमकारा है। किन्तु आखिर में तो मायाजाल ही है। संसार, जीवरूपी मछली को दु:ख की परंपरा में फँसाने के लिए मच्छीमार की जाल ही है।'' वे बात ऐसे नजर के सामने साक्षात् देखकर साधु महाराज का वैराग्य तो विशेष दृढ ही हुआ।

उन्होंने मनोजभाई से कहा - मनोजभाई! अलबत् जो हुआ - हो रहा है, वो अच्छा ही हो रहा है ऐसा तो नही कह सकते, किंतु फिर भी उसमें यदि अच्छा देखना है, तो यह देख सकेंगे कि, ऐसे भी जब तुम्हारे पुत्र-पुत्रवधु गलतफहमी - मान्यता के शिकार बन ही गए हैं, तब उनके साथ रहने से रोज, बार-बार उनकी ओर से आपको दु:ख - अपमान त्रास ही मिलेंगे। आप वृद्धाश्रम में जाने मात्र से इन सब से छुटकारा पाओगे। जिसके मनमें प्रेम नही, उसके साथ एक घर में रहने में मजा भी नही है। आपने पुत्र के लिये जो किया, उसमें पिता का कर्तव्य सफलता से अदा किया है, अत: कुदरत तुम्हें अपराधी नही मानती, एवं आपकी पत्नी ने आपको जो प्यार दिया था, उसके बदले में उसके अंशरूप पुत्र को आपने प्रेम दिया। अत: आपकी तरफ से आप कुछ भी नुकसानी में नही हो। यदि आपने पुत्र को जायदाद देने के पहले उसका व्यवहार अनुचित हो जाता, तो आप उसे जायदाद नहीं देते। तब उसे कहने का मौका मिलता कि, बापने पुत्र को उसके अधिकार से वंचित रखा। अब तो यह भी कहने का अवसर उसे नही है।

वो जिस बात को लेकर आप पर खफा हुआ है, उस बात को कोई भी विवेकी पुरुष सहमति नही देंगे। अत: आप कुछ भी मन पर मत लो, आप तो इस बात से खुश रहो कि मेरी तरफ से कोई अनुचित व्यवहार हुआ नही है। मेरी चादर तो स्वच्छ है। मेरी बाजु तो साफ है। मरते वक्त भी आपको इस बात का गम नही रहेगा कि, मेरे कारण कोई दु:खी हुआ। वैसे तो पूर्व के कर्म एवं ऋणानुबंध इस भव में अलग

अलग स्वरूप में प्रगट होने के कारण ही संसार - संसार के संबंध विचित्र - भयंकर - अंत में खराब होने वाले होते हैं।

ऐसे एक तरफ से बिल्कुल उजला और फिर दूसरी तरफ से अत्यंत विचित्र व्यवहार होना यही बात कर्म की थियरी पर श्रद्धा दृढ कराती है। इसमें हम पूर्व के कर्म को छोडकर दूसरे किसकी भूल निकाल सकते हैं? पुत्र और पुत्रवधु धन्यवाद पात्र हैं कि जो आपको कर्म थियरी पर श्रद्धा करने प्रेरित कर रहे हैं। संसार की भयंकरता समझाकर अनुराग में से वैराग्य की तरफ ले जा रहे हैं। पूर्वभव के कडवे हिसाब चुकता कराकर आपकी उधार बाजु को कम कर रहे हैं।

मनोजभाई! मेरी आपको सलाह है, आप प्रभुपूजा - दर्शन करके जाना! प्रभु के आगे प्रार्थना करना - ''हे दीनानाथ! मैंने आज तक किसी का बुरा सोचा भी नही, तो मेरे पुत्र-पुत्रवधु के लिए भी मुझे ऐसे बुरे विचार न आए ऐसी शक्ति दो! उनका भी अच्छा ही हो ऐसी भावना मेरे मन में उठे ऐसा अनुग्रह करो। वृद्धाश्रम में जाने के बाद भी हे नाथ! आपके पूजा-दर्शन का अवसर मिले ऐसे संयोग प्राप्त हो ऐसी करुणा करना।''

प्रभु को कहना - हे देवाधिदेव! जो आज तक किसी के हुए नही, उनको मैंने अपने मानकर आजतक बडी गलती की है। और जो हमेशा सबके हैं, ऐसे आपको ही मैं भूल गया था। अब आप का कभी विस्मरण न हो ऐसी करुणा बरसाना और रोज तेरे दर्शन हो ऐसी कृपा करना....!

शक्य हो, तो सामायिक करना और उसमें सद्वांचन जितना हो उतना करना। अब घर की जंजाल में से अनिच्छा से भी मुक्ति मिल रही है, तो यह गोल्डन चान्स है, परलोक जानेवाली आत्मा के कल्याण के लिए हो उतना कर लेने के लिए। इस विषय में अब आपको कोई रोकने-टोकने वाला नही है। रोज एक हजार बार नवकार गिनने का संकल्प रखना। वासक्षेप लीजिए। मेरे आशीर्वाद आप के साथ हैं। 'जो अच्छे हैं, अच्छा करने वाले हैं, उनका अंत में सब अच्छा ही होता है', इस बात पर अटल श्रद्धा रखना।

मनोजभाई उठने का मन नहीं होने पर भी उठे... वासक्षेप लेकर भारी पैर रवाना हो गए। म.सा. ने भी संसार की विचित्रता से थरथराहट का अनुभव किया। रे मोहनीय कर्म! तू जीव की किस किस तरह से कैसी कैसी विडंबना कर रहा है? अब तक तू थका ही नही। तुम्हें जरा भी दया नही।

तकरीबन छह महिने के बाद उसी शहर के दूसरे इलाके में म.सा. उपाश्रय में बिराजमान थे और वहीं मनोजभाई उनको वंदन करने आये। वे स्वस्थ दिख रहे थे,

उनको देखकर म.सा. को आश्चर्य हुआ। उनकी स्वस्थता देखकर म.सा. को लगा कि वृद्धाश्रम में सेट हो गए हैं। दु:ख की दवाई समय... अब पुराना दु:ख भूल गए लगते हैं.. जहर को पचा गए।

मनोजभाई ने वंदन करके कहा - साहिब! कुदरत सच में कैसा कैसा नाच नचाती है? भगवान भी बैठे बैठे अच्छे खेल कर रहे हैं ! संसार के नाटक में मोड भी गजब के आते हैं। किन्तु आप की वो बात सच है कि अच्छे आदमी का अंत में अच्छा ही होता है।

महाराजने पूछा - क्या हुआ? पुत्र की मति वापस बदल गयी? पुत्रवधु सही रास्ते आ गई? डॉक्टर की अक्ल ठिकाने आ गई?

मनोजभाई - उन सबकी बातें छोडो! उन के सभी संबंध पूरे हो गए। उन संबंधो का अग्नि संस्कार हो गया और भस्म भी हवा में मिल गयी। पुत्र कपुत्र हुआ। जो अपना था वो पराया हो गया, तो जो पराया था, वो अपना हुआ। भगवान ने मेरे लिए दूसरा तैयार बेटा भेज दिया! मेरी पत्नी ने देवलोक से भी मेरी चिंता की।

म.सा. - हकीकत में क्या हुआ? बात स्पष्ट कहो।

मनोजभाई - मेरी पत्नी के देहांत के बाद, सुनीत को देखकर मुझे विचार आया - यह बेचारा जन्म के साथ ही बिना माँ का हुआ। तो जिन्होंने जन्म के साथ ही माँ - बाप को कोई भी कारण से गँवा दिए हैं, ऐसे अनाथ बालकों की क्या हालात होती होगी? उनको प्यार देने वाला कौन? उनका अपना कौन? उनकी इच्छा कौन पूरी करेगा ? उनके भविष्य का क्या?

बस इस विचार से प्रेरित हुआ मैं अनाथाश्रम में गया। वहाँ रहने वाले अनाथ बालकों को देखा। उनसे मिला। बस, इच्छा हो गई, उनके लिए कुछ करुं। फिर तो मैं हर हफ्ते अनाथाश्रम में कुछ ना कुछ भेजने लगा। कभी खिलौने, कभी कपडे, कभी मिठाईयाँ। उनमें एक पाँच साल का लडका स्मार्ट था। अनाथाश्रम के संचालक ने भी उसकी प्रशंसा की, सिफारिश की... आपके जैसा कोई उदार मनवाला आदमी यदि इसके पढाई का भार उठा ले, तो यह बहुत आगे बढ सके ऐसा है।

मैं उसको मिला। मैंने उसका नाम **मुकेश** रखा। उसको देखते ही मेरे मन में भी उसके लिए भाव प्रगटे। मैंने उसे कहा - देख बेटा! मैं तेरा पिताजी हुं ऐसा मान ले... तुझे मेरे घर नहीं ले जा सकता, क्योंकि घर में भी कोई संभालने वाला नही है। परंतु तू यदि होशियारी से पढना चाहता हो, तो तेरी पढाई का खर्च मेरा। वो पाँच साल का था, पर समझदार था। वो मेरी भावना समझ गया। साहिब! मैं उसे बार-बार मिलकर उत्साहित करता रहा। वो मेरी भावना को समझकर पढाई में ज्यादा

ध्यान देता था। ऐसे करते करते दसवीं में बहुत अच्छे गुणांक से उत्तीर्ण हुआ। फिर तो अनाथाश्रम से निकलकर बडे शहर में आगे की पढाई के लिए गया। सरकार की तरफ से भी उसे अच्छी मदद मिली। मेरा आशीर्वाद लेकर गया था। अलबत् फिर तो कोई संपर्क रहा नही। मैं उस बात को भूल गया।

आपके पास से जाने के बाद मुझे उस कपुत ने तो वृद्धाश्रम में प्रवेश करवा ही दिया। आपके सूचन मुताबिक प्रभु दर्शन-पूजा करके वहाँ गया तो सही... जाप वांचन में मन लगाने का प्रयत्न भी करता था। रोज प्रभुप्रार्थना भी करता था। परंतु मन उस सदमे को पचा नही सकता था। बार बार भूतकाल याद आता और मन हताश हो जाता था। उसमें एटेक आ गया। संचालकों ने मुझे सरकारी अस्पताल में भर्ती कर सुनीत को फोन किया। उसने तो कह दिया - अग्नि संस्कार होने के बाद भी मुझे समाचार नही करोगे तो आपका आभारी रहुंगा।

संचालक वर्ग उलझन में फंस गया - अब अस्पताल का बील वगैरेह का क्या करेंगे? भले ही सरकारी जनरल वोर्ड के हिसाब से खर्च बहोत कम आता है। परंतु आता तो है हि...। एटेक से बीमार मेरे आगे पुत्र की बात करनी भी कैसे? परंतु देखो कुदरत की करामात! ऋणानुबंध की कमाल! प्रभु की कृपा! अच्छे होने का चमत्कार! आपके आशीर्वाद का प्रभाव!

वो एक वक्त का अनाथ बालक बडा हार्ट स्पेशियालीस्ट बन गया था। वो अपने पूर्व काल को याद करके इस जनरल अस्पताल में खास ओनररी सेवा भी देता था। मेरा केस उसके पास ही आया। मेरा नाम पढा, तहकीकात की। फिर मेरी फाईवस्टार अस्पताल में जैसी संभाल हो ऐसी व्यवस्था की, अस्पताल का बील भी खुद ने भरा और फिर स्वास्थ्य सुधरने पर मुझे पूछा - अब कहाँ जाओंगे? ऐसा पूछकर उस डॉक्टरने मेरे पुत्रने संचालक को कही हुई बात बताई। फिर पूछा, बोलो, बेटे के घर जाना है? वृद्धाश्रम में जाना है या अन्य कहीं?

बात सुनते ही फिर वही सदमे का अनुभव करते हुए मैंने कहा - अब कहाँ जाना? या तो वृद्धाश्रम में या तो जल्दी अग्निसंस्कार हो ऐसी कोई जगह।

वो हँस पडा। खुद का परिचय दिया। मेरे पैरो में गिरकर मुझे कहा - आप अपने दूसरे बेटे को भूल ही गए ना! मैं आपका ही पुत्र हुँ! आपके उपकार का वर्णन मैं नहीं कर सकता, उसके जरिये तो मैं आज डॉक्टर बना हुँ। चलो मेरे घर। मेरी पत्नी भी आपको ससुरजी नही, बल्कि पिता मानकर सत्कारने को तैयार है। आपकी मन से सेवा करना चाहती है। क्या आप अनाथ के घर आओंगे?

मैं यह सुनते ही रो पडा। मैंने कहा - बेटा! तू नही, मैं इस उम्र में अनाथ था,

परंतु तू... तू मेरा बेटा... मैं कुछ बोल नही सका। वो मुझे अपने घर ले गया। मुझे सभी सुविधाएँ दी हैं। दोनों मुझे परम उपकारी पिता मानकर फूल की तरह रखते हैं। उसकी पत्नी भी मेरा बहुत ध्यान रखती है। मैंने भूतकाल की सभी बातें उसको बतायी। किंतु वह समझदार था, उसने मुझे कहा - पप्पा! सब कुछ भूल जाओ। सुनीत पर भी द्वेष मत रखो। उसका ही उपकार है कि उसी के कारण ही मुझे तीस साल बाद पिता मिले। जन्म से ही अनाथ मैं अब पिता वाला बना।

साहिब! क्या बात करुँ? वो अनाथाश्रम के संस्कार के कारण ही ख्रीस्ती होने के बावजुद मुझे जैनधर्म पालने में सारी अनुकूलताएँ करवा देता है। नोनवेज खाना तो बंद कर दिया है। घर में जमीनकंद भी नही लाता। भगवान ने मुझे दूसरा बेटा नही, सच्चा बेटा दिया। आज मैं बहुत स्वस्थ हुं। मस्त हुँ।

म.सा. - सुनीत को ये सब पता हैं? उसका जीवन कैसे चल रहा है?

मनोजभाई - साहिब! किसलिए आप मीठी बदाम में कडवी बदाम चबाने देते हो? उसे पता है या नही, उसकी मुझे खबर नही है। वो क्या करता है, वो जानकर मैं क्यो अपना दिल जलाऊँ? और उसे तो मेरे अग्निसंस्कार के भी समाचार नहीं चाहिए, तो बताने से क्या सार निकलेगा? बस मैं आनंद में हुँ। रोज मुकेश अथवा उसकी पत्नी मुझे कार में मंदिर ले जाते हैं। वहाँ अष्ट प्रकारी पूजा करता हुं, फिर प्रवचन, सामायिक जाप, वांचन भी होता है। इस नए परिवार के साथ आनंद में समय कहाँ जा रहा है, पता भी नही चलता।

म.सा. : आप स्वस्थ हो वो अच्छी बात है, किया हुआ सुकृत निष्फल नही जाता। उसमें भी खास करके निस्वार्थ भाव से किया हुआ सुकृत तो श्रेष्ठ फल देने वाला ही होता है ऐसा जिनवचन आपके प्रसंग से श्रद्धेय बना है।

ऋणानुबंध का खेल ऐसे तो भवपरंपरा में चलता है। और उसमें जो कोई तप वगैरह करके निदान कर दे, तो निदान करनेवाला बहुत भवों तक निकट का सगा बनकर तकलीफ कर सकता है।

ये बात आपको इसलिए कर रहा हुँ - कि, यदि आपको सुनीत के साथ अनुचित - दु:खद वैरभाव से भरा ऋणानुबंध भवपरंपरा में चलाना नही हो, तो आपको उसके साथ मनपूर्वक क्षमापना कर लेनी चाहिए। बेशक, मैं भी समझता हुँ कि, वो ऐसी क्षमापना के मूड में नही है। फिर भी आप अपनी तरफ से अंशमात्र भी दुर्भाव हो तो वो निकाल दीजिए।

अच्छा व्यवहार करते बेटे को अच्छा मानना यह सामान्य बात है, लेकिन खराब व्यवहार करते बेटे को भी अच्छा ही मानना ये विशेष है। आपको आपकी

पत्नी पर बहुत प्रेम था, तो उस प्रेम को दी हुई सच्ची श्रद्धांजली भी यही है कि उन्होंने सोंपा हुआ - उनका और आपका अंशभूत बेटे को बेटा ही मानना।

मैं आपको ऐसा नही कहता कि आप उसके साथ वापस संबंध का हाथ बढाओ... आपकी बात से मैं मान सकता हुँ कि उसे ऐसा संबंध रखना पसंद नहीं आयेगा। फिर भी आप अपने मनसे उसे बेटा ही मानो। झुठी मान्यता का शिकार बना - भटका हुआ, लेकिन वो आपका ही है।

मनोभजभाई - साहिब! सच में मैं मन को मनाने की कोशिश करुंगा।

- 'दूसरा कोई अपना गुनहगार नही है... अपना सही अपराधी है, अपने कर्म... भूतकाल में हमनें ही किये हुए गलत काम'... इस मंत्र का जाप करने से खुब शाता-शांति-स्वस्थता-प्रसन्नता का अनुभव होगा। पूरे दिन में जब मन फ्री हो, तब यह जाप चालु कर देना।
- दूसरों को उनका फर्ज याद कराने से पहले मनोमन उसको अच्छा-मेरा-कामका (निकम्मा नहीं) मानने का प्रभु ने खुद को सोंपा हुआ फर्ज याद कर लेना।
- अपनी आज, अपने कल के लिए बीज है, वो बीज सबके प्रति प्रेम रूप गन्ने का होगा, तो कल सब के सद्भाव का मीठा रस मिलेगा। अगर द्वेष - दुर्भाव - ईर्ष्या रूपी करेले का होगा, तो कल सब जगह से तिरस्कार अपमान का कडवा रस मिलेगा।

वंश परंपरा की लकीर

उपाश्रय में जैन महाराज साहिब के पास एक युवक अपने मित्र के साथ आया। युवक का नाम था मंथन और उसके मित्र का नाम था सुकेतु...

मंथन ने वंदन करके म.सा. को कहा - हम दोनों खास मित्र हैं और बिझनेस पार्टनर भी। मेरे पारिवारिक बाबत में मुझे क्या करना चाहिए उसके लिए मेरा इसके साथ मतभेद खडा हुआ है। इसके कहे अनुसार मैं आपकी सलाह लेने आया हुं। वैसे तो मुझे पता है कि, आप इसी का पक्ष लेंगे, फिर भी एक बार मेरी पूर्वभूमिका सुनने के बाद आपको सलाह देने की विनती है।

महाराज - तुम्हारी सब बातें सुनकर ही अभिप्राय दूंगा। मगर तुमने तो मैं क्या सलाह दूँगा इसका निर्णय मुझे कुछ बताये बिना ही कर लिया है। खेर! कहो तुम्हारी बात।

मंथन - मेरे दादाजी उनके पिता के एकमात्र संतान - वारिस थे। मेरे पिताजी मेरे दादाजी के एकमात्र वारिस। परंतु अगली पीढी में यहाँ गडबड हो गई।

महाराज - मतलब कि तुम्हारे विषय में..?

मंथन - हाँ। ऐसे तो मेरे दादा ने एक ही धारणा रखी थी कि, घर में एक ही पुत्र चाहिए, जिससे विरासत के विषय में क्लेश - कलह न होगा। भाई, भाई नही, भय है। पर मनुष्य कि धारणा को कुदरत का सहारा मिलेगा ही ऐसा कोई नियम नही होता। हुआ ऐसा कि मेरी मम्मीने जुडवॉ बच्चों को जन्म दिया। वे भी दोनों पुत्र। बडा मनन और मैं उससे मात्र चार- पाँच मिनट छोटा मंथन।

महाराज - दोनों के बीच मात्र पाँच मिनट का ही फर्क?

मंथन - हाँ! पर इस फर्क से मेरे जीवन में बहुत-सी कडवाहट - उथल - पुथल हुई। हम मारवाडी हैं। कर्णाटक में हमारा परिवार रहता है। मुंबई के प्रभाव से मैं गुजराती अच्छी तरह से बोल सकता हुँ।

महाराज - पाँच मिनट के फरक में तुम्हें कौन से कडवे अनुभव हुए?

मंथन - मेरे दादाजी की अपेक्षा तो एक ही पुत्र की थी, क्योंकि यह परंपरा थी। पर हम दो पैदा हुए, यह परिस्थिति उनकी कल्पना से पर थी। पर मेरी दादी बहुत

जबरी थी। घर में उनकी धारणा के मुताबिक ही होता था। दादाजी उन की बात को कभी टालते नहीं थे। और दादा के हुकम के आगे मेरे पापा-मम्मी विवश थे। मेरे पापा दादा के इकलौते पुत्र होने पर भी खुब दबे हुये थे। उनका काम दुकान संभालने का। घर में उनका कुछ उपजता नहीं।

हमारे जन्म के बाद दादा-दादी, मम्मी-पापा बैठकर भविष्य की चर्चा कर रहे थे। दादा ने कहा - भविष्य में हमारी जायदाद के लिए इन दोनों में खटपट न हो इसलिए अभी से सोचकर पक्का कर लेना है कि वारिस कौन? एक ही पुत्र होता तो प्रश्न नही था, पर यहाँ तो जुडवॉ आये। मेरे पापाने मजाक में कहा - एक के साथ एक फ्री - कुदरत ने भी स्कीम रखी है।

मेरी दादी ने यह बात पकड ली - बराबर! एक के साथ एक मुफ्त... जो पाँच मिनट पहले जन्मा वह बडा। और जब दो पुत्र होते हैं, तब बडा ही वारिस माना जाता है। पूर्व के राजाओ में भी यही न्याय चलता था। दादा ने हाँ में हाँ मिलाई और कहा- बराबर है। बैंक में भी पिता रिटायर्ड होने पर नौकरी का अधिकार बडे बेटे को ही मिलता है।

मेरी मम्मी ने कहा - किन्तु जैसे पेटी में अंत में रखी चीज पहले बाहर आती है, उसी तरह मनन गर्भ में बाद में आया होगा और मंथन पहले, तो गर्भाधान की अपेक्षा से तो मंथन बडा हुआ।

दादी माँ ने कहा - गर्भाधान की बात में सही निर्णय शक्य नहीं है। और व्यवहार में तो जन्म की अपेक्षा जो बडा है, वो ही बडा गिना जायेगा। अत: मनन ही मुख्य है। वही अधिकारी है। मंथन तो फ्री में मिला ऐसा गिना जायेगा। मनन कीमती, मंथन उपर से मिला हुआ। सब्जी के साथ उपर से ली दो मिर्ची की तरह... मनन को वधाने का और मंथन को निभाने का। हमारे घर आया है तो उस को कोई बाहर तो निकाल नही सकता। पर उसका अधिकार हम उसे निभायेंगे इतना ही। वैसे सच्चा हक तो बडे मनन का ही।

दादा ने कहा - बात बराबर है। मंथन को भी पढायेंगे, पालेंगे। पर उसे वारिस के रूप में कोई हक नही मिलेगा। बस अब यह बात यहीं पूरी हो गई।

जब मैं कुछ समझ पाऊँ इतना बडा हुआ, तब मेरी मम्मी ने मुझे उपरोक्त बात बता कर कहा - तुम्हारे पप्पा को यह भेदभाव बिल्कुल पसंद नही आया। और मुझे तो मेरी दो आंख - दो रत्न जैसे तुम दोनों में ऐसा भेद करना जरा भी रास नहीं आया। मैंने तेरे पापा के आगे उस रात को मेरे मन में जो था, वह सब कह दिया। पर मैं जानती हुं कि तेरे पापा का तेरे दादा-दादी के आगे कुछ चलने वाला नही है।

साहिब! बस उसी दिन से मैं मेरे ही घर में माँ - बाप, दादा-दादी की दया से पलने वाला अनाथ बालक बन गया। साहिब! घर में क्लेश मिटाने के लिए मेरे हक का बलिदान लिया गया।

महाराज - दुनिया की ऐसी ही रसम है। पति को भोजन अप टू डेट चाहिए, उसमें भले ही पत्नी पूरी तरह से थक जाये। सेठ को लाभ तगडा चाहिए, उसके लिए नौकरो के समय, शक्ति, फीलींग्स का भोग लिया जाता है। वह पति मर्द कहलाता है, जो पत्नी पर रौब जमाता है, और वह सेठ चतुर माना जाता है, जो मुनाफा बढने पर नौकर के लिए अच्छा टेबल बनवाता है ताकि वह और अच्छी तरह से काम कर सके और खुद के लिए कार लाए।

आपके घर में आज तक एक ही पुरा हकदार था। पर मनन का इतना पुण्य नहीं होने से तुम्हारा उसके भागीदार के रूप में जन्म हुआ। पर दुनिया में क्या होना चाहिए यह मात्र विचारने का विषय है, हकीकत तो जो बडे-सत्ताधीश हैं, उनकी इच्छा पर ही निर्भर है। ऐसे तो इसका अंतिम आधार तो पुण्य-पाप और ऋणानुबंध पर ही है।

म.सा. भी संसार के नाटक, विरासत और वारिस के लिए लडाई इन सब बातों से स्तब्ध हो गये। एक ही माँ- बाप के खुन में भी ऐसा फर्क! बेटा-बेटी हो और फर्क रखे, तो यह सुनी बात है। पर दोनों बेटे हो और फर्क रखना - भेद रखना... यह संतान प्रेम स्नेह का प्रवाह नही है, परंतु 'पिता का नाम रखने के लिए वारिस है', इस मोह से बना हुआ संबंध है!

मंथन ने कहा - साहिब! बस जन्म से ही मैं छट्ठी अंगूली जैसा माना गया हुं। दादा-दादी की गोद में बैठने का, उनका प्रेम पाने का हक मेरा नही रहा, मैं रोता तो मुझे शांत भी दादा-दादी नही करते। मनन जरा भी रोने जैसा हो जाए, तो दादा-दादी उसे लाड करके खुश कर देते। मेरे लिए अपने आप ही शांत होने का भाग्य था। अथवा मम्मी उठा लेती।

महाराज - आखिर मम्मी तो आपको संभालती होगी ना...

मंथन - साहिब! यही मेरा भाग्य! दुर्भाग्य में छुपा हुआ यही सौभाग्य कि दादा-दादी के व्यवहार की वजह से ही मम्मी को मेरे पर विशेष पक्षपात हुआ, क्योंकि मुझे दादा-दादी का प्रेम नही मिलता, अत: मम्मी ही मेरा संभाल लेती थी। अलबत्ता, उसे घर के काम से समय कम मिलता था, फिर भी मुझे उसका विशेष प्रेम मिलता था।

वैसे तो घर में ही मैं पराया हो गया। मनन को नये कपडे मिलते, उसके

नापसंद कपडे मैं पहनता। उसने फेंक दिये खिलौने से मुझे खेलना। मुझे कभी कभी नये मिलते, परंतु कोई भी चीज की इच्छा या 'यही चाहिए' ऐसा निर्णय करने का अधिकार तो मनन का ही था। स्कुल में भी मुझे अनेक बार उसका बस्ता भी उठाना पडता, वो तो लाटसा'ब था।

मेरी क्लास टीचर ने एक बार मेरे डब्बे में से मनन को नाश्ता लेते देखा... सब छानबीन की... फिर हम दोनों की क्लास अलग अलग कर दी।

मनन होशियार था। पर लाड - प्यार के कारण पढने का लक्ष्य कम हो गया। मुझे नंबर ज्यादा आते तो दादा-दादी मेरी तारीफ करते थे। बस मुझे इतने में ही खुशी मनाने की। तारीफ भले ही मेरी करे, फिर भी प्रेम तो उसे ही मिलता था। बारहवीं कक्षा में मुझे बहुत अच्छे नंबर आये। उसे ठीक-ठीक...

उस वक्त दादा-दादीने मुझसे कहा - देख मंथन! वंश परंपरा की सीधी लकीर में मनन आता है। अत: वारिस तो मनन ही है, तू उस सीधी लकीर में नहीं है। अत: तू वारिस नहीं। हमें तेरे पर द्वेष नहीं है, यदि तूने पांच मिनट पहले जन्म लिया होता, तो पूरा हक तुम्हारा होता। पर कुदरत - कर्म को यह मंजूर नहीं था। तेरा दुर्भाग्य होगा, इसलिए तेरा जन्म बाद में हुआ। अत: व्यवहार से मनन ही बडा माना जाता है और अपने कुटुंब में दो पुत्र होने पर बडे को ही अधिकार मिलता है। अत: मनन खास नही पढेगा तो भी चलेगा। दुकान का वारिस वो ही है। वह दुकान संभालेगा। तू होशियार भी है। अत: अच्छा पढकर, डिग्री लेकर तुम्हें जो करना है कर सकता है। तुम्हें डिग्री मिले तब तक तो खर्च हम उठायेंगे। किन्तु बाद में तेरा अधिकार दुकान वगैरह कोई भी जायदाद पर नहीं रहेगा। जिससे भविष्य में ऐसी अपेक्षा रख कर घर में क्लेश - कलह मत करना। हम अब तुम्हारी आगे की पढाई के लिए तीन लाख रुपये खर्च करेंगे। शेष तू समझ लेना। किन्तु उसके बदले में तुम्हें यह समझ लेना है कि घर या दुकान में तुम्हारा कोई भाग रहता नही।

मेरे मम्मी-पप्पा दादा-दादी को समझाने गये, पर उन्होंने मम्मी पप्पा को चूप कर दिया। भविष्य में क्लेश न हो, उसके लिए बाढ आने से पहले बाँध बना देने के नाम से दादा-दादी ने जजमेंट दे दिया। मैं मुफ्त का था - एक्स्ट्रा था। मुझे निभाने में आया था। मुझे अन्याय के बारे में बोलने का अधिकार भी नही था।

ऐसे भी मैं दादा-दादी के सौतेले व्यवहार से और पप्पा की विवशता भरी उपेक्षा से दुखी था, इसमें ये सब बातें सुनकर मुझे बहुत गुस्सा आया। पर मम्मी ने उस वक्त इशारे से समझाया और बाद में एकांत में कहा -

देख बेटा! मेरी इच्छा दीक्षा लेने की थी। पर मेरे मम्मी - पप्पा ने इजाजत

नही दी और शादी हो गई। उस वक्त कर्मग्रंथ पढी हुयी थी। जिससे ऐसा सब होता देख कर भी ''आखिर तो सब कर्म ही करता है'' ऐसा सोच कर स्वस्थ रहती हुँ। तुमने पूर्वभव में शायद अपने भाई के साथ अन्याय पूर्ण व्यवहार किया होगा जो तुम्हारे दादा-दादी को पसंद नहीं आया होगा। उसमें कुछ ना होने वाली घटना तेरे से हो गयी होगी, जिससे आज तू अपने ही घर में अनाथ हो गया ऐसा अनुभव कर रहा है। किन्तु आवेश में आने से कुछ लाभ नहीं। मेरी सलाह है, तू शांत रहना। शायद भविष्य में तेरा भाग्य खुलने का अवसर आ जाए। मात्र पुण्य से पाने वाला खास आगे नही बढता, जो आगे बढे हैं, वे केवल अपने पुरुषार्थ के बल पर ही आगे बढे हैं।

सच कहुँ तो मुझे मनन पर प्रेम होते हुए भी उसकी दया आती है। दादा-दादीने खुब लाड दे कर उसके विकास को रोक दिया है। वो ऐसा सुखशील और दादा-दादी को पराधीन हो गया है कि, अब उसमें साहस करने की हिम्मत नही, उसमें कष्ट सहन करने का सत्त्व नही, स्वतंत्र योग्य निर्णय करने की क्षमता नहीं।

तू मुंबई जा, वहाँ पढाई कर। वहीं तू अपनी हिम्मत पर, खुद की बुद्धि से कोई रास्ता निकाल। इतना समझ ले, मनन यहाँ दुकानरूपी पिंजरे में कैद पंछी बन जाएगा और तुझे विचरण के लिए मुक्त आकाश मिल रहा है। मुझे तेरे पर विश्वास है और मनन पर दया। तुझे यहाँ से कुछ नही मिलेगा, ऐसा सोचकर दिल छोटा मत कर। मनन को भले ही विरासत मिलेगी, पर उसके सामने वह किंमत चुका रहा है अपने भविष्य को इस दुकान में सीमित करने के रूप में। तू देख रहा है कि मनन मेरे कहने में नही है, मेरी परवाह भी नही करता। मैं माता होते हुए भी मेरे पर प्रेम नही है क्योंकि उसको सब कुछ दादा-दादी की तरफ से मिल जाता है।

मेरी माता ने मेरे सर पर वात्सल्य से हाथ फिराया। मैं मुंबई आया। कॉम्प्युटर इंजीनियर बना। तबसे यह मेरा खास मित्र बना। हम साथ में पढे और एक बडी मल्टीनेशनल कंपनी में साथ में काम भी किया।

सुकेतु - साहिब! पढाई में मैं होशियार था, पर इस मंथन जितना ब्रीलियन्ट नही। इसका बहुत साथ मिला। इसीसे मुझे डिग्री मिली।

मंथन - ऐसा कुछ खास नही! हम दोनों ने दो वर्ष नौकरी की, बाद में इस सुकेतु ने ही मुझे कहा - दोस्त! इस मल्टीनेशन कंपनी में हम तुच्छ मच्छर हैं। इस जायन्ट मशीन के हम छोटे से पार्ट हैं। आकर्षक लगते वेतन के पेकेज के बदले में हमारी बुद्धि - शक्ति - समय सब कंपनी चूस लेती है। इसमें हमारा कोई भला (फायदा) नही होगा। नौकरी तो नो करी... अगर तू साथ देता है, तो हम अपनी स्वतंत्र आफिस खोल दे। कम्प्युटर - स्पेरपार्टस, सर्वीसिंग वगैरह काम करेंगे। मेरे

पप्पा पैसे देने को तैयार है।

हम दोनों ने स्वतंत्र आफिस खोली। साहिब! सुकेतु बहुत ही सज्जन मित्र है। मैंने घर छोडा तो दुनिया देखने को मिली। ऐसा अच्छा सज्जन मित्र मिला। शुरुआत में पूरे पैसे उसने ही लगाये। मुझे तो घर से फुटी कोडी भी नही मिली थी। मैंने पप्पा को आफिस खोलने की बात कही और पूछा - क्या पैसों का कुछ बन्दोबस्त हो सकता है?

पापा ने दादा-दादी को टटोल कर देखा। दादा-दादी तैयार नही थे। हमने मंथन के लिए बहुत किया। अब उसका कोई अधिकार नहीं। फिर भी पापा के दबाव से दादा-दादी लोन के रूप में दस लाख रुपये देने को तैयार हुए, किन्तु मनन ने विरोध किया और कहा, मुझे दुकान बडी करनी है। मुझे पैसे चाहिए।

ऐसे भी दादा-दादी जायदाद के लिए क्लेश को चाहते नही थे। मनन की बात सुनकर क्लेश होने के भय से, और मनन की इच्छा कभी टाली नहीं होने से दादा-दादी ने मना कर दिया। मेरे पापा गम खाकर रह गये। मुझे लोन के रूप में भी दस लाख रुपये नही मिले। गँवाना तो सिर्फ मुझे ही था। फिर भी मेरे इस मित्रने इस बात की मन में कोई कटुता लाए बिना भागीदारी में मुझे आधा भाग दिया। उसके पिताजी की भी सम्मति थी।

सुकेतु - साहिब! यह कुछ ज्यादा कह रहा है। इसे ज्यादा बोलने की आदत है। इसमें आप ५०% डिस्काउंट समझ लो तो भी चलेगा। इसने मुझे पढने में किस तरह से मदद की उसका कुछ विस्तार किया? मैं इसके लिए जो भी कहुं उसे आप मेग्नीफाई करना और ये मेरे लिए जो भी कहे, उसे मीनीमाईझ् करना, तो ही आप सही लेवल पा सकोंगे।

मंथन - चल हट! चुप रह! मेरी बात में तुझे मुँह खोलने को किसने कहा है? मुझे ज्यादा बोलने वाला, बक बक करने वाला मानता है! अब एक भी शब्द बोलना मत।

हाँ! तो महाराज! बात ऐसी है कि देव गुरु कृपासे और इसके जैसे मित्र की सहायता से मैं वेल-सेट हुं! यहाँ पर मेरा फ्लेट है, परिवार भी है। पैसे - टके से कुछ दिक्कत नही है, मुनाफा भी अच्छा हो रहा है। यहाँ पर संघ में हम छोटी - बडी सुकृत की प्रवृत्ति भी करते हैं।

महाराज - तो फिर आपको किस मामले में अभिप्राय चाहिए?

मंथन - बात यह है कि लगभग चार साल पूर्व मेरे दादाजी अचानक बीमार हो गये। पापा का फोन आया। मेरी इच्छा जाने की नही थी, परंतु इस सुकेतु ने कहा -

दोस्त! ऐसी कड़वाहट नही रखनी और दुनिया तो व्यवहार देखती है। तुम नही जाओंगे तो दुनिया को ताना मारने का अवसर मिल जायेगा। दादा की यह अंतिम बिमारी है, अगर वे परलोक में तुम्हारे प्रति दुर्भाव लेकर जाए, तो अच्छा नही है। तुम्हें जाना ही चाहिए।

उसके आग्रह से मैं गया। दादाजी की आँख बंद होने से पहले पहुँच गया। उनके साथ मैंने क्षमा याचना की। अलबत, उनके हृदय में क्या था यह मुझे पता नहीं था, पर उस वक्त कानुनी दृष्टि से मुझे मेरा हक लेने की इच्छा हुई। मनन ने मुझे कहा - यह दुकान दादाजी की शुरु की हुई है। और घर भी दुकान के पैसों से खरीदा है और दादाजी के नाम पर है। और सब जानते हैं कि दादाजी मुझे ही वारिस मानते थे। इसलिए तुम्हारा कोई भाग नही।

मुझे आग लग गई। पर मम्मी ने मुझे शांत किया और मुझे पूछा - क्या मुंबई में तू भूखे मर रहा है? रहने को घर नही है? मैंने कहा - बात ऐसी नही है, पर मैंने भी तुम्हारी कुक्षी से जन्म लिया है, मैं कोई अनाथाश्रम का बालक नही हुँ। फिर मेरा हक क्यों न मिले?

मम्मीने कहा - बेटा! हक कोर्ट दिलायेगा। परंतु बिना प्रेम और स्नेह का हक लेकर तू क्या करेगा? अब तक तू शांति से जी रहा है। हक की बात लाकर तेरे जीवन में बेवजह अशांति की आग क्यों लगा रहा है? कोई छीन ले उस के बजाय दे देने में गौरव है, उदारता है। 'मनन मेरा हक छीन रहा है' ऐसा तू मानता है, इसलिए तुझे लडने का मन होता है, उससे अच्छा उदारता से छोड दे। उसमें गौरव भी है और मन की शांति भी है। अंत में मेरे खातिर तो तू अधिकार छोड दे।

मेरा मन हक के लिए पुकार रहा था - मुझे बता देना था कि मैं इस घर में ज्यादा का नहीं हुं, पूरेपूरा हकदार हुं। पर मम्मी की इच्छा का उल्लंघन करने का मन नहीं होने से बात टाल दी।

उस वक्त सुकेतु से फोन पर बात की तो उसने भी मुझे बात को छोड देने की ही सलाह दी और धमकी भी दी कि, 'अगर तुझे कोर्ट - कचहरी के चक्कर में पडना है और वकील की जेब गरम करना है, तो हम यह ऑफिस बंद कर देते हैं। मैं अकेला ऑफिस का भार नही ले सकता। मेरे पास ओफिस का पूरा काम करवा कर तू पचास टक्का भाग झपट लेना और उससे वकील का घर भरना चाहता है? तो तेरे ऐसे शौक को पूरा करना मेरे से नहीं होगा।

बोलो साहिब! यह सुकेतु कैसी धमकी देता है?

सुकेतु हँसने लगा। महाराज भी मुसकुराये।

मंथन ने बात आगे चलायी। अब हुआ ऐसा कि करीब तीन साल पहले मेरे दादी भी लकवा के रोग में स्वर्गवासी हो गये। अब मनन का पापा-मम्मी के साथ बनता नहीं है। उसकी पत्नी भी सब हकीकत जान कर दादा-दादी का ध्यान रखती थी, पर मम्मी - पप्पा के साथ टेढ़ी चलती है। अब तो दादा-दादी गये। मनन के मन में तो यही भरा हुआ है कि पापा-मम्मी को मंथन ही पसंद है, मैं नही। इसलिए मनन पापा-मम्मी दोनों को कष्ट दे रहा है और कहता है - मंथन भी आपका बेटा है, आपका लाडला है, तो वहाँ जाओ। यहाँ क्यों दटे हो? वो मम्मी - पप्पा को मेरे पास धकेलना चाहता है।

महाराज - तो क्या आपको मम्मी - पप्पा पर प्रेम नहीं है?

मंथन - बात यह नही है। बात यह है कि दादा से विरासत में मिली दुकान बहुत वर्षो तक पापा ने चलायी। अब उस दुकान और घर दोनों पर बडे होने के नाते से मनन का हक, वहाँ मैं ज्यादा का...। मुझे कोई अधिकार नही। और अब मम्मी-पापा की सेवा की बात आयी, तब मैं भी इनका बेटा माना जाता हुँ। पापा-मम्मी को साथ रखने में मैं बेटा और भाग लेने में नही। मुझे यह बात चुभती है। मेरी बात इतनी है कि मम्मी पापा को मैं कायम संभालने को तैयार हुँ। मेरी पत्नी भी खुब संस्कारी है। वह सेवा करने को तत्पर है। तो साथ में मुझे भी विरासत में भाग मिलना चाहिए।

यह सुकेतु कहता है कि - अब तू ऐसी बात मत कर। तू अपने मम्मी - पापा को यहाँ ले आ। फिर तुझे जो करना है, वह कर लेना। साहिब! आप ही बताओ, मम्मी पापा एक बार यहाँ आ जाए तो फिर मनन को कैसे दबाया जाए? आप की क्या सलाह है?

महाराज - मेरा जो अभिप्राय है, वह आपने पहले से ही तय कर लिया है, फिर भी मुझे पुछते हो, तो बताता हुं। मैं पुछता हुँ - आप जो हक की बात कर रहे हो, उसके डुब जाने में क्या तुम्हारें मम्मी पापा का हाथ है?

मंथन - नहीं! उनकी इच्छा तो मुझे पूरा हक मिले वो ही थी, पर दादा-दादी के आगे उनका चलता नही था। अथवा चलाया नहीं था।

महाराज - पापा मम्मी को आप के पर प्रेम है?

मंथन - अवश्य! पापा प्रेम व्यक्त नही करते थे, छुपा होता था। मम्मी का पूरा प्रेम मुझे मिला है। इसके लिए ही मैं उनको जिन्दगी भर सम्हालने को तैयार हुँ।

महाराज - आप जिस हक की बात कर रहे हो, मानो कि, आप को वह रकम मिल जाती है, तो क्या वह रकम तुम्हारे कोई रुके हुए काम में आने वाली है?

मंथन - ऐसा नही है। उसके बिना भी मेरा कोई काम रुका नही है। पर मुझे

यह खटकता है कि साथ में जन्म होने पर भी इस घर में मेरा कोई भाग नही है। क्या मैं अनाथ हुँ ?

महाराज - तुम्हें कौन अनाथ मानता है ? जो मानते थे, वे परलोक गये, क्या समाज आप को अपने मम्मी पापा का बेटा नही मानते ?

मंथन - मानते हैं।

महाराज - क्या समाज ऐसा मानता है कि तुम्हें घर - दुकान से भाग नहीं मिला, अत: तू घर का व्यक्ति नहीं ?

मंथन - नहीं ! उल्टा सबका मेरे पर सद्भाव - सहानुभूति है। बल्कि स्वजन तो कहते हैं, तुम्हारा भी पूरा हक है। तुम क्यों बात जाने दे रहे हो ? तुम्हें तो लडना चाहिए।

महाराज - तात्पर्य तो यही है ना कि वे भी तुम्हें मनन जितना ही उस घर का मानते हैं।

मंथन - हाँ।

महाराज - तो तुम किसे बताने हक के लिए लडने की बात करता है ? मनन को बताने ? मनन भी मन से तो मानता ही है कि तुम भी उस घर के हो। इसलिए तो मम्मी - पापा को तुम्हारे पास धकेल रहा है। सिर्फ दादा-दादी के ऐसे रुख से उसे जो सब मिला, उसे वह छोडना नही चाहता। दुनिया में आदमी ऐसे लोभ से दूसरों पर अन्याय करते हैं और जब खुद को कुछ खोने का अवसर आता है, तब न्याय की बात करते हैं। तुम मम्मी - पापा को प्रेम से स्वीकार लोगे, तो जगत में स्पष्ट हो जाएगा कि माँ - बाप का सच्चा बेटा तो मंथन ही है, मनन नही। इसके लिए कोर्ट में जाने की क्या जरुरत है ? मात्र आर्थिक हक सिद्ध करने के लिए ही कोर्ट है। वहाँ पुत्र - पौत्र आदि के स्नेहभरे संबंध सिद्ध होते नही। और पारिवारिक संबंध मुख्यतया स्नेह के हैं। आर्थिक बात गौण है।

फिर मनन भी कोई सीधी तरह से तो मानने वाला नही है , हो सकता है कि अभी तक तो सब उसके नाम पर चढ गया होगा। तो हक के लिए तुम्हें कोर्ट में जाना पडेगा। उसमें बरसों बीत जायेंगे। उस वक्त तक तुम्हारें मम्मी पापा की क्या स्थिति होगी ? उनका बुढापा किसके सहारे शांति से बीतेगा ? और मम्मी - पापा को खुद के संतानों को लडते देख, जो मानसिक दुख होगा, उसका तुमने कुछ सोचा है ? इस हक की लडाई में तुम भी अशांत। तुम्हारें मम्मी-पापा भी अशांत। सुकेतु भी अशांत। मनन भी अशांत। क्या मिलेगा ? थोडे ज्यादा के रुपयों की खातिर तुम क्यों ऐसी अशांति की पुडियों की प्रभावना कर रहे हो। हक का विचार पहले मन की और बाद में

बाहर की अशांति का मूल है।

जब तुम्हें जरुरत थी, तब तुम्हें मिला नही। तब भी क्या तुम्हारा कोई काम रुका था? तो फिर अब हक के हडकवे में क्यों फस रहे हो? तुम्हें यदि मम्मी - पापा के अनन्य उपकार नजर आते हो, तो उन की आड लेकर ऐसी धमाल क्यों कर रहे हो? ऐसा कर के उनकी विवशता का गेरफायदा उठाने क्यों जा रहे हो। पप्पा-मम्मी पर यदि प्रेम है, तो कोई भी शर्त बिना हुलास से तुम्हें उन्हें स्वीकार लेना चाहिए। इसी में समझदारी है, औचित्य है, तुम्हारी योग्यता है।

वास्तव में हक कोई डुबाता नही है।आदमी तो उसमें निमित्त बनते हैं। मूल तो हमने ही किए विचित्र कर्म इसमें अपनी भूमिका निभाते हैं। और उसमें भी कारण है हमारी पूर्वभव की भूल। अगर तुम समझदार हो, तो प्रसन्नता से हक छोड कर इस भव में ही कर्म का हिसाब निपटा दो। क्योंकि आज तुम हिसाब निपटाने में सक्षम हो। नही तो बाकी रहे कर्म तुम्हारी कमजोर परिस्थिति में तुम्हें ज्यादा दुख देंगे। पास में पैसे हो तभी कर्जा उतार देने में समझदारी है। शक्ति - समझदारी के समय में ही कर्म का कर्ज उतारने में मजा है।

मंथन ने म.सा. की बात पर मंथन किया। माँ - बाप को किसी प्रकार की शर्त के बिना प्रेम से अपना लिया।

बाद में सुनने में आया उस के अनुसार सिर पर भार बिना का और ऐसी जवाबदारी को नहीं समझे मनन ने आलस्य में दुकान पर बराबर ध्यान नही दिया। उसकी पैसा उडाने की और काम नही करने की मिली आदत से दुकान को नौकरों के भरोसे छोडने पर नुकसान होने लगा। जब वह सावधान हुआ, तब तक तो दुकान पूरी बर्बाद हो चुकी थी। अब ज्यादा परिश्रम करने पर भी बाजी हाथ से गई। तब मनन को भाई की याद आई। भूतकाल में खुद के द्वारा हुए अन्याय नजर में आये। भाई से माफी मांगी। मंथन ने भी सुकेतु की सलाह से, मम्मी के समझाने से और सहज विवेक से मनन को पुन: स्थापित होने में मदद की। नतीजा? पैसे थोडा यहाँ - वहाँ हुआ, पर प्रेम बढा, संबंध मधुर हुए, कडवाहट दूर हुई। दुर्भाव-द्वेष खत्म हो गया। छोडनेवाले को प्रशंसा मिली, देवता की तरह पूजा गया। कहो? थोडा रुपया या हक छोड देने वाला गँवाता है या बहुत-बहुत पाता है।

हकको आगे कर या अन्याय कर 'भविष्य में मेरे परिवार का क्या होगा?' ऐसे झूठे आलंबन से थोडे रुपयों की खातिर वर्तमान में भाई वगैरह के साथ संबंध बिगाडनेवाले को भविष्य में संभवित आपत्ति में, नाजुक स्थिति में कंधा देने वाला, सहारा देने वाला कोई नहीं रहता, क्योंकि आनेवाले कल की विचित्रता गजब की हो

सकती है। भाई के साथ लड कर पाये पैसे अन्यत्र कहीं डूब जाने की संभावना है। मनन यह बात भूल गया था। इसलिए मंथन का हक डूबा कर सभी जायदाद खुद के नाम कर ली। पर अंत में क्या हुआ? अगर मंथन में सज्जनता न होती, तो? बदला लेने की वृत्ति होती तो! अरे अन्याय करनेवाले के प्रति उपेक्षा का भाव भी रखा होता तो? इसीलिए किसी के साथ का व्यवहार भविष्य में ऋणानुबंध होकर भारी असर करता सकता है, इस बात को नजर में रख कर सब के साथ व्यवहार सौम्य, न्याय संपन्न, प्रेम भरा रखने में ही सार है।

- आदमी साधन से बडा माना जाता है, किन्तु साधना से महान होता है।
- दूसरों को इंतजार कराए वह बडा, दूसरो का इंतजार करे, वह महान।
- Feelings काँच जैसी हैं - Handle with Care
- जीवों पर प्रेम - दया - मैत्री कोहिनूर है, उसके लिए सब कुछ चुकाने को तैयार रहो।
- चेहरा खुली किताब है।... पढना सीख लो... दूसरी कोई किताब की जरुरत नही रहेगी।

- माँ-बाप की दुआ, आशीर्वाद कभी निष्फल नहीं जाते।
- जो दूसरों के जीवन में प्रकाश भर दे, उसी का जीवन सार्थक है।
- भविष्य के लिए किसी पर भी अति विश्वास नहीं रखना, तो किसी का निकम्मा समझ कर तिरस्कार भी नहीं करना, क्या पता, कब भरोसा टुट जायें ?और निकम्मा कब काम आयें कुछ कह नहीं सकते?
- जो भी पीडा आए उसे कर्म खपाने का अवसर समझ कर प्रसन्नता से अपना लेनी ही समझदारी है।

माँ-बाप उलट, पुत्र सुलट...

उपाश्रय में महाराज-साहिब के पास एक युवक आया। उसकी उम्र होगी लगभग पच्चीस वर्ष। महाराज-साहिब से कोइ परिचय नही था। उसने महाराज-साहिब को वंदन किया और उनसे प्रश्न पूछा-साहिब! गर्भपात आशीर्वाद है या अभिशाप?

इस प्रश्न से महाराज-साहिब चौंक उठे और फिर आक्रोश उंडेलते हुए कहा - आज कल जो स्त्रीभ्रूण हत्या बेरोक - टोक हो रही है, उसमें गर्भपात कानूनन है, इसीका ही बडा हाथ है। कौनसा बाप गर्भ में बेटा हो तो प्राय: गर्भपात के लिए तैयार होता है? सरकार ने गर्भपात वैध नहीं ठहराया, बल्कि इस के अन्तर्गत स्त्रीभ्रूण हत्या का मार्ग खुला किया है। गर्भ में जिस पिंड की रचना होती है, वह पहले से सजीव है। वह मनुष्य ही है। इसके बिना इस तरह से मानव शरीर तैयार हो ही नही सकता। गर्भ में रहे हुए जीव को मारो तो इनाम और घर में रहनेवालों को मारो तो दंड। यह कौन सा न्याय है? गर्भपात करानेवालों को भी कहाँ अफसोस है कि, अरर! मेरी सहमति से एक कोमल मानव बाल जीव की हत्या हुई है, जो ईश्वर का अंश माना जाता है। जगत को जीवनदान देनेवाले डॉक्टर को भी गर्भपात करते वक्त कहाँ दु:ख होता है? ऐसे गर्भपात को आशीर्वाद कैसे माना जा सकता है? परंतु तुम्हें क्यों ऐसा प्रश्न पूछना पडा? मामला क्या है? उसने कहा - मैं दूसरों के नहीं, खुद के गर्भपात के बारे में पूछ रहा हुँ।

महाराज को और आश्चर्य हुआ। फिर प्रश्न किया - तुम तो लगभग २०-२५ वर्ष के युवक हो। अब तुम्हें तुम्हारे गर्भपात की बात क्यों सूझी? और इसका निर्णय तो माता-पिता के हाथ में होता है। कौन गर्भ को पूछता है - तुम्हें जन्म लेना है या तुम्हें यहीं कब्र खोदनी है? अगर गर्भ से पूछा जाता, और गर्भ को खुद के जीवन का अधिकार होता, तो सच में इस देश में इतने गर्भपात होते क्या? किन्तु तुमने यह प्रश्न क्यों पूछा? तुम्हारा नाम क्या है? कहाँ रहते हो?

युवक : मेरा नाम **राकेश** है। यहीं रहता हुँ। **कुशलभाई** का बेटा हुँ। यह प्रश्न मैंने इसलिए पूछा कि जन्म लेते ही माता-पिता की ओर से बार-बार अपमान -

अन्याय सहन करना पडता है, इसके बजाय तो माँ-बापने मेरा गर्भपात ही करा दिया होता तो अच्छा होता, मैं भी छुट जाता और उन्हें भी मुझ पर अन्याय करने की कुमति नहीं सुझती।

महाराज साहेब - तुम्हारे माँ-बाप तुम्हारे साथ अन्याय करते हैं ऐसा तुम क्यों मानते हो ? मामला क्या है ? मरने के विचार तक क्यों पहुँच गये ?

युवक : मात्र मरने का ही नही, बहुत बार तो मात-पिता को मारने का भी विचार आता है। छोटे भाई **करण** का भी गला घोंटने का विचार आता है। वैसे तो मैं जैन हुँ, इसलिए किसी को मारुंगा नही और मैं भी मरुँगा नही। मुझे तो बता देना है कि मैं अपने पैरों पर खडा रहने में सक्षम हुँ।

महाराज साहेब - जैन हो यह तो अच्छी बात है। मरने-मारनेवालो में नही हो, यह भी अच्छी बात है। मगर ऐसे विचार करना भी पाप है, क्योंकि कर्मबंध मुख्यत: मन के परिणाम पर आधारित है। एक पूर्वकालीन प्रसंग में आता है - एक भाई ने लोभवश दूसरे को मारने का मात्र विचार किया था, तो उसके दंड स्वरूप अगले भव में दूसरे ने पहले को मार डालने का सचमूच प्रयत्न किया। दूसरी बात- एक बार भी मनमें बुरे भावों का बीजारोपण यदि हो जाता है, तो वह किसी ऐसे अवसर को पा कर ऐसा विकसित - बलवत्तर हो जाता है, कि बाद में ऐसे कोई अवसर पर हकीकत में तबदील हो जाता है। तब हमारे पास दु:ख और पछतावे के अलावा कुछ नही रहता। इसलिए मेरी सलाह है कि, वैसे भी तुम मरने और मारने वाले नही हो, तो मन से भी मरने-मारने का विचार कर क्यों पाप की पुडिया बाँध रहे हो ? ऐसे अशुभ विचारों से वासित मन ही अनंत दु:खमय संसार का कारण बनता है। यदि तुम जैन हो, तो फिर जैनधर्म के कर्म सिद्धांत को समझ कर स्वस्थ रहो।

मुझे तेरी बता देने की बात अच्छी लगी। वास्तव में तो किसी को अपनी औकात दिखा देना यही मर्दानगी है, पौरुषत्व है। इसी के लिए यह मानवभव है। मानवभव में मिली जैन धर्म सहित यह सामग्री इसीलिए ही है। परंतु दिखा देना है कर्म को, क्योंकि अपनी सभी तक़लीफों की जड ये कर्म ही हैं। दूसरे तो सभी निमित्त मात्र हैं। कर्म नाम के कसाई का हाथा - साधन हैं।

हमनें पूर्वभव में मोहदशा के आधीन होकर बहुत उल्टे - सीधे कार्य किये हैं। परिणाम स्वरूप हमारे कर्म के प्रभाव से दूसरों का मोहनीय कर्म जोर करता है और वे ऐसा करते हैं, जिससे हमें अपमान और अन्याय का अनुभव होता है। इसलिए हमें इस भव में कर्म को दिखा देना है कि, तू मुझे चाहे जितना परेशान करने का प्रयत्न कर, पर मैं मन से मस्त हुँ स्वस्थ हुँ। मैं परेशान होऊँगा ही नहीं, और इस तरह से तुझे

खत्म कर दूंगा। खैर! तुम्हें ऐसा कैसे लगा कि, माँ-बाप अन्याय करते हैं? दुनिया में तो कहा जाता है कि पुत्र-कुपुत्र हो सकता है, परंतु माँ-बाप संतान के प्रति अनुचित व्यवहार नहीं करते।

राकेश - साहिब! मेरी बात बारबार के अनुभव पर आधारित है। मेरे माता-पिता सीधे शब्दो में मुझे स्पष्ट कहते हैं कि, हमें करण के प्रति पक्षपात है। तेरी चिंता तुम्हें खुद को करनी है।

म.सा. : इसके पीछे भी कोई कारण तो होगा ना? मुख्यत: कारण तो कर्म ही है। परंतु लोगों की नजर में दिखाई दे ऐसा कोई निमित्त है सही?

राकेश : उनके कहने के मुताबिक, मैं उनके लिए आपत्ति हुँ, और करण सगुनरूप है।

म.सा. : ऐसे कहने के पीछे कोई कारण?

राकेश : उनके कहने के मुताबिक ऐसी घटना हुई है। मेरे पिताजी बैंक में नोकरी करते हैं। उनको प्रमोशन का एक मौका था। परंतु मेरा जन्म हुआ और वो लगभग निश्चित मौका उनके हाथ में से छुट दूसरे को मिल गया। फिर मेरे से लगभग दो साल छोटे करण के जन्म के समय अचानक मौका आया और प्रमोशन मिला। बस! मैं मनहूस होने में और करण अच्छे सगुनवाला होने में इसके सिवा दूसरी कोई भी घटना निमित्त नही बनी। फिर भी उन के मन में इसी वजह से विश्वास बैठ गया है कि, मेरे ही कारण प्रमोशन नही मिला। अत: मैं उनके लिये मनहूस हुँ। करण उनके लिए आशीर्वाद रूप है। साहिब! क्या ऐसा हो सकता है कि किसी का जन्म किसी के भाग्य के साथ खेल खेले?

म.सा.: नही ही हो सकता, ऐसा नही कहा जा सकता। श्री **नेमिनाथ** भगवान के पास दीक्षित हुए **ढंढण** नाम के साधु को ऐसा अंतराय कर्म का उदय था कि, उनके साथ दूसरे कोई साधु आहार लेने जाते तो दूसरे साधु को भी आहार नही मिलता। उनके साथ जाने के बजाय अकेले जाए या कोई दूसरे साधु के साथ जाए, तो सहज मिल जाता।

तुम्हारे प्रसंग में तो जन्म के समय एक ही बार यह घटना घटी है। यह घटना ऐसा बोध देती है कि, पूर्व के कोई भव में तुमने किसी के भाग्य के चमकने में एकाध बार अंतराय किया होगा। उसमें तुम्हारे माँ-बापने भी तुम्हें मौन स्वीकृति दी होगी। अथवा तुमने देवद्रव्यादि शुभद्रव्य को तुम्हारें खुद के उपयोग में इस्तेमाल किया होगा। फिर पश्चाताप की आग में यह पाप ज्यादातर नष्ट हुआ होगा। एक अंश रह गया होगा, इस में तुम्हारे माँ-बाप ने अनुमोदना जितना भी साथ दिया होगा।

इसलिए ऐसा अनुभव हुआ।

तुम्हारे छोटे भाई ने ऐसा कोई सुकृत किया होगा, भले बडा नहीं - छोटा सा ही सही, पर अवसरोचित होगा। उसमें तुम्हारे माता-पिता ने संमति दी होगी और अनुमोदना भी की होगी, इसलिए इस भव में ऐसी घटना घटी है।

इस तरह इस भव में तुम दोनो भाईयों के साथ ऐसा पक्षपात हो रहा है। दुनिया इसे ''काकतालीय न्याय'' मानती है। परंतु जीवन को हिला देनेवाली यह घटना मात्र Luck by chance = भाग्य का खेल नही है। इसमें निश्चितरूपसे पूर्वभवीय कोई घटनाजन्य कर्म अपनी भूमिका निभा रहा है। ऐसे प्रसंग तो कर्म के कानून को मानने के लिए खास मजबूर कर देते हैं, क्योंकि जहाँ कोई प्रत्यक्ष कारण नहीं मिलते वहाँ पर भी कोई कारण तो निश्चित तौर पर अपना कार्य करेगा ही, और वह कारण है, पूर्वभव के शुभ-अशुभ कर्मों । खैर! बाद में तुम्हारे जीवन में ऐसा क्या हुआ कि जिस से अपने मात-पिता को पक्षपाती और अन्यायी मानते हो?

राकेश - माँ-बाप जैन हैं। सिर्फ इसीलिए मुझे कुडेदान में नहीं फेंक आये और अनाथाश्रम में दाखिल नहीं किया। परंतु हर तरह से मेरा तिरस्कार तो करते ही हैं। मेरे लिए कभी अच्छे कपडे नहीं खरीदे, कभी खिलौने नही लाए, मुझे पढने सरकारी - मुफ्त स्कूल में ही भेजा। दूसरी तरफ करण को नये-नये कपडे बार-बार मिलते रहे, मनपसंद खिलौने मिले, अच्छी मानी जाने वाली शाला में बडी फीस चुका कर पढाया। मैं बडा होने की वजह से हकीकत में तो घर का मुख्य वारिस मैं हुँ। फिर भी मेरी हमेशा अवहेलना की गई। छोटा लाडला होता है, वह बात अलग है, लेकिन उसी को सर्वस्व माना जाए और बडे को निकम्मा माना जाए- माँ-बाप होते हुए भी अनाथ माना जाय! छोटे को हर चीज मिले प्रेम से और बडे को मिले दया से।

म.सा. : दया से भी मिलती तो है ना?

राकेश : प्रेम से जो मिलता है वो सौ टंच का होता है। दया भाव से जो दिया जाता है, उसका कोई ठिकाना नहीं होता। और उस को शिकायत करने का कोई अधिकार भी नहीं रहता। हम दोनों को जो मिला, उसमें पक्षपात स्पष्ट दिख रहा था। साहिब! क्या बात करुं? बारहवीं में मुझे बहुत अच्छे नंबर आए। फिर भी पिताजी ने कह दिया... अब मैं तुम्हें आगे नही पढा सकता, क्योंकि करण को डॉक्टर बनाना है। तो सारी बचत उसके लिए चाहिए। तुम्हें जो करना है, वो अपने पैरों पर खडे होकर करना है। मुझे कम्प्युटर इंजीनियर बनना था। पर पिताजी ने पढाने से साफ इन्कार कर दिया। अगर मैं ग्रेज्युएट नही होता हुँ, तो पिताजी के बाद बैंक की नोकरी भी मुझे नही मिलेगी। याने मिलने के जो चान्स हैं, वे भी कमजोर हो जाते हैं और जो चान्स

मिलेगा वो इतना आकर्षक नही होगा। फिर भी पिताजी डिग्री जितना भी खर्चने को तैयार नहीं। उन्होंने तो मुझे कह दिया..

तुम्हारे आने से मुझे कुछ लाभ नहीं होता, तो कोई बात नहीं थी। परंतु मुझे जो प्रमोशन मिलने वाला था, वो तेरे जन्ममात्र से रुक गया। याने तेरा जन्म हमारे लिये मनहूस साबित हुआ। बस, तबसे तू हमारे प्रेम के काबिल रहा नहीं है। हमारे हृदय में तेरे पर जरा भी प्रेम नहीं है। फिर भी हमने तुझे दया भाव से इतना बडा किया। किन्तु कब तक दया भाव से करते रहना? अब अपना निर्वाह तुझे अपने आप करना है। हाँ! इतनी दया जरुर करेंगे कि, जब तक तू चार पैसे नही कमा लेता तब तक इस घर का खाना मिलेगा, सोने को छत और पहनने को कपडे मिलेंगे। परंतु अब से तेरे नाम पर नया एक पैसा खर्च नहीं करेंगे।

कहो साहिब! एक वक्त की जोग-संजोग से बनी घटना ने तो मेरी जिंदगी की बाजी ही पलट दी ना! और साहिब! सिर्फ प्रमोशन ही रुका था, कोई नोकरी तो नहीं चली गई थी। बैंक में तो ऐसी खटपट चलती ही रहती है। फिर भी उसका दोष का मटका मेरे सिरपर फोडा गया और रोज सग्गे माँ-बाप के ताने, अपमान और अन्याय सहन कर रहा हुँ। इससे अच्छा तो उन्होंने मेरा गर्भपात करा दिया होता तो कितना अच्छा होता? रोज-रोज अपमान के घूँट तो नहीं पीने पडते। मेरी पूरी जिंदगी बर्बाद हो गई है।

महाराज साहिब भी इस संसारी नाटक से स्तब्ध हो गए। प्रेम-स्नेह भी लाभ-हानि के तराजू में तोले जा रहे हैं। बेटा अपाहिज हो लेकिन नसीबवाला हो तो पूजा जाता है। और स्वस्थ बेटा भी यदि माँ - बाप के लिए कम भाग्य निकला तो माँ - बाप भी उस के साथ अनाथ बच्चे जैसा व्यवहार करेंगे! एकाध छोटा सा प्रसंग और असर जिंदगीभर! गजब है संसार की लीला!

कर्म के दंड भी कितने भारी? क्योंकि इसमें आखिर भूमिका तो कर्म की ही है। कर्म ही माँ - बाप जैसे की भी मति को बदल देते हैं और ऐसी कुमति सुझाते हैं। एक छोटा सा पाप भी हमें किस हद तक सता सकता है? और बेचारा जीव अज्ञानवश, आवेशवश, प्रसंगवश पाप तो कर ही लेता है। इसलिए दु:खमय दीर्घ संसार हरा-भरा रहता है। क्योंकि दूसरे भव में जब कर्मो कि मार पडती है, तब उसे कहाँ याद आता है कि यह मेरे ही पूर्व भव के कर्मो का नतीजा है? अरे! उसे कोई ऐसे कर्म के खेल, पूर्वभव की भूल दिखा भी दे, तो वह मानने, स्वीकारने को भी तैयार कहाँ होता है?

वह मानता है - ऐसे कर्म को मानना यह तो मन को समझाने की बात है,

अपराधी को बिना कारण निर्दोष मान कर मुक्त कर देने की बात है। यह कैसे चल सकता है ? अन्याय करने वाले को दंड तो मिलना ही चाहिए। जब कि वह भूल जाता है, तेरे ही सिद्धांत से कर्म तुझे दंड दे रहा है, इस में अन्याय की बात ही कहाँ है ? दूसरे लोग भी उसे उकसानेवाली ही सलाह देते हैं। उसमें बेचारे के अशुभ कर्मो का अंत कैसे होगा ? क्योंकि भगवान ने तो कहा है कि, कर्म के उदय के कारण जो भी आए उसे प्रसन्नतापूर्वक और सामनेवाले को गुनाहगार समझे बिना सहन करो तो ही वो कर्मो से छुटकारा मिल सकता है। नहीं तो कर्म उदय में आए-कर्मो को सहन भी किया और उसी के द्वारा पूर्वभव के कर्म का नाश भी किया। फिर भी मन को दुर्भाव से भर देने के कारण नए ऐसे ही दु:खदायक कर्म बँधते हैं। फिर वापस उनके उदय में आने पर फिर वही स्थिति और यही चक्कर चालू रहता है। बेचारा कर्म परवश अज्ञानी जीव!

म.सा. : यदि तुम्हारा गर्भपात हो जाता, तो जो कर्म तुम भुगत रहे हो, वह बाकी रह जाते। इसलिए फिर जो अगला भव मिलता, उसमें तो तुम्हें भुगतने ही पडते। कर्जदार को आज नही तो कल कर्ज चुकाना ही पडता है। वह भी ब्याज के साथ। अगर तुम्हारा गर्भपात हुआ होता, तो उस वक्त वास्तव में तो गर्भ में रहे हुए तुम्हारा खून हो जाता। सरकार भले ही गर्भपात को कानूनन सही मान ले। असल में तो पंचेन्द्रिय मनुष्य की हत्या ही है। सरकार भले ही फाँसी के बदले इनाम दे, कर्मसत्ता तो अपने कानून के मुताबिक खून की जो सजा होगी, वही फटकारेगी। अत: तुम्हारे माँ-बाप तुम्हारी हत्या करने के पाप से - गर्भपात कराने से बच गए।

राकेश : लेकिन रोज मेरा अपमान, तिरस्कार, अन्याय कर मानसिक हत्या जैसी पीडा दे रहे हैं उसका क्या ?

म.सा.: निश्चित ही गलत कर रहे हैं। अपने भविष्य काल को बिगाड रहे हैं। किन्तु मुझे दूसरी बात करनी है। गर्भपात के समय तुम्हारा मन पीडा को समझ सके इतना सक्षम बन चुका हुआ होता है। अत: यदि तुम मौत के संक्लेश से, पीडा से मरते तो तुम्हें समाधि नहीं मिलती.... तुम्हारी प्राय: दुर्गति हो जाती। और एकबार मनुष्यभव में से दुर्गति में चले गए तो, ऐसा कह सकते हैं कि, प्राय: अनंतकाल तक तुम्हें फिर से मनुष्य बनने का मौका नहीं मिलता। दूसरी गतिओं की दु:खदायक पीडाए अनंतीबार सहन करनी पडती! गर्भपात से मरे हुए जीवों के लिए ऐसी दु:खदायक संभावना रहती है। माँ-बाप भी इस में निमित्त होने का दंड पाते।

उसके बदले तुम्हें मनुष्यभव का जीवन मिला। इस भव में मौका है समग्र भविष्यकाल को सुधारने का। एकबार एक ज़िंदगी में जो बनता है, उसे समझपूर्वक,

समतापूर्वक, कर्म का खेल समझ कर, स्वस्थतापूर्वक, दुष्ट कर्मों का नाश होता है, कर्ज चुक रहा हुँ, ऐसी प्रसन्नतापूर्वक यदि तुम सहन कर लो, और माँ-बाप को भी कर्म का भार अपने सर पर लेकर तुझे इस कर्म के कर्ज से मुक्त करने वाले मान कर उपकारी देखने पर और भाई को भी कर्म खपाने में उपकारी समझने पर भगवान कहते हैं, - भविष्य में तुम्हे कभी ऐसा अन्याय - अपमान सहन करने का अवसर नही आएगा। भविष्य में तुम्हें कभी ऐसा विचार भी नही आएगा कि, उनके साथ मैं अन्यायपूर्ण व्यवहार करुँ। इस तरह तुम्हारें कर्म ही नहीं, पर तुम्हारी मति भी सुधर जाएगी।

नही तो इस भव में माँ-बाप तुम पर अन्याय करते हैं, भाई पक्षपात का लाभ ले रहा है, ऐसी सोच से तुम्हें दोनों पर द्वेष होगा। तो आनेवाले भव में कर्म ऐसी विपरीत स्थिति लाएगा कि, तुम उन सबके साथ घोर अन्याय का व्यवहार करोगे और उस वक्त कितना अन्याय करना उसका कोई माप-तौल नहीं रहेगा। तब तुम्हारें घोर अन्याय से त्रस्त ये तुम पर द्वेष रखेंगे। इसका मतलब फिर अगले भव में उनकी बारी, बस यह चक्र चलता ही रहेगा।

राकेश : क्या बात कर रहे हो? क्या यह चक्कर चलता ही रहता है? इसका अंत कब आएगा? इसका मतलब ऐसा समझो कि, मुझे हर तीसरे भव में सहन करना पडेगा और हर दूसरे भव में अन्याय करुँगा। अरे बापरे! मैं तो एक बार में ही थक गया हुँ। मुझे यह खेल नही चाहिए, मुझे नहीं खेलना। साहिब कोई रास्ता?

म.सा. : रास्ता है। दीक्षा ले लो। सब पाप-दु:खों के खेल से सदा के लिए छुटकारा मिल जाएगा। क्योंकि सभी पापों का यह प्रायश्चित है। क्योंकि प्रभु ने यही राजमार्ग बताया है।

राकेश : यह तो बहुत मुश्किल बात है। जैसे आपने कहा वैसा ही कर्म का खेल हो तो, संसार में तो दोनों हैं, दु:ख भी है और पाप भी है। अत: सच्चा मार्ग तो संसार त्याग का ही है। किंतु मुझे अभी ऐसे भाव नही है। तो दूसरा कोई उपाय नहीं है?

म.सा. : दूसरा उपाय है, इस दु:ख से बचने के लिए, जो तकलीफ आए, उसे कर्म का निकालरूप समझकर प्रसन्नता से अपना लो। वैसै भी प्रसन्नता का आधार मन है, मन सीधा ले, तो प्रसन्नता। मन उल्टा ले, तो दु:ख। जिनकी वजह से कर्म उदय में आए, उनका सच्चे हृदय से आभार मानना। तुम अपने माँ - बाप और भाई का आभार मानो कि वे तुम्हारे पूर्व के पाप अपने सिर लेकर तुम्हे उनसे मुक्त कर रहे हैं।

एक मजदूर के सिर पर एक भारी पेटी है। खुब वजनदार है। दूसरा मजदूर

उसके सिर से पेटी लेकर खुद के सिर पर रखने जाए, तब पहलेवाले को एक क्षण के लिए जोरदार झटका लगता है, पैर भी लडखडाने लगते हैं, पर वह खुश ही होता है कि, चलो! मेरे सिर पर जो भार था, उसे यह अपने सिर ले रहा है।

इसी तरह कोई कष्ट नहीं दे रहा है, वह तो अपना पाप उस के सिर पर ले रहा है। तब क्षणभर के लिए हमें कष्ट होता है, मगर खुशी होनी चाहिए कि, चलो! इस भाईने मेरे पाप अपने सिर लेकर मुझे हल्का कर दिया है। सच में तो तुम्हें उनकी दया खानी चाहिए कि, ये पापों का बोझ तो किसी के उपर नहीं आना चाहिए। यह बेचारा अज्ञानवश उठा रहा है, आखिर में परेशान होने वाला है। हे प्रभु! वो भी पश्चाताप प्रायश्चित द्वारा इस पाप के भार को मिटा दे तो अच्छा है।

राकेश : मतलब यह कि, माँ-बाप जितनी बार मेरा अपमान करे, अन्याय करे, उतनी बार मुझे प्रसन्नचित्त होकर उनका आभार मानना चाहिए। यही ना!

म.सा. : हाँ! ऐसा ही! शायद तुम मुँह से उनका आभार नहीं मान सको, तो मन में तो ऐसा ही भाव रखना चाहिए। यदि तुम ऐसा करोगे, तो तुम्हारा गर्भपात नहीं हुआ यह आशीर्वाद ही होगा, क्योंकि मानवजीवन समझदारों के लिए आशीर्वादरूप ही है। क्योंकि यही मानव भव पूर्व के पापों को समझपूर्वक खत्म करने के लिए और भविष्य को पुण्य के द्वारा प्रसन्नता, ज्ञान का संगीत और प्रकाश से भर देने में सक्षम है।

राकेश : साहेब आपने मुझे नई दृष्टि दी है। आज सुबह ही एक घटना घटी है। बारहवीं के बाद मुझे स्कुल छोडनी पडी। अपने मित्र के वहाँ नौकरी करने लग गया। उसका बडा स्टूडियो है। वहाँ मैंने फोटोग्राफी, विडियोग्राफी सीखी। मैं उसमें कुशल हो गया। मुझे अब स्वतंत्र धंधा करने की इच्छा हुई है। मेरा मित्र मेरी सहायता करने के लिए तैयार है। मैंने अपने पिताजी से सिर्फ एक लाख रुपये मांगे, अच्छा कैमरा लाने के लिए। पर उन्होंने स्पष्ट शब्दो में कह दिया...

करण को डॉक्टरी लाइन मिल गयी है, यह तूझे पता है ही। उसकी फीस मुझे चुकानी पडती है। मैंने तुझे पहले ही कह दिया था, मुझसे कोई अपेक्षा मत रख। फिर भी तू क्यो माँग रहा है? तुझे क्या करना है, वह तू जाने। मैंने तेरी किसी भी बात में हस्तक्षेप किया है? फिर भी तू मुझसे पैसे माँगकर मुझे 'ना' बोलने पर मजबूर कर रहा है। और तू अब बाईस साल का हो गया है। कब तक तुझे संभालना पडेगा? इस महीने से अगर घर पर रहना है, तो तुझे मुझे दो हजार रुपये देना पडेगा। ऐसे तो रहने, सोने और खाने का खर्च चार हजार आता है। पर क्या करे, तेरे माँ-बाप कहलाते हैं, इसलिए न चाहते हुए भी दयाभाव से आधी रकम की ही माँग की है। तू समझ गया

ना। अत: अब से हर महिने तू दो हजार रुपया देने की व्यवस्था कर लेना।

यह सुनकर साहिब! मैं तो सुलग गया। फिर भी उनके आगे बोलने का कोई मतलब नही था। उन्हें मुझसे प्रेम तो है ही नहीं। यह जो दया मुझ पर रख रहे हैं, अगर यह भी न रखे, तो मुझे खडे रहने का भी कोई स्थान नहीं रह जाएगा। अत: ''मजबूरी का नाम महात्मा गाँधी'' मान कर पैर पटकते हुए घर से निकल गया। मरने-मारने के विचार में जा रहा था। उपाश्रय देखा! बाहर आपका पोस्टर देखकर आपसे मिलने का मन हुआ। सचमुच मुझे सच्चा मार्ग मिल गया। अब मैं स्वस्थ हुँ, प्रसन्न हुँ। यही नहीं, इसी मार्ग पर आगे बढने का प्रयत्न करुँगा।

म.सा.: रोज प्रभु-पूजा करना। और प्रभु के पास इसी सिद्धांत पर चलकर कोई भी परिस्थिति में स्वस्थ रहने की ताकत माँगना। प्रभु के प्रभाव से अवश्य ताकत मिलेगी। इतना अवश्य करना कि किसी के भी किसी भी प्रसंग में अंतराय कारक नहीं बनना। सहायक न बन सको, तो दूर रहना, पर टाँग नही अडाना।

राकेश प्रसन्न होकर रवाना हो गया। भगवान की बतायी हुई कर्मथियरी ही ऐसी है कि वो सब जीवों के प्रति सकारात्मक सोच देती है। हर प्रसंग पर स्वस्थ, मस्त, प्रसन्न रहने की और सभी को अपना मित्र मानने की अद्‌भुत भूमिका देती है। फिर तो राकेश महाराज साहिब का भगत बन गया। बार-बार मिलने आने लगा। हर बार अच्छी व सच्ची सलाह पाकर खुश व स्वस्थ हो जाता। बाद में महाराज साहिब का विहार होने पर संपर्क टूट गया।

तकरीबन पाँच साल बाद मिलना हुआ। किंतु तब परिस्थिति बदली हुई थी।

म.सा.ने पूछा : कैसे चल रहा है ? बहुत समय बाद मिल रहे हो।

राकेश : हाँ! बहुत समय बाद आपके दर्शन हुए। चलने में तो अच्छा चल रहा है।

म.सा.: पिताजी के साथ कैसा है ? करण का क्या हुआ ?

राकेश ने हँसकर कहा: दोनों बेटे सुखी हैं, और पिताजी दु:खी।

म.सा.: मतलब ?

राकेश : आपको तो पता है, पिताजी ने मुझे लाख रुपये नही दिए। उल्टे मुझसे महीने दो हजार का खर्चा माँगा। मेरे मित्रने मुझे लोनरूप में पैसे दिए। प्रभु की भक्ति से और आपके आशीर्वाद से फोटोग्राफी में मेरा सिक्का जम गया। इतना काम मिलता है कि चार फोटोग्राफर और विडियोग्राफर रखे हैं। साल के दस-बारह लाख आराम से मिल जाते हैं। पिताजी ने मुझे एक साल बाद घर से निकाल दिया।

हुआ ऐसा था कि डॉक्टरी पढने करण तो अन्य शहर गया था। छुट्टीओ में एक बार आया था। बात-बात में मेरे मुख से निकल गया कि, तुम्हें डॉक्टर बनाने के लिए मुझे डिग्री से हाथ धोना पडा। मेरे इस त्याग को भी ध्यान में रखना।

उसे बुरा लग गया। उसने पिताजी से बात की। पिताजी तो मेरे पर ऐसे भी निष्ठुर थे ही। यह सुनकर निर्दयी भी हो गए।

मुझसे कहा - तुझे मैंने घर पर रखा इसलिए तू तेरी जात को ग्रेट मान रहा है! तूने क्या त्याग किया? तूने जो भी शिक्षा हासिल की है, यह भी मेरी दया से। और तू करण पर ताना कस रहा है? निकल जा इस घर से।

पिता ने मेरी एक भी बात सुने बिना ही मुझे घर से निकाल दिया। माँ को मेरे पर स्नेह तो क्या, दया भी नहीं आयी। मैं थोडे दिन किराए के मकान पर रहा। बाद में मैंने अपना फ्लैट ले लिया। बैंक लोन भी मिली। मैं आप की कर्मथियरी पर चलता रहा। दो-चार दिन गुस्सा और निराशा में रहा। किंतु कर्म सिद्धांत का रोमन्थन करने से और प्रभुपूजा करते रहने से मनोबल मजबूत होता गया। माँ-बाप के प्रति दुर्भाव दूर किया। मैंने तो एक बार फोन करके माफी भी माँग ली। जब कि उस वक्त उन्होंने कोई प्रतिक्रिया नहीं दिखाई।

अब तो मुझे माँ-बाप की तरफ से कोई आशा रखनी नहीं थी। मैंने मेरे पसंद की लडकी ढुंढ ली और शादी में माता-पिता ही नहीं आयेंगे तो औरों को बुलाकर क्या करना? अत: थोडे अंगत मित्रों की उपस्थिति में शादी कर ली। बेशक, मैंने उन्हें समाचार दिआ, पर उनका एक ही कहना था कि, तुझे जो करना है, कर। हम तुझे अपना बेटा मानते ही नहीं। अत: हमें किसी भी प्रसंग में आना नहीं है।

इस बात को तीन साल लगभग बीत गए। पिछले साल करण ने धडाका किया।

म.सा.- हें? कैसा?

राकेश : वो डॉक्टरी पढाई करते-करते ही सहपाठी लडकी के साथ प्रेम कर बैठा। उस ने कन्या मालदार ढुंढी थी। उस कन्या का बाप करोडपति है। उसके बापने शादी तो मंजुर की, पर सामने दो शर्त रखी। (१) घरजमाई की तरह रहना। (२) माँ-बाप को बुलाना नहीं। मिलने जाना हो तो जा सकते हो। बदले में विवाह के साथ ही बंगला और अपनी खुद की प्रायवेट अस्पताल। मेरे भाई - भाभी दोनों डॉक्टर होने से कोई समस्या नहीं थी। ऐसे भी करण जानता था, उसके पिता ने उसकी पढाई में पूरी बचत खर्च कर दी है। अब अगर भावनाओं में बह गया, तो सालों तक नौकरी, मजदूरी करने के बाद कहीं इतने पैसे इकठ्ठे कर अस्पताल बना सकुँगा। अगर अभी से

यह मिले तो क्या गलत है? उसने वहीं शादी कर ली। माँ-बाप ने दो-दो बेटे होते हुए भी एक की भी शादी नहीं देखी। मेरी शादी में आए नहीं, और करण ने अपनी शादी में बुलाया नही। शादी के बाद मम्मी - पप्पा को समाचार देकर कह दिया कि, मुझे इच्छा और अनुकूलता होगी तब मिलने आ जाऊँगा। आप यहाँ मत आना। सुनने में आया है कि एम.डी. की पढाई में व्यस्त वो अब तक तो माँ-बाप को मिलने गया ही नहीं।

माँ-बाप को बडा झटका लगा। शायद उस वक्त उनकी आँख खुल गई होगी। किंतु मेरे साथ तो रिश्ता बिगाड चुके थे। अब छोटे बनकर मेरे पास आने में उनका अहंकार तो बीच में आएगा ही ना? बीच में इसी दु:ख से मेरी माँ बीमार हो गयी। जिनके पैसो से करण डॉक्टर बना, उन ही के काम वह नहीं आया।

करण ने पिताजी से फोन पर बात की होगी। लेकिन वो अपने ससुर से संबंध बिगाडना नहीं चाहता होगा और अपनी एम.डी. की पढाई भी नहीं छोडना चाहता होगा। इसलिए वो आया भी नहीं और ना ही कोई आर्थिक मदद भी की। कैसे पैसा भेजता? खुद के पैसे कहाँ थे?

पिताजी ने करण से कहा - बेटा! हमने राकेश के साथ अन्याय कर पढाई में हर तरह से तेरा ध्यान रखा, पढाया और तू मुँह फिरा रहा है? तब करण ने तो सुना दिया कि, 'मैंने आपको कब ऐसा अन्याय करने के लिए कहा था? मेरे जन्म के बाद आपका प्रमोशन हुआ, उसके बदले में आपने मुझे डॉक्टर बनाया। तो अब हिसाब पूरा हुआ। पहले मैंने आप पर उपकार किया। फिर आपने बदला चुकाया। अब कैसा उपकार आपका?' पिताजी भी स्वाभिमानी थे। मुझे समाचार तक नहीं दिए।

पर अब माँ ठीक हो गई, तो पिताजी बीमार हो गए। अस्पताल में हैं। माँ ने मुझे फोन किया। कल मैं उनसे मिलकर आया। तब माँ ने ये सारी बातें बताई। अब दोनों को अपने किए व्यवहार पर पछतावा हो रहा है। पिताजी के चेहरे पर वेदना दिख रही थी, पर बोल नहीं पाए। माँ ने कहा-बेटा! यदि तेरे पर जो बीता, वह भूलकर और हमें माफ कर दया भाव से हमें सम्हालेगा, तो हम तेरे आधार पर जी सकते हैं। नहीं तो इस बुढापे में हमारा कौन है? जिसे अपना समझकर तेरे साथ अन्याय किया, वह तो हाथ से गया है।

पहले तो मैं पूरा भूतकाल स्मृति पटल पर छा जाने से कडवाहट से भर गया। चेहरा सख्त हो गया। कडवा सुना देने का मन हुआ। परंतु उस स्थिति में प्रभुभक्ति काम आई, आपका चेहरा, आपका उपदेश नजर के सामने आया, जिससे कुछ बोला नहीं। किंतु मेरे मनोभाव, मेरा चेहरा देख माँ समझ गयी।

माँ मेरे पैरो में गिर पडी। जोर-जोर से रोने लगी - बेटा! हमें माफ कर। हमने बहुत अन्याय किया तेरे साथ। हम पत्थर दिल हो गए थे। माँ-बाप होते हुए भी तुझे अनाथ बना दिया था। अरेरे! हमने निर्दयी बनकर तुझे हर तरीके से त्रास दिया। भवितव्यता से हुए एक प्रसंग को बडा स्वरूप देकर तेरा जीवन नरक बना दिया। माँ बोलती रही, रोती रही। बिस्ती में रहे पिताजी की आँखों से भी अनराधार अश्रुधारा बह रही थी।

मैंने माँ-पिताजी को सांत्वना दी और कहा, आप शांत हो जाईए। मेरे गुरु महाराज की हित-शिक्षा के कारण मैं तो जो कुछ भी हुआ उसमेंआपको निमित्तमात्र और मेरे उपकारी ही मानता हुँ। बुरे तो मेरे कर्म हैं। फिर भी आपको साथ में रखने के मामले में पत्नी से पूछकर बताऊँगा। क्योंकि आखिर सेवा तो उसे ही करनी है। साहिब! मेरी पत्नी विवेकी है। वो सास-ससुर को संभालने में संमत है।

म.सा.: विश्वविजेता बनने निकले नेपोलियनने जिस सेंट हेलीना बेट को नकार दिया था, वही बेट हारे हुए नेपोलियन का आशरा बना था। यहाँ भी ऐसा हुआ। तुझे बात समझने की यह है कि, भविष्य के लिए किसी पर भी अतिविश्वास रखने जैसा नहीं, तो किसी का भी निकम्मा समझ कर तिरस्कार करने जैसा भी नहीं है। कौन कब दगा दे जायेगा और कौन निकम्मा कब काम आ जाए कुछ कह नहीं सकते। तो तुम अब माँ-बाप को स्वीकार लोगे ना!

राकेश : हाँ। अब दया भाव दिखाने का अवसर मेरा है।

म.सा. : अरर! ये तुमने क्या कहा? अन्याय का पूरा सागर पार कर अब किनारे पर मत डुबो!

राकेश : महाराज साहेब! आप ऐसा क्यों कह रहे हो?

म.सा.: तुम दयाभाव की बात कर रहे हो, इसीलिए। माँ-बाप को उपकारी ही मानो। यदि उन्होंने तुम्हारा गर्भपात करा दिया होता, तो क्या तुम्हें कर्म खपाने का मौका मिलता? और आखिर में इस तरह माँ - बाप के साथ नाता वापस जोडने का मौका मिलता क्या? उन्होंने तुम्हें बारहवीं तक पढाया। ये सब मत भूलो। उनका दयापात्र नही किन्तु उपकारी मान कर ही स्वीकार करना।

राकेश : पर आज तक माँ-बाप ने अपनी फर्ज नहीं...

म.सा.: सुनो राकेशजी! पुत्र-कुपुत्र हो सकता है पर माँ-बाप अपनी फर्ज नहीं भूलते सकते यह तो जगह-जगह देखने को मिलता है। दुनिया को तुम्हें आदर्श देने का मौका मिल रहा है कि, दुनिया की दृष्टि से माँ-बाप निर्दय - निष्ठुर बन गये, फिर भी पुत्र-सुपुत्र बना रहा। यह नया है। अनन्य है। आदर्श है। ऐसा मौका मत

गँवाना। अत: तुम भूलकर भी उन्हें फर्जभ्रष्ट - अपराधी मानना नहीं। क्या तुम्हें लगता है कि, मैंने तुम्हें सच्ची दिशा दी है ? प्रसन्नता का मार्ग दिया है ?

राकेश: सवाल ही नहीं है। आपने तो मुझे जीवन - प्रफुल्ल जीवन दिया है। आपका तो अनन्य उपकार है। इसीलिए तो इतनी तकलीफों के बावजूद भी मैं स्वस्थ एवं प्रसन्न रह सका और आपने बताई हुई प्रभु भक्ति के प्रभाव से सुखी भी हो सका। आपका यह उपकार मैं करोडो भवों तक भी नहीं चुका पाऊँगा।

म.सा. : तो मुझे गुरु दक्षिणा देनी चाहिए।

राकेश : आप ही बताईए, क्या दूँ ?

म.सा.: यही कि, माँ - बाप को उपकारी तीर्थस्वरूप मानकर सेवा करना। व्यवहार में या ईशारों में, बातों में या सपने में भी तुम उन्हें दयापात्र मत समझना। उन्हें यह एहसास मात्र भी कभी मत कराना।

राकेश की आँखो में आँसु आ गए। म.सा. के पैरोमें गिरकर गलत सोच के लिए माफी माँगी और गुरु दक्षिणा में वचन भी दिया।

फिर राकेशने पूछा: परंतु मैं इस तरह भूतकाल के घोर अन्याय को भूलकर अपने माँ - बाप को उपकारी मानकर सम्हालुँगा, तो दुनिया में मूर्ख तो नही कहलाउँगा ना ? भविष्य में इसका क्या लाभ ?

म.सा.: इस में दुनिया तुम्हें मूर्ख नहीं, महान समझेगी। तुम्हारा उदाहरण देगी दुनिया। और दुनिया क्या सोचेगी ये छोडो, तुम्हारे माँ-बाप को शांति मिलेगी। गलत व्यवहार को भूलकर शांति देनेवाला भविष्य में कभी दु:खी नहीं होता। दूसरों के जरुरत के समय उन्हें सहारा देने से उनके हृदय से जो दुआ निकलती है, वह अत्यंत शुद्ध - पवित्र होती है। वह हमारे जीवन में आनेवाले विघ्न और अंतराय को खत्म कर देती है। तुम्हें तो तुम्हारे माँ-बाप की दुआ मिलेगी। उनकी दुआ - आशिष पानेवाला कभी निष्फल नहीं जाता।

माँ-बाप को अपनी पिछली जिंदगी में जब बेसहारा होने की संभावना थी, तब ही तुमने सहारा दिया, आशरा बना। अत: भविष्य में तुम कभी अनाथ होने का या बेसहारा होने का अनुभव नहीं करोगे। यह भी संभव है कि खुद परमात्मा ही तुम्हारा हाथ पकड ले। सब से महत्वपूर्ण बात यह है कि, माँ-बाप के साथ भविष्य में वैर का जो दु:खदायक ऋणानुबंध होने की संभावना थी, वो मिट गयी। अब भविष्य में फिर से यदि नाता जुडेगा, तो वह प्रेम के प्रकाश का, मित्रता का दिया होने की संभावना है।

तुम्हें भी भविष्य में अंतिम समय पर माता-पिता के व्यवहार का रंज नहीं

रहेगा। तुम्हें शांति रहेगी कि मैंने किसी का कुछ बिगाडा तो नहीं, पर कुछ तो अच्छा सुकृत कर जा रहा हुँ। अपना जीवन युं ही व्यर्थ नहीं गँवाया। किसी के काम में आकर सार्थक किया है। हम तो यही मानते हैं कि जो दूसरों के जीवन में प्रकाश फैलाता है, उसीका जन्म सार्थक होता है। राकेश यह सुनकर आनंदित हो गया।

- जीवमात्र पर प्रेम चाहिए, कोई एक पर अति प्रेम-आसक्ति ही जीव को दूसरों का द्वेषी बनाकर दुर्गतिगामी बनाता है।
- किसी का उपकार सिर लेना नही, और किसी के प्रति द्वेष-अरुचि रखना नहीं।
- आज कमजोर दशावाले अनेकों की कल सबल-प्रबल दशा आ सकती है। प्राय: हर एक को अपना युग आता है। अत: आज के कमजोर दशावालों को सम्हाल लेने में होंशियारी है।

तालाब में डुबते छगनने चीख लगाई : बचाओ ! मुझे तैरना नहीं आता... किनारे पर रहे हुए मगन ने कहा - इसमें चीख क्यों लगा रहा है? ऐसे तो मुझे भी तैरना नही आता!

किनारे रहे हुए को तैरना न आये तो चलता है। पर पानी में गिर हुऐ को तो तैरना आना ही चाहिए... न आये तो चीख लगाकर दूसरों की सहायता लेनी चाहिए। उपाधियों के तालाब रूप संसारसे दूर -किनारे पर रहे साधुओं को उपाधि के सामने कैसे टिकना उसका उपाय पता न हो, वो चलेगा... पर उपाधि के तालाबभूत संसार में गिरे हुए को तो स्वस्थ रहना आना ही चाहिए... नहीं तो रोज प्रार्थना करके प्रभु के पास इसके लिए बल प्राप्ति के लिए गिड़गिड़ाना चाहिए...

रंग भेद की नीति

उपाश्रय में महाराज साहिब के पास एक युवक आया। वंदन कर महाराज साहिब से पूछा - आपको रंग भेद की नीति के बारे में कुछ जानकारी है ?

म.सा.: हाँ! जैसे भारत में सवर्ण, दलीत का व्यवहार है, वैसे ही यूरोप, अमेरिका वगैरह में काले-गोरे की नीति थी। अभी भी कुछ गोरे लोग कालों को तुच्छ मानकर अन्यायपूर्ण व्यवहार करते हैं। यह है रंगभेद की नीति। आप क्यों रंगभेद के बारे में पूछ रहे हो ? आपका नाम क्या है ?

युवक : मेरा नाम **अभिजित** है। युरोप में जो नीति थी, भारत में वह घर में चलती है। सगे माँ - बाप काले-गोरे में भेदभाव भरा व्यवहार करे और काले को नापसंद तथा गोरे को पसंद करें, तो कैसी स्थिति होती होगी ?

म.सा.: माँ-बाप ऐसा नहीं करते। जिस संतान को जगत में किसी का सहारा नही मिलता, उसे अंत में माँ-बाप का सहारा तो मिलता ही है। माँ-बाप के लिए सब बच्चे समान होते हैं। संतान का कालापन या गोरापन भी माँ-बाप की देन है, उनके ही अंश हैं बच्चे, अत: माँ-बाप उनके बीच रंगभेद करे ; यह बात मानने में नहीं आती।

अभिजित : साहिब, यह हकीकत है। मैं जिस मकान में रहता हुँ उस मकान की ही बात है। मैं पाँचवी मंझिल पर रहता हुँ। मेरी जो पत्नी होने वाली है, वह रीटा और उसके मम्मी-पप्पा दूसरी मंझिल पर रहते हैं। **दिनेशभाई** और **दिव्याबेन**। दिनेशभाई का रंग थोडा श्याम है, दिव्याबेन गोरी है। रीटा दिनेशभाई पर गयी है। वैसे कद-काठी में रीटा अच्छी है। पर रंग थोडा श्याम है। छोटी बेटी मीता उसकी मम्मी पर गयी है। रंग-रूप में सबको आकर्षित कर दे, ऐसी। बस कथा यहीं से शुरु होती है।

म.सा.: किंतु लोग में ऐसी मान्यता है की पहली बेटी लक्ष्मी और दूसरी सिरदर्द करनेवाली।

अभिजित : पर यहाँ तो बात ही अलग है। रीटा का जन्म हुआ तब वह थोडी काली थी, पर माता-पिता की दुलारी थी। दिनेशभाई भी यही मानते थे कि, रीटा तो मेरा ही अंश है। दोनों उसे लक्ष्मी मानते थे। मगर तीन साल बाद जब मीता का जन्म हुआ, तब से रीटा का दुर्भाग्य शुरु हो गया। मीता छोटी होने की वजह से माँ-बाप की

लाडली है यह बात अलग है, परंतु गोरी होने पर दोनों के बीच पक्षपात भरा व्यवहार हो गया यह गजब कहलाता है।

म.सा.: सामान्यतया तो यही मान्यता है कि माता-पिता को कमजोर संतान पर ज्यादा प्रेम होता है।

अभिजित : यहाँ तो सब मान्यताओं गलत साबित हो गयी हैं। मीता रूपभरी होने मात्र से ऐसी लाडली हो गई कि मीता की भूल पर भी रीटा को मार पडती थी। बार बार मीता को प्रेम और रीटा को अपमान मिलने लगे। रीटा बेचारी माँ-बाप की दुलारी बनने के लिए घर के सब काम करती, अच्छा पढती, मीता को खिलाती। माँ-बाप के प्रेम को जीतने के लिए वह बेचारी हर तरीके के प्रयत्न करती थी। फिर भी मीता बिना कुछ किए माँ-बाप का पूरा का पूरा प्रेम अपने हिस्से ले लेती।

अरे! दिनेशभाई खुद श्याम होते हुए भी रीटा से ज्यादा मीता पर प्रेम रखते हैं। परिस्थिति यहाँ तक पहुँच गयी कि, रीटा ''बेचारी'' मानी जाने लगी और मीता शहजादी। मीता रीटा को परेशान करे, तो भी हितशिक्षा रीटा को मिलती थी कि, मीता तो छोटी है, तू बडी बहन है। बडी बहन का फर्ज है, छोटी का ध्यान रखना, उसे खुश रखना। रीटा लगभग चौदह वर्ष की होने को आयी, तब तक तो वह समझ गयी थी कि घर में वह किसी की प्रिय नहीं, नापसंद है। सगे माँ- बाप के लिए भी सौतेली बेटी जैसी है।

बेचारी कभी पाउडर -बिंदी लगाए, तो भी मम्मी ताना लगाती - तू तो काली है। पाउडर लगाने से क्या कभी कोई गोरा हुआ है? मेक-अप तो मीता के चेहरेपर ही अच्छा लगता है।

म.सा.: तुम्हें यह सब कैसे पता चला?

अभिजित : हम एक ही ज्ञाती के हैं। एक ही मकान में रहते हैं। मेरे पिता और उसके पिता अच्छे मित्र हैं। उस मकान में सबको इस बारे में पता है। रीटा को इस बात का पता है कि, घर में अब उसे घर का सदस्य बनकर नहीं, दयापात्र बनकर रहना है। उसकी माँ बार-बार कहती रहती है कि, मीता तो परी है, उसे तो मनपसंद राजकुमार मिलेगा। तू तो काली है, तेरा हाथ पकडने को कोई तैयार नहीं होगा, तेरे साथ शादी करने कौन युवक तैयार होगा? तुझे पसंद करे ऐसा युवक ढुँढने में हम मर जाएँगे। रीटा समझदार, शांत, विनीत, होशियार, घर के काम में दक्ष होते हुए भी माँ-बाप को अप्रिय!

साहिब! मैंने खुदने रीटा को पसंद कर शादी करने का निश्चय किया है। रीटा की तरफ मैं पहले से आकर्षित था और मीता तो मुझे अभिमान का पुतला ही लगती

है। जब से इस भेदभाव को रीटा समझने लगी, उसे आत्महत्या करने का विचार आता, पर उसके सद्भाग्य से एक साध्वीग्रुप मिला, उनका परिचय हुआ। साध्वीजी उसके साथ प्रेम से बातें करते थे। धर्म का तत्त्वज्ञान देते थे।

रीटा ने साध्वीजी महाराज से पूछा, मीता गौरी है, मैं तो काली हुँ। फिर भी आप मुझे क्यों बुलाते हो ?

प्रमुख साध्वीजी ने कहा : रूप दूसरों को आकर्षित करता है। हम बाह्य सौंदर्य को नहीं, पर आत्मस्वरूप को महत्त्व देते हैं। हमारे आकर्षण का केंद्र रूप नहीं, विनय और शांत स्वभाव है। तू इन दोनों परीक्षा में पास हो गयी है, इसलिए तुझे पढाने में भी मजा आता है।

रीटा ने पुछा: इस रंगभेद का कारण क्या है ?

साध्वीजी ने कहा - ऐसे तो कहा जाता है कि, संतान को माता-पिता का रंग मिलता है। पर उसमें भी तुझे काला रंग मिला, इसमें तेरे पूर्वभव के कर्म ही भूमिका निभा रहे हैं। शायद पूर्वभव में तूने गोरे रंग पर अभिमान किया होगा, अथवा काले व्यक्तियों का तिरस्कार किया होगा। दूसरों को आकर्षित करने शणगार बार-बार किया होगा। ऐसे कोई पाप के कारण तुझे अशुभ वर्ण का उदय हुआ है। मगर रीटा! तू इस बात को महत्त्व मत दे कि मैं काली हुँ। तुम धारो तो आत्मा को शुभ भावो से उज्जवल बना सकती हो।

इतिहास कहता है, तेजपाल की पत्नी अनुपमा देवी रंग से श्याम थी। पर उसकी आत्मा इतनी उजली और पवित्र थी कि, जेठ वस्तुपाल भी ढेर सारी बाबतों में उनकी सलाह लेते थे। उन्हीं की सलाह लेकर धन को जमीन में गाडने के बदले भव्यतम मंदिर निर्माण में खर्च किया। इस तरह वे दोनों अमर हो गये। अनुपमा देवी की साधर्मिक भक्ति, साधु भक्ति, परमात्म भक्ति, अनुकंपा, जग विख्यात है। आज जैनों में इनका नाम एक पवित्र, आदर्श श्राविका के तौर पर गौरव से लिया जाता है।

अत: तुझे अपने शरीर के कालेपन से दु:खी नहीं होना है। किन्तु आत्मा को सबके प्रति प्रेम - स्नेह, परोपकारी स्वभाव, शांति, विनय, विवेक से ऐसा उज्जवल बनाना है कि, लोगों को तेरे में देवी के दर्शन हो जाय। तेरा नाम लेने में गौरव महसूस करे। तेरा नाम ले कर काम करे, तो सफलता मिले।

तुझे अपनी बहन पर भी ईर्ष्या नहीं करनी है। उसको अपने भाग्य से ऐसा रूप-रंग मिला है, पर बदले में उसके भाग्य की जमापूंजी खर्च हो रही है, और तेरी जमा हो रही है। माँ-बाप पर कभी दुर्भाव मत करना। जैन धर्म युक्त मानवभव और जैन धर्म के संस्कार, पवित्र जीवन, ये सब तभी मुमकिन हुआ, जब उन्होंने तुझे जन्म

दिया। पालन किया। इसलिए उन्हें हमेशा अपने परम उपकारी ही मानना। दुनिया की दृष्टि से तेरे प्रति दुर्व्यवहार हो रहा है, पर वो दुर्भाग्य कर्म के नाश के लिए ही है। इसीलिए भविष्य में तेरा सौभाग्य ऐसा खिलेगा कि, तुमसे मिलने को सब तरसेंगे।

साध्वीजी भगवंत के सत्संग से रीटा कर्म के प्रभाव को समझकर स्वस्थ रहने लगी। अब विवेक से माँ-बाप, बहन, सब के साथ विनीत, शांत, सहायकभाव का व्यवहार करने लगी। अब तो वह इतनी परिपक्व हो गयी कि, माँ-बाप के किसी भी प्रकार के व्यवहार से मन में दुखी नहीं होती।

मेरी बार बार रीटा से बात होती है। तब मैं पूछता हुँ कि तुम इतनी स्वस्थ, प्रसन्नचित्त कैसे रह सकती हो? तब उसने मुझसे दिल खोलकर बातें की। तब सब पता चला।

रीटा को बारहवीं कक्षा की परीक्षा में अच्छे नंबर आने पर भी माँ-बाप ने वह अपने पैरों पर खडी रह सके ऐसी कोई डीग्री कॉर्स में दाखिल करने की जगह उसे एस.एन.डी.टी. (महिला कॉलेज) में होम सायन्स में जाने के लिए मजबूर किया।

माँ ने रीटा को कहा - एक तो तू श्याम है। इस में तू ज्यादा पढाई करेगी, तो कोई तेरे साथ शादी करेगा नहीं। ऐसे भी पढा-लिखा नौजवान तो तुझे पसंद करेगा ही नहीं। बचे-कुचे जो होंगे वे यदि कम पढ़े लिखे होंगे, तो खुद के अहंकार की सुरक्षा के लिए ऐसी ही कोई कम पढ़ी लिखी कन्या को पसंद करेंगे।

रीटाने दिव्याबहन को पूछा - पर पप्पा आपकी अपेक्षा से श्याम और आप गोरे होने बावजुद शादी हुई ना!

दिव्याबहन ने कहा -बस यही बात है। पुरुष काला हो तो भी अच्छी लडकी मिल जाती है। कन्या को शादी बाजार में पसंदगी पाने के लिए सुंदरता होनी जरुरी है। इसीलिए हमें तेरी चिंता रहती है। तेरा हाथ पकडने वाला कोई नहीं मिला, तो हमें कब तक तुझे निभाना होगा?

एक बार रीटा ने मम्मी पप्पा को यह बात कहती सुना कि, अब रीटा की जो भी मिले, जैसा भी मिले, शादी हो जाय, तो अच्छा। उसे अच्छा पति तो मिलने से रहा। जो भी मिले उस के सिर पर डाल दो। इस से हमारी जवाबदारी भी पूरी हो जायेंगी। उस बेचारी का भाग्य जैसा होगा वैसा मिलेगा। इसके प्रति हमारी जवाबदारी पूरी हो जाने पर मुझे मीता को अच्छी पढ़ाई करानी है। उसके लिए अमेरिका में सेटल हुआ लडका की पसंद करना है। मैं तो भविष्यवाणी करती हुँ, इसके लिए तो भारत के तो क्या, अमेरिका में अच्छी कमाई वाले युवकों रिश्ता के लिए कतार लगायेंगे। किन्तु हमें जल्दी नहीं करना है। हमें तो सब से श्रेष्ठ युवक ही पसंद

करना है।

दिनेशभाई - पर मीता को तो अमेरिका पढने जाने की इच्छा है।

दिव्याबहन - उस में क्या गलत है? मुझे मेरी इस लाडली की सारी इच्छा पूरी करनी है! वो भले ही अमेरिका में स्टडी करने जाय। और मीता यदि अमेरिका में सेटल लडके को पसंद करे, तो मेरी भी इच्छा एक बार अमेरिका जाने की है। वहाँ रहने की है। उसको पति अच्छा मिला, तो हम भी अमेरिका सेटल हो जायेंगे।

दिनेशभाई - यूँ तो मुझे भी चढती जवानी में वहाँ के डॉलर का आकर्षण था। पर भाग्य ने साथ नहीं दिया।

दिव्याबहन - अपनी मीता को ऐसे ही थोडे लाड लडवाये हैं? वो मेरी बडी समझदार बेटी है। हम पर उसे कितना प्रेम है! और वह बडी भाग्यशाली भी है। इसके भाग्य से हमारी सारी इच्छाएँ पूरी हो जायेंगी। परंतु आप ये अपने सिर पर आ पडी रीटा की कहीं भी शादी करवा दो। उस की झंझट पूरी हो जाये तो मुझे शांति मिलेगी।

रीटा अपनी मम्मी में रहे अपने प्रति घोर अवगणना के भाव से स्तब्ध हो गयी। पापा भी मम्मी की बातों में आ गये। यानी कि जिस घर से स्नेह मिलने की संभावना थी, वहाँ से ही कुछ भी नहीं मिलने वाला था। दुनिया से थके हुए को जहाँ आराम मिलता है, वह घर कहलाता है।

जो बिल्डरों के लिए बी.एच.के., बिल्ट अप एरिया, और स्क्वेरफीट के भाव से बेचने की जगह है, वो ही 'यहाँ मेरा माना जाय ऐसा कोई रहता है', ऐसे प्रेम के धागे से बांधने वाला घर कहलाता है, जिसमें रहनेवाला हर व्यक्ति यह मानता है कि, पूरी दुनिया में भले ही मेरी प्रतीक्षा करनेवाला कोई भी नहीं होगा, पर एक जगह ऐसी है, जहाँ सब मेरी आने की प्रतीक्षा करते हैं, और अगर मुझे देर हो जाये तो, सभी का जीव चिंता से व्यथित हो जाएगा।

मगर रीटा के लिए तो वो ही घर ऐसा पराया हो गया कि जिसमें रहने वाले सब यही चाहते हैं कि, रीटा हमेशा के लिए यहाँ से चली जायें। उसे पक्का विश्वास हो गया, यहाँ का उसका निवास लक्ष्मी का नही, शनि की पनौती जैसा माना जा रहा है।

साहिब! उसी दिन रीटा मुझे मिली और रो पडी। सारी बातें बतायी। मुझसे कहा - यदि तुम मुझसे शादी करोगे, तो वे तीन जीवों को सुखी करने का महान लाभ तुम्हें मिलेगा, जो मेरे कारण दु:खी बने हैं।

मैंने पूछा : तू भी तो सुखी हो जाओगी ना?

रीटा : मेरा तो भाग्य में जो लिखा होगा वो ही होगा। मेरे पर दया रख तुम मुझसे शादी करोगे। तुम्हारी दया पर ही मुझे जीना है, दया पर जीनेवालों को कोई

अधिकार नही होता। उसे कोई इच्छा करने का हक्क नहीं। अगर इच्छा कर भी लें, तो भी पूरी करने की जिम्मेदारी किसी की नहीं। तुम्हारे घर पर मैं तो ही सुखी रहुँगी, यदि किसी प्रकार की अपेक्षा रखे बिना सहज भाव से जो मिलेगा उसे स्वीकार लूँगी। मैं सुखी रहुँ या नहीं, यह भविष्य की बात है। पर मेरे मम्मी - पप्पा तो जब मैं उस घर से खिसक कर यदि अंत में जाकर कुडेदान में भी ठिकाना पा लुंगी तब ही सुखी होंगे।

मैंने उसे आश्वासन दिया और कहा - मैं तेरे पर दया नहीं कर रहा हुँ। भले ही तेरे पास विशिष्ट रूप नहीं है। भले ही शादीजीवन का प्रारंभ रूप से होता होगा, पर शादीजीवन में सुख रूप से नहीं, घर चलाने की कुशलता, विनय से सभी का दिल जीत लेने की क्षमता, शांत स्वभाव, रसोई में कुशलता वगैरह गुणों पर आधारित है। मेरी नजर में इन गुणों के बारे में तेरे मुकाबले कोई लडकी नहीं। मैं यह दिल से कह रहा हुँ, अगर मैंने तुझसे शादी की, तो मेरा गृहस्थजीवन सुखमय ही होगा। हमारी जो संतान होगी, वह भी संस्कारी होगी। सच में तू मुझे पसंद कर रही है, वह तेरी मेहरबानी है। मैं तेरे पर दया कर रहा हुँ, ऐसा भूल कर भी मत समझना।

किंतु एक बात यह है कि, अभी तुझे दो-तीन साल अपने घर रहना पडेगा। क्योंकि मेरी पढ़ाई पूरी हुई नही है। मैं अपने पैरों पर खडा रहने की क्षमता के बाद शादी करुंगा, जिससे मेरे माँ-बाप तुझे दुख न दें।

इस दौरान रीटा की पढ़ाई पूरी हो गयी। दिव्याबहन ने पूरे घर की जिम्मेदारी रीटा पर डाल दी। साहिब! रीटा के सर पर सारे घर का भार होने पर भी उस के माँ-बाप रीटा को सिर का बोझ मानते हैं और मीता को सिर पर चढ़ा रखा है।

अभी छह महीने पहले ही मीता अमेरिका पढ़ने गयी। उसे भी अच्छे नंबर मिले थे, पर रीटा जितने नहीं। प्रयत्न करने पर और वग चलाने से अमेरिका पढ़ने जाने का अवसर मिल गया। माँ-बाप ने जिंदगी की बडी कमाई दाव पर लगाकर उसे अमेरिका भेजी। उस अवसर पर सभी स्वजन मित्रों को आमंत्रित किया। फेरवेल पार्टी रखी। पार्टी अच्छी हो उसकी पूरी जिम्मेदारी रीटा को दी। बेचारी ने रात-दिन एक कर पार्टी का सरस आयोजन किया।

किन्तु दूसरों की तो बात छोडो, माँ-बाप ने अंतिम दिन भी उसे धन्यवाद नहीं दिया। फॅमिली फोटो में उसको स्थान नहीं मिला। माँ-बाप - मीता तीन का ही गृप फोटो निकाला गया। वो बेचारी काम करती रही और फोटो खिंचवाने वक्त उन को उस की याद भी नहीं आयी। किसीने याद दिलाया तो भी उन्हों ने परवाह नही की।

फिर भी साध्वीजी भगवंतो का सत्संग था, इसीलिए वह स्वस्थ रही। यही हिसाब लगाया कि मेरे कितने अशुभ कर्म का क्षय हुआ? साहिब! कर्मथियरी

समझने में जितनी आसान है, उतना ही कठिन है प्रॅक्टिकली सोच कर दैनिक जीवन में स्वस्थ रहना, क्योंकि वह परोक्ष है, मान-अपमान तो प्रत्यक्ष है, सब देख सकते हैं। किंतु रीटा ने कर्म थियरी अच्छी तरह जीवन में उतार ली थी।

म.सा.: भाई सा'ब! आपने बाते तो बहुत की। पर यह रंगभेद की बात आप को आज ही क्यों याद आयी?

अभिजित : बात यह है कि, अब मैं धंधे में सेट हो गया हुँ। कमाई भी अच्छी है। अब रीटा का भी आग्रह है कि, अब मेरी धीरज जवाब दे रही है। मेरे मम्मी - पप्पा मुझे किसी के भी गले में मढने के लिए अधीर हुए हैं। उन्हें अमेरिका जाने के सपने आ रहे हैं।

अत: आज सुबह मैं मम्मी - पप्पा के साथ दिनेशभाई और दिव्याबहन के घर गया, और रीटा का हाथ मांगा। दोनों को बहुत आश्चर्य हुआ कि, क्या रीटा के लिए भी कोई सामने से रिश्ता मांगने आयेगा? उन्होंने अपनी ही बेटी का ऐसा अवमूल्यांकन किया था कि, आज यह बात उन के मनमें बैठी नहीं। अत: मुझे पूछ बैठे - तुम रीटा की बात कर रहे हो या मीता की? बेशक, हम अभी मीता की शादी कराने के लिए उत्सुक नहीं है।

मैंने जोर देकर कहा कि, मैं रीटा कि बात कर रहा हुँ। उन्होंने 'हाश! छुट जायेंगे' ऐसे भावों से संमति दिखायी। फिर उन्होंने मुद्दे की बात की ... हम रीटा की शादी का खर्च कर सके ऐसी परिस्थिति में नहीं हैं। दहेज में कुछ नहीं दे सकते। पहने कपडे आयेगी।

मेरे माँ-बाप स्तब्ध हो गये। वहाँ कुछ बोले नहीं। पर घर पर वापस आने के बाद मुझे बहुत डाँटा कि, क्या तुझे दूसरी कोई कन्या नहीं मिल रही थी? तुझे तेरे व्यापार के लिए रुपया दे सके ऐसे अमीर की रूप वगैरह से सुंदर कन्या मिल सकती है। ऐसे भी रीटा मीता जितनी सुंदर नहीं है, तू अभी विचार कर।

मैंने माता-पिता को कह दिया कि, तुम्हें आल्बम में अच्छी लगे ऐसी पुत्रवधु चाहिए या घर में? अपने रूप व दहेज के रोब से तुम्हें भी नोकरानी बना दे ऐसी पुत्रवधु चाहिए या जो तुम्हारी प्रेम से सेवा करे और घर कुशलता से चलाए ऐसी बहू चाहिए? ससुर की संपत्ति से विकास पाने वाले जवाई समुदाय में मुझे मेरा नाम नहीं लिखाना है। मुझे तो मेरा नाम अपने बलबूते आगे बढने वालों की श्रेणि में लिखाना है। और ससुरकी संपत्ति नहीं लेने से ससुर का एहसानमंद भी नहीं होना पडेगा।

मेरे मम्मी - पापा तो मान गये। मैंने रीटा से पूछा - ऐसा क्यों? रीटा ने कहा - इसमें कोई आश्चर्य जैसी बात नहीं है। मैं मेरे घर के लिए दयापात्र हुँ। दयाभाव से

मुझे इतना बडा किया इतना काफी है। अब और कितना करना ? वे सब - कुछ मीता के लिये सोच रहे हैं। मीता की पढ़ाई में बहुत खर्च हुआ और होगा। अगर मीता के लिए अच्छा लडका मिल जाता है तो अपनी घर की इज्जत बचाने के लिए भी दहेज अच्छा देना पडेगा। करोडपति जवाई के घर करोड रुपये ले जानेवाली कन्या शोभती है। गरीब जवाई के लिए गरीब।

मैं काली हुँ, मुझे यहाँ से कैसे भी विदा करना है, फिर वे क्यों वैसा दहेज देंगे ? अगर तुम्हें भी दहेज बिना लिए मैं पसंद नहीं हुँ, तो मैं तुम्हे आझाद करती हुँ। तुम्हें सुंदर एवं दहेज लानेवाली लडकी मिल सकती है। मेरे पापा से तुम अच्छे सुंदर हो। पापा को भी सुंदर एवं दहेज लाने वाली मम्मी मिली, तो तुम्हें तो मुझसे ज्यादा सुंदर एवं अच्छा दहेज लानेवाली लडकी क्यों नहीं मिलेगी ? उससे तुम अपना धंधा भी अच्छा सेट कर सकते हो। मैं तुम्हे मुक्त करती हुँ।

मैंने पूछा - तो तुम क्या करोगी ? क्या तुम ऐसे - तैसे से शादी करके जीवनभर दु:खी रहोगी ?

रीटा : सच कहुँ, तो मैं जिस साध्वीग्रुप के संपर्क में थी, वे बहुत अच्छे हैं, आराधक हैं। तुम्हारे प्रति आकर्षित होकर ही मैंने तुमसे शादी करने के अरमान किये थे। अगर तुम्हारें साथ मेरी शादी नहीं हुई, तो मेरी इच्छा दीक्षा लेने की है। मुझे शादी करने की जरा भी तमन्ना नहीं है।

मैंने रीटा से कहा - अवश्य दीक्षा का मार्ग ही सच्चा मार्ग है, और तुम्हारें घर के अनुभव के बाद तो मुझे भी लगता है कि, संसार असार है। सब स्वार्थी हैं। आत्म - कल्याण ही मानवभव का सार्थक उपयोग है। पर मेरा मन तो तेरे पर मर रहा है। तुम्हारें मम्मी पप्पा जो कहते - करतें है, वे उनकी बात हैं। पर मुझे तो तेरे साथ ही शादी करनी है। मुझे दहेज की या अन्य सुंदर कन्या की कोई इच्छा नहीं है। अलबत, तुम्हारें मम्मी - पप्पा के व्यवहार से दिल में झटका जरुर लगा है।

साहिब ! उसके बाद मैं काम से यहीं से जा रहा था। उपाश्रय देखा, आपका बोर्ड देखा। इसीलिए यहाँ आकर रंगभेद के बारे में पूछ लिया।

म.सा. : अभिजित भाई ! तुमने तो प्रभु के वचन पर खुब श्रद्धा, अहोभाव बढ़ जाये ऐसी बात कही है। हमें तो अब तक इस बात पर विश्वास नहीं हो रहा है। ये कोई कहानी का प्लोट है या हकीकत है ? माँ-बाप क्या इतनी हद्द तक जा सकते हैं ? बेशक, जिस तरह कर्म का कानुन और मोहनीय कर्म का खेल शास्त्रो में बताया गया हैं उसके मुताबिक इसमें से कुछ भी असंभव नहीं लगता।

अभिजित : साहिब ! यह कोई कल्पना की बात नहीं है। हकीकत है। हम

कल के ही शुभ मुहूर्त में किसी शोर-शराबे के बिना शादी कर लेंगे। फिर मैं अपनी पत्नी रीटा को आपके पास ले आऊँगा, तो आपको भी तसल्ली हो जायेगी।

म.सा. : अभिजित भाई! अगर यह बात सच है, तो बारह भावना में से संसार भावना के बारे में सोचने का प्रसंग है। किन्तु आप अपने सास-ससुर के प्रति दुर्भाव मत रखियेगा। वे बेचारे तो मोहनीय कर्म के इशारों पर नाचनेवाली कठपुतली हैं। तुम्हारी पत्नी के वैसे अशुभ कर्म ही कारण बन रहे हैं। वो बेचारी तो अपने माँ-बाप की पूर्वभव की कर्जदार होगी। और कर्जदार तो रुपये देता है, फिर भी लेनदार को कर्जदार पर कोई प्रेम नही उमडता। वो बेचारी उनकी, घर की चाहे जितनी सेवा करे, घरवालों को उस पर प्रेम नहीं होता, यह कर्म का खेल है।

इसीलिए मुझे तुम्हें कहना है - तुम किसी का उपकार अपने सिर नहीं लेना। और किसी का ऋणभार रहना चाहिए नहीं। कोई तुम्हारा काम कर दे, वो भी ऋण ही कहा जायेगा। ऐसी मेहरबानी शक्ति पहुँचे तब तक लेनी नहीं। और किसी के प्रति द्वेष -दुर्भाव-अरुचि रखना नहीं। यदि तुम्हारी खुद की ऐसी शक्ति न हो तो, प्रभुपूजा करके प्रभु के आगे इसके लिए शक्ति मिले ऐसी प्रार्थना करना। प्रभु ऐसा बल देंगे। प्रभु का अनुग्रह ही सभी चमत्कारों का सर्जक है। मोहनीय कर्म के खेल के सामने रक्षण देने में प्रभु ही समर्थ है।

अभिजितभाई गये...

लगभग तीन साल के बाद फिर से साधु महाराज को उस से मिलना हुआ। अभिजितभाई को एक बेटा भी है। अभिजित ने कहा - साहिब! मुझे तो सोने की लगडी इनाम में लग गयी।

महाराज : हें! कैसे इनाम में ?

अभिजित - रीटा! वो तो सोने में हीरा जडी हुई लगडी है। देवी है। देवी! पत्नी की तारीफ करना योग्य है या नही, मुझे पता नही। पर मैं तो सच मे निहाल हो गया।

महाराज : किस तरह ?

अभिजित : उसके कदम पडते ही धंधे में लाभ हुआ वो तो गौण है। उसने तो विनय सेवा गुण से मम्मी-पापा को ऐसा वश में किया है कि, घर में मैं अकेला हो गया हुँ। कोई भी बात में मम्मी - पप्पा उस के ही पक्ष में बैठते हैं। अरे! मुझे भी कहते हैं, तुम्हें कुछ भी करना हो, तो रीटा से पूछकर ही करना। लो सुनो! मुझे मेरे ही माँ-बाप ने जोरु का गुलाम बना दिया है। पत्नी जितना पानी दें, उतना ही पीना ऐसा हुकुम मेरे माँ-बाप ने मुझ पर छोड दिया है। और सच कहुँ, वो कहे उसके मुताबिक करूँ तो ही

मेरा कार्य सफल ही होता है! साहिब! घर पर बहोरने आओ! उसकी बनाई रसोई बहोरने के बाद आप कोई दूसरे घर वहोरने को जाओगे नहीं इतनी गॅरंटी है।

साहिब! उसी ने मुझे जैन बनाया है। अब मैं रात्रीभोजन नहीं करता। दो प्रतिक्रमण सूत्र पक्के हो गये। रोज अष्टप्रकारी पूजा करता हुँ।

महाराज : बहोत अच्छा! पर देखना, ज्यादा आसक्ति अच्छी नहीं।

अभिजित : बात सही है। वो भी रोज मुझे यही कहती है, जीव मात्र पर प्रेम चाहिए, किंतु किसी एक पर आसक्ति रखोगे तो दु:खमय संसार में की चक्की में फंस जाओगे। किंतु क्या करूँ? उसका स्वभाव, उसके गुण, उसका व्यवहार ही ऐसा है कि मैं ही नहीं, मेरे माँ-बाप ही नहीं, उसके माँ-बाप भी उसे देवी मानते हैं।

महाराज : उसके माँ-बाप?

अभिजित : हाँ! हुआ ऐसा कि छह-आठ महीने पहले ही मीता ने अमेरिका से फोन करके अपने माँ-बाप को झटका दिया। उसने कहा - यहाँ मैं एक अमेरिकन के प्रेम में हुँ। हमने शादी कर ली है। दिनेशभाई - दिव्याबहन स्तब्ध हो गये। मीता ने कह दिया, मेहरबानी करके आप अमेरिका आने की बात करना नहीं। मुझे पता है, आपको मेरे पीछे अमेरिका आने की इच्छा है। किंतु यहाँ अमेरिकन लोग सास-ससुर को धिक्कारते हैं। उनमें अपने जैसा कुटुंबभाव नहीं होता। अत: यदि मेरे संसार में आग लगानी नहीं है, तो आप अमेरिका का सपना देखना बंद कर दो। आप जिस तरह अपना जीवन जी रहे हो, उसी तरह हमें हमारा जीवन जीने दो।

दिव्याबहन को तो ऐसा आघात लगा कि वो तो बीमार पड गयी। दिनेशभाई सूनमून! रीटा को तो कुछ बता सके ऐसा था ही नहीं, क्यों कि एक ही मकान में रहने के बावजुद रीटा पापा-मम्मी के घर जा नहीं सकती थी। उनको रीटा घर पर आये वो पसंद नहीं था। ऐसा ही मानते कि, रीटा को कुछ दिया नहीं, इसीलिए घर आने के नाम कुछ लेकर जायेगी। उन्होंने ही रीटा को कह दिया था, तू अपने ससुराल में भली। एक ही मकान में पियर है ऐसा मानकर यहाँ बार-बार दौड कर आना नहीं।

वे अब रीटा को कैसे बुला सकेंगे? परंतु रीटा तो शीशे जैसी! कोई भी घटना के प्रतिबिंब को कायम नहीं रखना! उसे पता चला। मेरी और मेरे पापा-मम्मी की अनुमति लेकर दिव्याबहन की सेवा में लग गयी। दिव्याबहन जो बच गये, वो रीटा की सेवा का प्रभाव!

अपने पापा-मम्मी को खुब आश्वासन दिया उसने। मुझे और मेरे पापा-मम्मी को लेकर अपने पापा-मम्मी के पास आकर कहा - देखो! मेरे पति अच्छा कमा रहे हैं। मुझे इस घर में से एक पाई नहीं चाहिए। आप ऐसा कोई डर रखना मत। आपको

ऐसा लगता हो तो, सारी मिलकत का वील मीता के नाम कर दो। हमें बिलकुल भी दु:ख नहीं होगा। परंतु इस ढलती उम्र में एक तरफ आप वृद्ध होते जा रहे हो और घर में कोई नहीं। आपकी सेवा कौन करेगा? मुझे आपकी सेवा करने में कोई दिक्कत नहीं है। मैं सम्हाल लूँगी।

तब दिनेशभाई - दिव्याबहन रो पडे, कबुल किया... तुझे श्याम समझकर हमने बहुत सताया, तुझे अनाथ बना दिया। तुझे तिरस्कार से निकाल दिया। अब हमारी आँखे खुली हैं।

उन दोनों के दिल में अब रीटा के गुण बसे हैं। रीटा को लडकी नहीं, देवी मानते हैं।

थोडे समय बाद अभिजित के द्वारा ही समाचार मिले। उस अमेरिकन ने मीता को छोड दिया। शराब-सुंदरी में वो मस्त था। शादी की कोई जिम्मेदारी वहाँ की संस्कृति में नहीं है। मीता बहुत ही हताश-निराश हो गयी थी। भारत आयी। रीटा ने ही सहारा दिया। साध्वीजी भगवंतो का परिचय करवाया। उसे भी कर्म थियरी समझने को मिली। दूसरी तरह से भी उसे आश्वासन दिया। मीता को बच्चा नहीं है। सुनने में आया है कि अब तो वो साध्वी बनना चाहती है। रीटा का संपूर्णतया सहयोग मिल रहा है।

म.सा.: अभिजित! मनुष्य जब सज्जनता को ही सिद्ध करने का लक्ष्य ले लेता है, तब वो कितनी ऊँचाई पा सकता है, वह तुम्हारी पत्नी की भूमिका से जान सकते हैं।

मानव के वर्तमान काल में रंग, रूप, धन आदि किसी भी प्रकार की कमजोरी में उसके भूतकाल के कर्म का ही प्रभाव है। परंतु उतने मात्र से मनुष्य निकम्मा, तिरस्कार पात्र, उपेक्षापात्र, या अन्याय करने योग्य नहीं बन जाता। वह अपने अच्छे स्वभाव से किस तरह कब उपयोगी होगा, कौन कह सकता है?

इसीलिए मेरी विशेष सलाह है कि, जो आज दूसरों से - खास तौर पर अपने निकट जनों से ही उपेक्षित होता है, उसे खास प्रेम देना चाहिए। आज का कमजोर व्यक्ति कल सबल-प्रबल बन सकता है। प्राय: हर एक का अपना समय आता है। आज अच्छी दशावाले अनेकों को पीछे से खराब दशा की संभावना है।

जब कोई नहीं आता...

उपाश्रय में महाराज साहिब के पास ढलती शाम को **चिंतन** नाम का अठ्ठारह साल का एक युवक अपने साथ **परेश** नाम के एक युवक को ले आया। गेहुरंगी उस युवक का चेहरा उदास था। आँखो में घबराहट, मिचे हुये होंठ कठोरता दिखा रहे थे।

चिंतनने बात का आरंभ किया - साहिब! हम दोनों इसी गाँव के जैन युवक हैं। दोनों खास मित्र हैं। वो गीत है ना ''जब कोई नही आता, मेरे दादा आते हैं'' इस गीत के भावों को पकडकर मैं इसे आपके पास ले आया हुँ।

महाराज-ऐसा क्या हुआ कि हमारी याद आयी? हमें यहाँ आये तीन दिन ही हुए हैं।

चिंतन - बात ही कुछ ऐसी है। इसकी कर्म कहानी आप सुनो और हमें मार्गदर्शन दो। महाराज - कहो...

चिंतन - इसके पिता का नाम **रतनचंद** है। जैन है। किराना का धंधा है। इसकी मम्मी का नाम **सविताबेन**। माँ धार्मिक और सरल थी, ऐसा सुना है। इसके बडे भाई का नाम **दिपेश** है, जो इससे पाँच साल बडा है। यह जब तीन साल का था, तब इसकी माँ का देहांत हो गया। शुरु के तीन साल इसे माँ का अच्छा प्यार मिला। माँ के अवसान के बाद कठिनाईयों के दिन शुरु हो गये।

उसके पिताजी ने फिर से शादी की। सौतेली माँ का प्रेम कितना होता है वो तो सब को पता ही है। इसके पिताजी का स्वभाव बहुत गरम... दिपेश भी पिताजी के ही स्वभाव जैसा। रतनचंदभाई को दिपेश बड़ा लडका होने के कारण उस पर विशेष प्रेम है। अपने बाद घर का मुख्य भी दिपेश ही होने के कारण उस पर ज्यादा ध्यान देतें और छोटे परेश की जवाबदारी दिपेश को सौंप दी थी।

अब देखने की बात यह है कि दिपेश को परेश पर कोई विशेष प्रेम नही था। उसे मारने का और मौके पर पापा के पास पिटाई कराने का एक भी अवसर वह नहीं जाने देता था।

परेश का किसी दूसरे लडके से झगडा हो जाए, तो दिपेश उस बालक को भगा देता, फिर परेश को मारता कि, तूने उससे झगडा क्यों किया? और फिर घर पर

पिताजी को खरी-खोटी बातें बता कर परेश की पिटाई करवाता। इसकी सौतेली माता भी दिपेश को विशेष कुछ कह नहीं सकती थी। अत: दिपेश की भूल होने पर भी परेश पर ही सारा गुस्सा निकालती। पहले खुद मार लेती, फिर इसके पापा आते तब बात में मिर्च-मसाला डालकर और मार खिलवाती। गलती होने पर सजा यह तो जग प्रसिद्ध है, पर बिना गलती डबल सजा यह इसकी करम कथा है।

म.सा. - यह सच में करम कथा ही है। क्योंकि कर्म ही ऐसे तरह-तरह के खेल अलग अलग व्यक्तिओं के पास कराता है। इसमें हम सब कठपुतलियाँ हैं। नचानेवाला कर्म है।

चिंतन - यह कर्म कौन है? अजैन जिसे ईश्वर कहते हैं, वो?

म.सा. - ऐसे देखा जाए तो यही ईश्वर है, क्योंकि हमारे जीवन की प्राय: एक भी घटना इनकी इच्छा बिना, इशारों बिना होती नहीं है। अजैन कहते हैं कि, ईश्वर की इच्छा बिना पत्ता भी हिलता नहीं, उसी तरह हम भी मानते हैं कि, कर्म के प्रभाव बिना प्राय: कुछ भी बनता नहीं। बेशक, वैसे देखा जाय, तो हम ऐसे ईश्वर को नहीं मानते, जो जीवो की हर एक प्रवृति में अपनी इच्छा द्वारा हस्तक्षेप करता हो। जैनमत के अनुसार अलग अलग व्यक्तिओं के साथ हमारा अवसर-प्रसंग पर अलग अलग व्यवहार ये सब कर्म की ही देन हैं। वो व्यक्ति तो मात्र डिलीवरी मेन है। किसी व्यक्ति का अच्छा व्यवहार उसकी गुणवत्ता है। वो व्यक्ति आभारपात्र है, किन्तु उसमें भी मुख्य भाग तो - निर्णायक परिबल तो कर्म का ही है। कोई व्यक्ति अयोग्य व्यवहार करे, उसमें भी इशारा तो कर्म का ही है।

चिंतन - परंतु कोई अमुक व्यक्ति हमेशा खराब व्यवहार करे तो उसमें उसका कोई अपराध नहीं?

म.सा. - ऐसे देखा जाए तो बिल्कुल ही नहीं। किसी व्यक्ति के पास तुमने दो साल पूर्व १० लाख रुपये लिए हो, फिर वो व्यक्ति रोज रोज उगाही के लिये आता रहे, तो क्या वो गुनहगार कहलायेगा?

चिंतन - नहीं, जब तक ब्याज सहित वापस दिये जाय नहीं, तब तक उसको उगाही करने का हक है।

म.सा. - बात यह है कि, जो इस भव में बार बार हमारे साथ खराब व्यवहार कर रहा है, वो पिछले भव में उसके साथ किये गए व्यवहार का ब्याज सहित उगाही कर रहा है।

चिंतन - परंतु उसे इस भव में कहाँ पता है कि मैंने पिछले भव में इसका बिगाडा था?

म.सा. - सही बात है। किंतु यहीं से कर्म की करामात शुरु होती है। पिछले भव में उसके साथ किये गए खराब व्यवहार के वक्त हमने और उसने ऐसे कर्म बांधे थे कि, कर्म उदय के वक्त उसे हमें परेशान करने की बुद्धि सुझती है। प्रसंग भी ऐसे बार-बार आते हैं कि, जिसको पाकर वो हमें परेशान करता रहता है।

चिंतन - यहाँ आपने कर्म बांधने की बात कही.... तो कर्म बांधने का और .. कर्म-ईश्वर बात कुछ मेल नहीं खा रही है।

महाराज - उसी वजह से मैंने पहले कहा था कि, ऐसे देखा जाए तो जैनमत अन्यों की कल्पना का जो ईश्वर है, उसे नहीं मानता, क्योंकि, यदि ईश्वर को दयालु मानना है, तो उन्हें न्यायाधीश मानना उचित नहीं। किसी को नरक, किसीको देवलोक... अच्छे कर्म करनेवालो को देवलोक, खराब कर्म करनेवालो को नरक-यह न्यायाधीश का काम है। दयालु का नहीं। अगर ईश्वर की इच्छा से सब कुछ होता तो दयालु ईश्वर किसी को भी दुख-दुर्गति मिले, बुरा करने कि बुद्धि मिले ऐसी इच्छा भी क्यों रखते ?

चिंतन - तो हकीकत क्या है ?

महाराज - हम ही हमारे भाग्यविधाता हैं। जैनमत कहता है कि, जीव अपने मन-वचन-काया से शुभ अशुभ विचार-वाणी-वर्तन से शुभ अशुभ कर्म बांधता है। फिर भविष्य में यही कर्म फल बताता है जिससे शुभ-अशुभ अनुभव होता है। खैर! यह बहुत बडी फिलोसौफी है। संक्षेप में समझ लो, आज जो कुछ भी होता है, वो कल के अच्छे बुरे काम का फल है। और जो ये सब अनुभव हो रहे हैं, उनमे आज हमारी भूमिका कैसी है ? उसके अनुरूप अगले भव में अनुभव होगा। इस तरह अपनी आज की भूमिका अपने आनेवाले कल के लिए बीज रूप है। अगर यह बीज गन्ने का है, तो मीठा रस मिलेगा, बीज करेले का हो तो कडवा रस।

चिंतन - तो क्या हमें आज परेशान करने वाला हमारा गुनहगार नहीं ?

महाराज - लोग दृष्टि से गुनहगार है, किन्तु आत्मिक दृष्टि से देखे, तो वह हमारा गुनहगार नहीं है। हमारा असली गुनहगार तो हमारे कर्म ही हैं। और इसके लिए भी सच में देखा जाए, तो जो गुनहगार है, वह भूतकाल में रहे हम ही हैं। इसी तरह की बात आज दिखने में हमें हैरान करने वाले के लिए भी है। वो हमारा गुनहगार नहीं, परंतु खुद का भविष्य बिगाड देने की अपेक्षा से खुद का ही गुनहगार है। अत: जो आज किसी का खराब करने की मात्र इच्छा भी रखता है, वह खुद का भविष्य बिगाड रहा है। अत: वह धिक्कारपात्र नहीं, दयापात्र है। यह बात बार बार सोच कर चिंतन करना, हृदयस्थ करना। इसके प्रभाव से आज गलत करने वाले भी मित्र, स्वजन,

दयापात्र लगेंगे।

चिंतन - एक अंतिम प्रश्न - इन सबको दयापात्र मान सकते हैं, पर मित्र क्यों? महाराज - इसीलिए कि, हमारे अशुभ कर्म का क्षय तो ही होता है, यदि वो ऐसा अनुचित व्यवहार करे। खुद का भविष्य बिगाड कर हमारें अशुभ कर्मो को मिटानेवाला क्या सच्चा मित्र नहीं? खुद के सर कर्ज चढ़ाकर हमें ऋणमुक्त करे, वह सच्चा मित्र ही है।

चिंतन - आपने बहुत अच्छी बात बतायी, अब आगे इसकी करम कथा सुनाता हुँ।

ऐसे तो परेश हमारी मित्र मंडली में सबका प्रियपात्र है। भोला होने से हम इसकी मजाक करे तो भी नाराज नहीं होता। हमारे हर कार्य में निस्वार्थ भाव से मदद करता है। हमें इस पर खूब सद्भाव है। तो जो इसे जानते हैं, उन सबको इसके प्रति सहानुभूति है। मगर घर में तो इसका हाल मुक्काबाजी सिखने के लिए लटकाई हुई भुसे की थैली जैसा है। सब इसे मार सकते हैं, बदले में अपना काम भी निकाल सकते हैं। यह भी कर्म की ही कमाल है ना।

महाराज - हाँ! कोई आदमी दो-चार लोगों को लूँटकर उन्हीं रुपयों से १००-२०० लोगो को प्रेम से खाना खिलाएँ। फिर भविष्य में भवितव्यतावश वापस इकठ्ठे होते हैं, तब जिन लोगों को लुँटा था, उनका व्यवहार और उन १००-२०० लोगो का व्यवहार कैसा रहेगा? बस यही बात है।

चिंतन - साहिब! इन सब कारणो सें इसे एक बुरी आदत पड गयी है।

महाराज - कौन सी?

चिंतन - ऐसे तो यह पूरे गाँव के लिए ईमानदार है, सिर्फ घर में ही नहीं। जिस दिन इसके पिता या भाई इसे बहुत मारते हैं, तब वो उसके एक दो दिन बाद मौका पाकर भाई या पिताजी की जेब में से पैसा चुराता है। उन पैसों से आइस्क्रीम खाता है, पिक्चर देखने जाता है। कभी हमें भी ले जाता है। एक दिन मैंने खुब दबाव डालकर उसे पूछा कि, तेरे पास पैसे कहाँ से आये? तो इसने कबूल किया कि, घर से चोरी करता हुँ।

मैंने कहा, यह अच्छी बात नहीं है। बुरी आदत लग जायेगी। तो इसने कहा, मैं अपने पिता और भाई को सजा दे रहा हुँ। वे बिना कारण मुझे बेहिसाब मारते हैं। फिर भी मैं चुपचाप सहन कर लेता हुँ। मुझे मारने कि सजा तो उन को मिलनी ही चाहिए ना! और इन पैसो में मेरा भी हिस्सा है। ये लोग सीधे तो मुझे खर्च हेतु एक फुटी कोडी भी नहीं देते।

म.सा. - इसकी फरियाद सही हो सकती है, पर उपाय बहुत खतरनाक है। समग्र भविष्य को बरबाद कर सकता है।

चिंतन - साहिब! इसीलिए तो मैं इसे आपके पास लाया हुँ। आपकी सब बाते यह सुनता है।

महाराज - पर कुछ बोलता नहीं है, कोई मनोभाव भी नहीं दिखा रहा है, माज़रा क्या है ?

चिंतन - जला हुआ आदमी क्या मनोभाव दिखायेगा? पूरी बात सुनने के बाद आप भी समझ जाओगे कि यह क्यों ऐसे स्तब्ध - उदास - शून्यमस्तक है।

महाराज - पूरी बात सुनाओ...

चिंतन - यह एक बार आठवी कक्ष में फैल हो गया। उस वक्त भी इसके पिता ने इसे बहुत मारा। दु:ख की बात तो यह है कि, घर में पढ़ानेवाला तो कोई नहीं, और इसे कोई पढ़ने भी नहीं देते। फिर पास कैसे हो सकता है? किन्तु रतनचंदचाचा कुछ समझते नहीं हैं। इसकी सही हालात का तो उन्हें ख्याल ही नहीं। हम इसके मित्र इस के फैल होने से पढ़ने में इससे आगे निकल गये। पर दोस्ती अटुट है। हमारे सहयोग से यह आठवी और नवमी कक्ष में पास हो गया। पर इस बार दसवीं - बोर्ड की परीक्षा में फिर से फैल हुआ। कल ही परिणाम आया। यह अठ्ठारह साल का हो गया है। फिर भी इसके पापाने इसे खूब मारा। बार-बार मार खा खाकर और गालियाँ सुन सुनकर इसकी सहनशक्ति इतनी बढ़ गयी है कि, कल भी चूं या चा किये बिना मार खा लिया।

म.सा. - भाई! अब इस का दंड देने के रूप घर में चोरी करना मत।

चिंतन - नहीं करेगा। अब नहीं, कभी नहीं करेगा!!

म.सा.- तुम इतने विश्वास पूर्वक कैसे कह सकते हो?

चिंतन - बस यही बात अब आ रही है। कल इसने मार खा लिया। आज करीब सुबह नौ बजे मैं और यह परेश जरा मन बहलाने के लिए गाँव के बाहर घूमने गये। नदी के किनारे एक पेड़ के पास इसी गाँव का एक मुस्लीम लडका और एक लडकी प्रेमालाप कर रहे थे। गलत दिशा में कदम आगे बढा रहे थे। मुझे ख्याल नहीं आया, पर इस परेश को पता चल गया - लडकी खुद की बहन है। सौतेली माँ की पहली लडकी रीटा। उसकी उम्र तो अभी मात्र चौदह साल की है। परेश खुद की बहन गलत चक्कर में फंस न जाये इसीलिए मुझे खडा रखकर खुद दौडा। उन दोनों को धमकाया। वो मुस्लीम लडका अपने स्थान पर भाग गया। रीटा घर चली गयी।

हम दोनों इस घटना पर चर्चा कर रहे थे। वहाँ तो इसका बडा भाई दीपेश

दौडते हुए आया। परेश को कॉलर पकडकर उठाया। चल! चल! घर पर तेरी आरती उतारने के लिए पिताजी राह देख रहे हैं। मैं दिपेश से कुछ प्रश्न करुँ पहले तो वो परेश को उठाकर घसीटते हुए घर ले गया।

वहाँ तो बडा हंगामा मचा हुआ था। रीटा ने अपनी मम्मी को गलत शिकायत की.... परेश मुझे बहला - फुसलाकर नदी किनारे ले गया और वहाँ मेरी इज्जत लूँटने का प्रयत्न करने लगा। वहाँ अचानक उसका मित्र चिंतन उसे ढुंढते आते देख वो जरा चौकन्ना हुआ और में छुटकर भाग आयी।

म.सा.- अरर! क्या बात कर रहे हो ?

चिंतन - हाँ महाराज! परेश बिलकुल निर्दोष है, उसका मैं साक्षी हुँ। पर उसपर इलजाम आ गया...

महाराज साहिब ने परेश के सामने देखा। परंतु वो तो मानो कि जड हो गया था। कोई संवेदना नहीं... गुरु महाराज समझ गये। अंदर से टुटा हुआ यह कहाँ अपना दिल हलका करेगा ? सतत मार-अपमान जैसे नरक के जीवों को जड-मूढ बना देते हैं। ऐसी इसकी हालात है।

चिंतन - साहिब! इसके मम्मी - पापा ने इसे जो बेलगाम मारा है क्या वर्णन करना ? यह खुद के बचाव में एक लफ्ज भी नहीं बोला। मार खाता ही गया, खाता ही गया।

इसमें तो इसकी सौतेली माँ का दिमाग और उछला। चाचा को कह दिया... यह अगर घर में रहेगा तो मेरी दोनों बेटियों की इज्जत जोखिम में है। यह परेश घर में तो नहीं - गाँव में भी नहीं चाहिए। अगर आपको इस पर प्रेम है और छोटा समझकर लाड लडाना है, तो मैं अपनी दोनों बेटियों को साथ लेकर मैके चली जाऊँगी।

और इसके पिताजी ने इसे फरमान किया... अभी घर से तो निकल जा। और रात होने के पहले गाँव में से भी निकल... गाँव में भी रहा, तो तेरी चमडी उधेड दुँगा और फिर पुलिस में तेरी शिकायत कर दुँगा।

इसे कुछ रकम भी दिये बिना - अरे! खुद के कपडे भी नहीं लेने दिये और घर से निकाल दिया। यह मेरे घर आया। मेरे वहाँ खाना खाया। मैं ने दो घंटे इस सांत्वना दी। फिलहाल तो अहमदाबाद जाने के लिए और वहाँ करीब महीना तक चले इतने पैसे मैंने मेरे पापाजी की संमति से दिये हैं। मैं उसे छोडने ही जा रहा था। उपाश्रय देखा और आपके आशीर्वाद मिले.... इसका भविष्य सुधरे उस हेतु से यहाँ ले आया।

गुरु महाराज ने परेश को पास में बुलाया। सिर झुकाने के लिए कहा, मंत्रित कर भाव से वासक्षेप डालते-डालते वात्सल्य से हाथ घुमाया और परेश के बंधन टुट

गये। 'स्वर्गीय माताजी का वात्सल्य भरा हाथ घूम रहा है' ऐसी संवेदना से वो महाराज की गोद में सिर रखकर फफक फफक कर रो पडा। चिंतन भी रोने लगा। गुरु महाराज की आँखे भी भर गयी। फिर भी मौन रखकर उसका हृदय खाली हो जाये तब तक उसे रोने दिया।

खूब रोने के बाद वह थोडा स्वस्थ हुआ। क्षणभर में फिर से पूरा स्वस्थ हो गया। खुद के आँसु से गुरु महाराज की गोद-कपडे गिले हुए हैं देख क्षमा मांगी - अरेरे! मैं ने आपके कपडे गिले कर दिये।

महाराजने सहानुभूति से कहा - अरे! तेरी बातों ने मेरे हृदय को गिला कर दिया। कपडे तो अभी सुख जायेंगे। तेरा शुभ हो उसके लिए मेरा भरसक आशीर्वाद है। किन्तु मुझे तुम्हें बहुत सी हितशिक्षा देनी है। परेश : दीजिए!

महाराज : (१) कभी चोरी मत करना। चोरी अंत में पकडी जाती है। और उससे इतना तीव्र दुर्भाग्य कर्म उपार्जन होता है कि, दूसरे भव में सौ जात के धंधे करने पर भी, तनतोड परिश्रम करने पर भी, अंत में तो गवाँने की ही बारी आती है। नौकरी मिलती नहीं। मिले तो थका देने वाला काम करने के बाद भी वेतन या तो मिलेगा ही नहीं, या तो मिले तो बहुत कम। घर तक पहुँचने से पहले ही जेबकतरा जेब काट डाले। तुम देखते हो... आज बहुत सारे लोग पैसा के बारे में टेन्शन लेकर घुम रहे हैं। कोई एकाध साहस करने पर ऐसा नुकसान कर बैठता है कि, जिसके सदमे से टेन्शन में आया हुआ वह कौन सा अनुचित कदम नहीं उठायेगा वही आश्चर्य है। इन सब का कारण है, चोरी। अत: तुम जहाँ नौकरी करो। कुछ और भी करो। भले चने-मुरमुरा खाना पडे, भुखों मरने की नौबत आये, पर चोरी नहीं करना।

(२) मैं तुम्हे पूजा के लिए नहीं कहता - क्योंकि तुम अहमदाबाद में कहाँ रहोगे कुछ पता नहीं। पर अहमदाबाद में बहुत जैन मंदिर हैं। समय मिले तो जितने मंदिर में भगवान का दर्शन कर सको करते रहना। प्रभु के पास क्षण भर के लिए मौन-ध्यान जैसी अवस्था में बैठकर 'उनकी करुणाधारा में स्नान कर रहा हुँ' ऐसे अनुभव का प्रयत्न करना। प्रभु के पास से निकलो तब रोज एकाध भले छोटा ही सही, एक दिन के लिए संकल्प कर निकलना। जैसे की आज एक बार ही भोजन करुँगा। आज हरी सब्जी का त्याग... आज रात्रीभोजन नहीं करुँगा। आज फल का त्याग वगैरह...

(३) कभी कोई स्त्री के लफडे में मत पडना। तुम्हें दीक्षा के भाव न आये और शादी करना हो - यह बात अलग है। इसके सिवा आँख निर्मल रखना...।

(४) भूल कर भी सीगरेट, तंबाखु, जुआ, शराब की लत में पडना मत। बहुत से लोग टेन्शन को दूर करने के नाम पर भी उसमें फिसल जाते हैं।

(५) तुम्हारे पिताजी, सौतेली माँ, भाई या बहन-किसी पर द्वेषभाव मत रखना। वे सब तुम्हारे पूर्वभव के दुष्ट कर्म को निकालने में परम सहायक बने हैं। तुमने पूर्वभव में किसी के उपर व्यभिचार का आरोप लगाया होगा। अत: इस भव में तुम बिलकुल निर्दोष होने पर भी, बहन की रक्षा करने के भाव होते हुए भी तुम्हारे उपर ऐसा आरोप आया। अब फिर द्वेष रखकर भविष्य को बिगाडना नहीं।

परेश : साहिब! पहली चार बातों के लिए तो मैं अभी से आपको विश्वास देता हुँ। पाँचवी बात के लिए मुझे बहुत प्रयत्न करना होगा। प्रयत्न करुँगा। किंतु अभी से विश्वास नहीं दिलाता।

परेशने चार बातों के लिए दृढता और पांचवी के लिए प्रयत्न की बात की, उसी से महाराजने प्रसन्न वदन से फिर से भरसक आशीर्वाद दिये। दोनों गये।

दूसरे दिन सुबह गुरु महाराज के पास आ कर चिंतन ने कहा - उसे मैंने अहमदाबाद की बस में भेजा है। जाते वक्त उसका मन स्वस्थ - प्रसन्न था।

तीसरे दिन चिंतन ने कहा - मैं ने कल रतनचंदचाचा थोडे स्वस्थ थे, तब पैर छू कर कहा - चाचा! परेश तो गया। चाचा ने कहा - हाँ! एक भार... पथ्थर गया। मुझे जरा भी अफसोस नहीं है। चिंतन! तेरे जैसा मित्र होने पर भी वो अपनी बहन पर नजर बिगाडे, इतनी हद्द तक नीचे उतर गया।

तब सही अवसर जानकर मैं ने चाचा को कहा - चाचा! सच्ची बात जानने जितनी आपकी धीरज हो, तो कहुँ।

चाचा : देख, सच्ची बात बताना। मित्रको बचाने के लिए स्टोरी तैयार करना मत। मैंने कहा - सच कहुँगा। मैंने रीटा की मुस्लीम लडके के साथ की बात कही... परेश उनके रंग में भंग डालने गया इसीलिए इस तरह उसे सजा मिली।

चाचा : हें! तू क्या बात कर रहा है? ऐसा हो ही नहीं सकता...

चिंतन : चाचा! आप रीटा पर नजर रखो। फिर जो सही लगे वो मुझे बताना। चाचा अभी तक मेरी बात मानने को तैयार नहीं है।

चौथे दिन चिंतन ने गुरु महाराज से कहा - कल रात को ही चाचा ने मुझे बुलाया.... मुझे कहा - तेरी बात सच है। एक ही दिन में विश्वास हो गया। मैं ने अब रीटा पर सख्त चौकी रखी है। उस मुस्लीम के भी समाज के अगवानी करने वाले से कल बात करुँगा। फिर कहा, मैं ने रीटा - उसकी मम्मी और दीपेश की बातो में आकर परेश पर अन्याय कर दिया। तुम्हे खबर है - परेश कहाँ है? पता, फोन नंबर हो, तो दे।

मैंने कहा - चाचा अहमदाबाद में कहाँ जाना वो कुछ तय नहीं था और उसके जाने के बाद मेरे पर भी कोई समाचार ही नहीं है।

चाचा : वो अहमदाबाद गया ? पैसे तो थे नहीं उसके पास।

चिंतन : चाचा! मैं ने मेरे पिताजी की संमति से पंद्रह सौ रुपये की व्यवस्था करके दी है।

चाचा ने तुरंत मुझे पंद्रह सौ रुपये देकर कहा - चिंतन! तू सच्चा मित्र साबित हुआ। मेरी पहली पत्नी का ये छोटा पुत्र! बेचारा तीन साल की उम्र से ही बिना माँ का। मैं ने उसे निकाल दिया। अरर! रतनचंद चाचा की आँखे भर गई।

मैं ने चाचा से कहा - चाचा! आपके जख्म पर नमक छिडकने के लिए नहीं, फिर भी मैं छोटे मुँह बडी बात करता हुँ। आपने परेश का जरा भी ध्यान रखा नहीं। दीपेशभाई ने परेश को बार बार मारा है। सौतेली माँ ने भी उसे हैरान करने में कुछ कमी नहीं रखी। और इतना कम पडा तो वे सब हमेशा आपको परेश के विरुद्ध गलत शिकायत करते रहे, जिससे आपने भी उसे मारने का ही काम किया। उसने अपनी हर एक वेदना-लाचारी-अन्यायभरी हालात का मुझे साक्षी बनाया है। खेर! अब इन बातों को ज्यादा वज़न नहीं देना है। उसके भाग्य ने उसके साथ क्रुर खेल खेला... आप सब उसमें निमित्त बने।

हाँ चाचा! अहमदाबाद जाने से पहले परेश को मैं गुरु महाराज के पास ले गया था। वहाँ गुरु महाराज ने उसे बहुत अच्छी हितशिक्षा दी। उसका मन भी हलका हो गया था। उसी वजह से अहमदाबाद की बस में बैठते वक्त उसने मुझे कहा था - तू मेरी ओर से पिताजी की माफी मांग लेना। अत: परेश की तरफ से एक बात की माफी मांगनी है।

चाचा - कौन सी बात ?

चिंतन - आप या दीपेशभाई उसे खुब मारते, उस गुस्से में उसके दंड रूप में वो आपकी जेब में से - दीपेश की जेब में से दूसरे - तीसरे दिन १०-२० रुपये चुरा लेता था। उस अपराध की माफी मांगने को मुझे कहा था। अत: उसकी तरफ से माफी मांगता हुँ।

म.सा. - क्या परेशने तुम्हें ये बात की थी ?

चिंतन - हाँ! आपके पास से निकलने के बाद हमारी दोनों की भी चर्चा हुई थी। उसे भी लगा - गुरु महाराज की सभी बातें मानी हैं। तो इस बात के लिए भी प्रथम कदम तो उठा ही लूँ।

म.सा. - बहुत अच्छा। फिर चाचा ने क्या कहा ?

रतनचंद चाचा क्षणभर तो चौंके, फिर कहा - उसने चोरी की उसकी माफी तो दे दी। उसका छुटकारा हो गया। परंतु, मैंने उसे कभी एकाध रुपया भी खर्च करने

को दिया नहीं। पिता होने के नाते मेरे अपराध की मैं माफी कैसे मागुँगा? मैं उसे इतनी बार बिना जाच-पडताल किये मारता ही रहा, उस अपराध की शुद्धि कैसे होगी? मैंने उसे इस तरह निकाल दिया, इस घोर अन्याय की क्षमा किस तरह से मिलेगी?

साहिब! चाचा सच में पश्चाताप की आग से जलने लगे। मुझे कहने लगे - तू उसकी अहमदाबाद में खोज कर। मैं भी कराता हुँ। मुझे शुद्धि करनी ही होगी। इसके बिना मुझे चैन नहीं मिलेगा... साहिब! आज तक का यह रीपोर्ट है।

म.सा. - चलो, कम से कम उसके पापा की इतना सताने के बाद भी बुद्धि ठिकाने तो आयी। शायद अहमदाबाद में पता मिल जाये तो उसका भविष्य तो खराब नहीं होगा। चिंतन! तूने जो मित्र होने की भूमिका अदा की है, उसके लिए तुझे दाद देनी पडेगी। परेश के दुर्भाग्य के काले रंग में यह सुनहरी किरण है। तू परेश के संपर्क में रहने की कोशीश करना। हम तो कल विहार करेंगे... चिंतन गया...

लगभग सात साल बाद अहमदाबाद के एक उपाश्रयमें दो युवक आये। गुरु महाराज को दोनों का चेहरा कहीं देखा होने का अंदाज आ रहा था। उसमें एक चेहरा देखते तो लगा, यह उस परेश का मित्र चिंतन लगता है। दूसरा... दिखने में तो चमकदार था। श्रीमंत लगा।

वहाँ चिंतन ने ही कहा - साहिब! पहचाना?

म.सा.ने कहा - धुंधला सा ख्याल आ रहा है। तुम चिंतन?

चिंतन : हाँ! इसे पहचाना?

म.सा. : ऐसे तो स्पष्ट ख्याल नहीं आता। पर तुमने पुछा, इसीलिए अनुमान कर रहा हुँ - परेश है ना? वहाँ तो वो पैरो में गिर गया और कहा - हाँ साहेब! परेश हुँ। आज जो कुछ हुँ उसमें आपका प्रभाव है। आपके आशीर्वाद हैं। आपकी हितशिक्षा है। महाराज : क्या हकीकत है?

परेश : अहमदाबाद आने के बाद शुरुआत के दिन भारी कठीनाई में गुजारे। मजदूरी भी की। भीख भी मांगी। भूखा भी सोया। फुटपाथ पर दिन निकाले। चने-ममरे जलेबी जैसे लगे। लगभग एक साल हैरान हुआ। अलबत मंदिर दर्शन करने का नियम पकड रखा था। उसमें गांधी रोड के श्री महावीर स्वामी मंदिर में लगभग रोज शाम को जाता था। क्षणभर के लिए जाप करता था। एक मारवाडी सेठ मुझे पता न चले इस तरह मेरा निरीक्षण करते रहते। एक दिन मुझे बुलाया। कौन हो? थोडी बहुत पुछताछ की। वे तोगाणी सेठ के रूप में पहचाने जाते थे। मुझे कहा, मेरी ऑफिस में लग जाओ। तुम्हारी कोई भी पोस्ट नहीं। मेरे छोटे - बडे काम करने के हैं। ऑफिसमें

सुबह से शाम ड्युटी देनी। तुम्हें खाने-पीने, वेतन इत्यादि मुझे योग्य लगे वो दूँगा।

मैंने बात स्वीकार ली। सेठ ने मेरी खाने-पीने-सोने की व्यवस्था कर दी। वेतन का ठिकाना नहीं था। कभी हजार दे देते। कभी वेतन की छुट्टी। स्वभाव से खूब कठोर - बेशक, स्टाफ में दूसरे किसी के साथ इतनी कडकाई नहीं। किंतु मेरे साथ बहुत रफ-टफ व्यवहार था। मुझे तो ऐसा सहन करने की आदत थी। आपकी बात याद रखकर मैं हाथ का शुद्ध - प्रमाणिक रहा।

धीरे धीरे सेठ की अहमदाबाद की छोटी - छोटी उधारी लाने के कार्य भी मैं करने लगा। छोटे-बडे ऑर्डर भी ले आता। माल पहुँचा देता। सेठ को विश्वास होता गया। ऐसा करीब दो साल चला। एकबार सेठने ड्रोअर में तीस हजार रुपये रखे थे। दूसरे दिन मिले नहीं। इलजाम मेरे पर आया। सेठने मुझे खुब मारा।

पर मैं एक लफ्ज भी नहीं बोला। मन में पिताजी का मार याद आ गया। सेठ थक गये। पुलिस में शिकायत करने का सोचते फिर से अपनी कुर्सी पर बैठ गये। फिर से ड्रोअर चेक किया। पैसे अंदर कोने में दबे हुए थे। पैसे तो मिल गये। सेठ को मुझे मारने का बडा अफसोस हुआ। मेरी ईमानदारी पर विश्वास दृढ हुआ। अलबत, मेरी माफी तो मांग सके नहीं, क्योंकि सेठ थे। परंतु व्यवहार मुझे खुश करने के लिए कोमल करने लगे। मुझे इस बात का संतोष था कि मेरे पर अब इलजाम नहीं है।

मेरे प्रति बढे सद्भाव के ही कारण उत्तर गुजरात में उगाही के लिए जाना था तब मुझे साथ ले गये। हमेशा मॅनेजर को ले जाते। इस बार मॅनेजर बीमार थे। तो सेठ ने मेरा नंबर लगाया। हम सात दिन टुर में रहे। सेठ ने अपने जैसी ही सुविधा मुझे दीलवायी। उगाही वसूल कर हम सात दिन के बाद डीसा से निकले। ड्राईवर की तरफ पिछली सीटपर सेठ बैठे थे। मैं सेठ की दूसरी तरफ। अचानक ड्राईवर का कार पर से कंट्रोल गया। रात के बारह बजे की यह बात। कार रोड पर से उतर कर पेड़ के साथ जोर से टकराई।

साहिब! आपके आशीर्वाद से मुझे खास कुछ लगा नहीं। पर सेठ और ड्राईवर दोनों ऑन दी स्पोट... ऑफ... उस वक्त वहाँ रास्ता सून-सान था। हम दोनों के बीच जो ब्रीफकेस थी, उसमें नकद सत्तर लाख रुपये थे। मुझे पता था।

मैं ने ब्रीफकेस सम्हालकर अलग रखा। सब को फोन कर बुलाया। सेठ के तीनों बेटे दौडकर आये। सब कारवाई हो गयी।

सेठ की मृत्युसंबंधी सब क्रिया हो जाने के बाद चौथे दिन मैं सेठ के बंगले पर गया। तीनों बेटे और सेठ की पत्नी सब हाजिर थे। मैंने घटना कैसे हुई उसका विवरण दिया और ब्रीफकेस सोंपते हुए कहा - हम उधारी वसूल के लिए गये थे। सत्तर लाख

रुपये हैं। हर एक स्थल से कितनी उधारी वसूल हुई, उसका विवरण सेठ ने इस डायरी में लिखा है। सम्हाल लो।

म.सा. : शाबाश! परेश! तुमने सच्ची ईमानदारी निभायी।

परेशने गुरु महाराज के चरणस्पर्श करते हुए कहा - साहिब! आपने दिये हुए नियम के प्रभाव से ही यह संभव हुआ है।

सेठ की पत्नी ने मुझे पूछा - हमें तो सेठ के साथ इतनी बडी रकम है पता ही नहीं था। वहाँ एकांत भी था। तो तुम्हें क्या निगल जाने का मन नहीं हुआ?

मैंने कहा- माताजी! मेरे ये तीन दिन बडे उहापोह में गये। एक बार मुझे ऐसी इच्छा भी हुई थी... ये पैसे लेकर सीधे गाँव जाकर पापा के सिरपर पटक दूँ... आपके लिए निक्कमे परेशने देखो कैसी कमाई की? परंतु मुझे ऐसे हर एक खराब विचार के अंत में मेरी माताजी और गुरु महाराज साहिब नजर के सामने आते। जैसे कि वे मुझे रोक रहे हैं! अत: आज दृढ होकर बेग सोंप दी।

तीनों भाई बोले- परेशभाई! अलबत पिताजी के मौत का बहुत दु:ख है। पर अब हमे सारे सूत्र मिल रहे हैं! पिताजी क्यों सात दिन की टुर पर गये थे? अलबत पिताजी की हमारे साथ कोई साफ बात हुई नहीं थी। हमें एक प्रोजेक्ट के लिए नयी कंपनी की स्थापना करनी थी। उसके लिए सवा करोड रुपये चाहिए थे। बैंक लोन मिल सकता था। पर पिताजी लोन से धंधा करने के विरोधी।

पचास लाख रुपये तो तैयार थे। पिताजी का दूसरा विचार था। वर्तमान धंधे को आँच नहीं आनी चाहिए। इसमें जो रकम हैं, उसमें से कुछ नहीं मिलेगा... हम उलझन में थे। अब क्या करना? इसी में पिताजी ने सात दिन की टुर का कार्यक्रम बनाया। शायद उनकी धारणा होगी - पुत्रों का प्रोजेक्ट होना चाहिए। उसके लिए उधारी में अटके पैसे आ जाये, तो काम हो जायें।

परेशभाई! पिताजी के अकाल अवसान के बाद अब हम यही सोचने वाले थे कि क्या करेंगे? वर्तमान धंधा कम करके उसमें से पैसे लेकर नया प्रोजेक्ट शुरु करना या उस प्रोजेक्ट को स्थगित रखना? तुमने अपनी जबरदस्त ईमानदारी से हमारी उलझन सुलझा दिया। हम तुम्हारे बहुत आभारी है।

उस दिन तो शाब्दिक आभार - चाय-पानी, बात पूरी। परंतु दूसरे दिन मुझे फिर से बंगले पर बुलाया। माताजी ने ही बात चलायी.... परेशभाई! किसी को भी शक न हो जायें उस तरह इतनी बडी रकम तुम निगल सकते थे। और तुम्हारी बातों से तो लगता है, तुम्हें इनकी जरुरत भी थी। फिर भी तुम ईमानदार रहे। हमने खुब सोचा। अब नया प्रोजेक्ट शुरु होगा। उसमें अब तक तीन बेटे पार्टनर थे। आज से

तुम भी मेरे अडोप्टेड सन-गोद लिये हुए बेटे हो। इस प्रोजेक्ट में तुम भी बराबर के पार्टनर होंगे। चारों के २५%, २५% रहेंगे। अब आश्चर्यचकित होने की बारी मेरी थी। इतने बडे पारितोषिक की तो कल्पना ही नहीं थी।

फिर तो मुझे रहने के लिए अच्छा बंगला और अच्छी कार भी मिली। कंपनी जोरदार चलती है, अत: मुनाफा भी अच्छा मिलता है। साहिब! ये सब आपका प्रभाव है। आप मुझे लाभ दीजिए। मुझे कुछ भी सूचन करो। संतोष होगा।

म.सा. : तुम्हें संतोष हो ऐसा लाभ देना है या मुझे ?

परेशभाई : पहले तो आप ही। आपको संतोष हो तो ही वो लाभ गिना जायेगा - नहीं तो गले लटकाया हुआ कहलायेगा।

म.सा. : तो तुम्हें तुम्हारे पिताजी वगैरह के साथ -

चिंतन : मैं परेश को मिला तब रतनचाचा की बात की थी। परेश ने फोन करके माफी मांगी थी। दीपेश - सौतेली माता सबसे माफी मांगी थी। दीपेशभाई ने रतनचाचा को परेश को बुला लेने कि इच्छा पर जबरदस्ती से रोक लगा दी थी। सौतेली माता मध्यस्थ रही। अब रतनचाचा और सौतेली माता दोनों गुजर गये हैं। दीपेश को परेश देखे नहीं सुहाता। रीटा परेश का अब मुस्लीम से बचाने के लिए आभार मानती है। भाई के रूप में स्वीकार करती है।

म.सा. : तुम्हारा परेश के साथ मिलन कैसे हुआ ?

चिंतन : मैं भी दो साल बाद अहमदाबाद सेट होने के लिए आया। मैंने दुकान शुरु की थी। वहाँ एक बार साईकल पर जाते परेश की नजर मेरेपर पडी। तुरंत मेरे पास आया। हम मिलें। बहुत बातें हुई। साहिब! बस उसके बाद महीने में ही इस साहिब के सितारे बदल गये।

म.सा. : मैं यहाँ हुँ वो कैसे पता चला ?

चिंतन : आज मैंने अखबार में सहज शहर कार्यक्रम में आपके व्याख्यान (प्रवचन) के समाचार पढ़े। तुरंत मुझे लाइट हुई। मैं ने परेश को फोन किया। वो तो आपको मिलने के लिए आतुर ही था। तुरंत हम दोनों यहाँ आ गये।

परेश : साहिब! मुझे अब दीपेश पर जरा भी द्वेष नहीं है। मैं उसे आज भी वार-त्यौहार फोन करता हुँ। काम-कार्य के लिए पुछता हुँ। पर साहिब! उसके मन में पूर्व के कोई कारण से मेरे लिए ३६ का अंक है। पहले मुझे तुच्छ गिनता था। मेरा फोन आने पर मैं कुछ मागुँगा ऐसा डर रखता था। अब फोन करता हुँ, तो उसे लगता है कि, मुझे जलाने और रौब झाडने के लिए फोन करता है। किंतु साहिब! आपकी सब बातों से मुझे लाभ ही हुआ है। फिर अंतिम बात भी क्यों नहीं मानुँ? मुझे उसपर भाई के

जैसा प्रेम ही है। और प्रभु से रोज प्रार्थना करता हुँ - कि, दीपेशभाई फिर से मुझे भाई के रूप में स्वीकार ले!

महाराजने दोनों को धन्यवाद देकर पूछा - अब भविष्य का क्या प्लान है?

परेश : अभी तो अकेला हुँ। आपके प्रभाव से ही फुटपाथ के वे दिनो में भी बुरी आदत लग जाये ऐसे संयोगो में - ऐसी आस-पास की बस्ती, ऐसे दबाव के बीच में भी मैं किसी भी बुरी आदत में फँसा नहीं, किसी स्त्री के संग संबंध रखा नहीं। संसार की विचित्र घटनाओं को देख अभी तो शादी करने की इच्छा भी नहीं है। मैंने यह भी देखा है कि जो माँ-बाप के बच्चे अच्छी इच्छा करते हैं, वे माँ-बाप पास धन नहीं होने के कारण उनकी वो इच्छा पूरी नहीं करने के अफसोस से दु:खी हैं। और जिन माँ-बाप के पास बालकों की सब इच्छाए पूरी कर सके इतना धन होता है, वे माँ-बाप बालक की वैसी दुष्ट इच्छाओं को सुनकर दु:खी होते हैं।

चिंतन : महाराज! परेश का भाग्य इस तरीके से अचानक पलटा उस में भी कर्म का ही प्रभाव है ना?

महाराज : वो ईमानदार रहा, वो उसका शुभ पुरुषार्थ है। अकस्मात में मरा नहीं, वो इसके बलवान आयुष्य कर्म का प्रभाव है। ऐसे तो आज के अच्छे दिन इसके पुण्योदय का ही प्रभाव है। परंतु उस पुण्योदय को प्रगट होने में प्रबल निमित्त बना उसका ईमानदार रहने का शुभ पुरुषार्थ। सभी होते अच्छे - बुरे अनुभव में पूर्वभवीय शुभाशुभ कर्म ही मुख्य कारण गिन सकते हैं। किंतु उन कर्मों का जो विचित्र उदय होता है और उससे जो विचित्र अनुभव होते हैं, उसमें बहुधा खुद के या दूसरों के अच्छे - बुरे व्यवहार निमित्त बनते हैं।

चिंतन : बस! आज जो ईमानदारी दिखायी, उसीसे इस भव में अच्छा मिल गया। अब परलोक में तो कुछ नहीं ना? और फिर तो, परलोक मानने की जरुरत भी क्या है?

म.सा. : वर्तमान में खुद के वैसे कसुर बिना जो कडवे अनुभव सहने में आते हैं, या खुद के वैसे प्रयत्न या खुद की वैसी बुद्धि बिना भी जो अच्छे अनुभव होते हैं, वे सब पूर्वभवीय कर्मो की महत्ता समझाते हैं। इसीलिए परलोक तो है ही। इसके आज के प्रामाणिक व्यवहार से जो पुण्योदय प्रगटा है, ये तो पूर्वभव संबंधी था... उस में पुरुषार्थ निमित्त बना। सच में तो इस प्रामाणिकता की भूमिका के समय जो शुभ कर्मों का उपार्जन किया, उसके प्रभाव से अब आने वाले अगले भव में भी विशिष्ट पुण्य का अनुभव उसे होगा। फिर दोनों गये।

घटनाओं का चक्कर

आज से करीब पंद्रह - सोलह साल पूर्व एक भाई - नाम रखेंगे **महेशभाई** - एक लगभग ३५-४० साल की विधवा लगती बहन - नाम रखेंगे **कामिनीबहन** को लेकर साधु महाराज के पास आये। महेशभाई महाराज साहिब के परिचित थे। बहन अपरिचित। बहन के साथ उनका लगभग पंद्रह वर्ष का पुत्र और तेरह वर्ष की पुत्री थी। बहन का चेहरा चिंताकी आग में जलकर काला-फिक्का पड़ गया था। आँखों में निराशा-दीनता दिखायी दे रही थी।

महेशभाई ने कहा - यह कामिनीबहन है। मेरे एक समय के खास मित्र की धर्मपत्नी है। यह इनका पुत्र **अपूर्व** है। और यह इनकी पुत्री **भव्या** है। इन्हों ने बहुत ही कम समय में समग्र जीवन को हिला दें ऐसा बडा झटका खाया है। सुख के हिमालय से दु:ख की खाई में गिरे ही नहीं, बल्कि धक्का मारकर गिरा दिये गये हैं। स्वजनों ने ही भयंकर मानसिक - आर्थिक आघात की आग में भून (जला) दिया है।

महेशभाई की बात सुनकर महाराज साहिब स्तब्ध हो गये। पर वे तीनों तो गुम सुम अवस्था में ही रहे।

महाराज साहेब ने महेशभाई से पूछा - ऐसी कौन सी घटना हुई?

महेशभाई - इनके पति **रमेश** और मैं एक क्लास में पढ़े थे। रमेश शादी के बाद तुरंत पत्नी को लेकर पश्चिम ऐशिया - दुबई कमाने चला गया। वहाँ एक मुस्लीम पार्टी के साथ पार्टनरशीप में सोने का धंधा जमाया। भारत तो कभी कभी आता। यहाँ सुरत में उसका छोटा भाई सुरेश उनके पापा और परिवार के साथ रहता है। रमेश जब आता था, तब वहीं उतरता था। फ्लैट पापा का था दुबई गया तब भी यही फ्लेट था। अब तक रमेश को खुशहाली थी। खाते-पीते सुखी था। दुबई में पत्नी परिवार के साथ बड़ा खुश था।

किंतु अचानक मात्र आठ महीने पहले ही उसके मुस्लीम पार्टनर ने दगा किया... पहला झटका दिया। रमेश पर झुठा इलजाम लगा कर, वहाँ की सरकार की सहायता से उसे निकाल दिया। सरकार भी मुस्लीम वो भी वहाँ का नागरिक था। अत: किसी भी प्रकार की भी जाँच - पडताल किये बिना ही पूरे परिवार को पहने

कपडे दुबई से निकाल दिया। बेचारे रमेश को परिवार के साथ विशेष कुछ लिये बिना मुंबई आना पडा।

म.सा. - पर वहाँ उसके घर बार वगैरह तो होंगे ना, उसका क्या हुआ ?

महेश : उस मुस्लीम ने सब जब्त करवा दिया। और सुनने में आया है कि खुदने प्राप्त कर लिया।

म.सा. : खेर! कलिकाल की विचित्रता है कि अतिविश्वास विश्वासघात का कारण बनता है। हाँ, फिर क्या हुआ ?

महेश : जब मुंबई उतरे तब पत्नी तो उदास थी, अब भारत में आजीविका के लिए क्या करेंगे ? पर रमेश ने आश्वासन देते हुए कहा - तू क्यो चिंता कर रही है ? मैं ने जब कभी भारत आना पडे तो भविष्य में क्या करना उसकी योजना कर ही रखी थी। पगली! तुम्हें पता नहीं, मैंने टुकडे - टुकडे में **सुरेश** को आज तक लगभग दस किलो सोना और दस लाख रुपये भिजवा दिये हैं। उस मुस्लीम देश में मुसलमान के भरोसे कितना रहना चाहिये ? अब उस रकम से और सोने से यहाँ व्यापार की जमावट करुँगा। कामिनीबहन सुन कर स्वस्थ हुए। बाद में उनका परिवार सुरत गया। सुरेश को और उनके पिता को समाचार मिल गये थे।

म.सा. : बाद में धंधा सुरत में शुरु किया या मुंबई में ?

महेश : अरे साहिब! करुण दास्तान तो अब शुरु होती है। ''सगा करे दगा'' यह बात झूठी नही है। वे सुरत तो गये। पर अब रमेश कोई सोनेका अंडा देनेवाली मुर्गी नहीं था, लेकिन अब तक दिये अंडो में हिस्सा मांगने आया हुआ मुर्गा था। यह बात सुरेश जानता था। अत: स्वागत हुआ नहीं। सगे बापने भी कोई उत्साह दिखाया नहीं।

रमेशने सुरेश से कहा - तू जरा भी चिंता मत कर। मैंने जो सोना भेजा है, उससे फिर से धंधा जमायेंगे।

वहाँ तो सुरेश की पत्नी **मालिनीबहन** गरज उठे - कौन सा सोना और कैसी बात ? आपने अब तक हमें कुछ भेजा नहीं। ऐसे ही गले मत पडो। हमारा भी परिवार है! वहाँ गोलमाल कर यहाँ आये और अब यहाँ हमारे गले मत पडो। रहना हो तो दो-चार दिन भले रहो, फिर जो व्यवस्था करनी हो, वो कर लेना। तुम्हारे बुरे व्यवहार का असर हमारे घर पर पड़ना नहीं चाहिये।

आघात से ग्रस्त रमेश ने सुरेश की ओर देखा। सुरेश ने मुँह फेर लिया। रमेशने पिताजी से कहा - पापा! आप तो कुछ बोलो! मैं ने अब तक दस किलो सोना और इतने ही पैसे वगैरह भिजवाये हैं, इसके बारे में आप कुछ तो स्पष्टीकरण

कीजिए।

उसके पिताजी ने कहा - इस वृद्धावस्था से मेरी बुद्धि मंद हो गयी है। मुझे कुछ याद नहीं है। और यह फ्लेट भी सुरेश के नाम हो गया है। अत: मैं तुम्हें यहाँ रुकने के लिए भी कह नहीं सकता। बाजी मेरे हाथ में नहीं।

सगे बाप के माईनस डीग्री जैसे ठंडे शब्दोंने तो रमेश के पूरे परिवार को हिला दिया। हताश होकर परिवार उस घर से निकल गया। रमेशने मुझे रोते रोते सारी बातें फोन पर बतायी।

मैंने मुंबई में - नालासोपारा में रहने की एक व्यवस्था कर दी। पर रमेश सगे भाई और पिताजी के ऐसे विश्वासघात को पचा सका नहीं। छह महीने पहले ही अटेक से मर गया। अब यह परिवार पूरी तरह अनाथ निराधार हो गया है। भाभी दोनों बच्चों के साथ मर जाने के विचार कर रही है। आप कुछ मार्गदर्शन दों।

वहाँ तो कामिनीबहन बोली... महाराज! मुझे कोई उपदेश नहीं सुनना... धरम - करम, ईश्वर - बीश्वर कुछ है ही नहीं। अगर होते तो हमारे साथ ऐसा व्यवहार क्यों हुआ?

म.सा. : कामिनीबहन! मैं आपके दु:ख को समझ सकता हुँ। आप बनी हुई घटना से खूब शोक में हो। मुझे आपके प्रति खूब हमदर्दी है। इसीलिए आपको सबक के रूप में नहीं, पर वास्तविकता को समझाने के लिए कुछ कहना है। आप धरम या ईश्वर की निंदा कर रहे हो, पर मैं आपको पूछुँगा - जब आप दुबई में सुखी थे, तब आपको धर्म या ईश्वर कितनी बार याद आये थे? कितनी बार उनका आभार माना था?

कामिनीबहन उसका जवाब दिये बिना बोल उठे - पर उन्होंने तो छोटे भाई पर विश्वास रखकर सोना भेजा था। तो इसके बदले में ऐसा विश्वासघात क्यों?

म.सा. - बहन! भगवानने कर्म का अटल सिद्धांत बताया है - बिना कारण कार्य नहीं होता! रमेशभाई ने पूर्वभव में छोटे भाई के साथ कोई प्रकार की दगाबाजी की होगी। जिसका यह जवाब हो सकता है।

कामिनीबहन : उपकार करनेवालों पर अपकार करनेवालों को ऐसे निर्दोष मान लेने की यह थियरी अच्छी है! सबूत बिना ऐसी बिना सिर-पैर की बातें कर्म के नाम चढ़ा देना तो आपका धंधा है।

म.सा. : हमारा धंधा आवेश में आये हुए को शांत करने का, उपाय ढूंढने का, बताने का है। संघर्ष के मार्ग पर दुनिया को कुछ नहीं मिला। समाधान के मार्ग पर ही कुछ मिल सकता है। वैर - शत्रुता और अदालत के चक्कर से किसके अन्याय दूर

हुए हैं? मनको द्वेष - ज़हर - संताप में डूबा रखने से किसे लाभ हुआ है? मैं यह नहीं कहना चाहता कि, सुरेशभाई निर्दोष है। उस बेचारे को भी दंड तो भुगतना ही होगा। कितना और कब यह तो केवलज्ञानी ही कह सकते हैं। बाकी भगवान ने बतायी हुई कर्म की थियरी झुठ नहीं है। थाली में गरम-गरम रोटी आती है तब अंदर बनती रसोई नहीं दिखायी देने पर भी हम मान लेते हैं कि रोटी अभी ही चूले पर से उतरी है। नागदत्त के पिताजी ने कसाई के साथ दगा किया, तो उसके दंड स्वरूप उसे कसाई का बकरा बनकर हिसाब चुकाना पडा। ऐसे दृष्टांतो से भगवान ने कार्य-कारण भाव बताया है। अत: इसी के आधार पर जहाँ ऐसे फल दिखे, वहाँ ऐसे कर्म को कारण मानने में ही समझदारी है।

कामिनीबहेन : तो क्या मेरे पतिने उनके छोटे भाई को पूर्वभव में दगा दिया होगा, इसी वजह से इस भव में उनके छोटे भाई ने उन्हें दगा दिया ऐसा मान लेना? इसका मतलब हिसाब बराबर हो गया। उनके छोटे भाई को कोई दंड नहीं। उसके विश्वासघात से मेरे पति अटेक से मर गये। तो भी उसका कोई कसुर नहीं।

म.सा. : मैंने पहले ही कहा है, वो सुरेशभाई निर्दोष है ऐसा मेरा कहना नहीं है। उसने जो गलत किया और भाई की मोत में निमित्त बना, उसका दंड कर्म इस भव में नहीं तो उसे अगले भव में अवश्य देगा ही। बाकी तो आप की नज़र में सुरेशभाई भयंकर अपराधी होते हुए भी क्या आप सरकार के पास से न्याय पा सकोगे ? यदि नहीं, तो फिर आप सरकार को निकम्मी या अस्तित्वहीन क्यों नहीं मानते ?

कामिनीबहन : अगले भव में! आपके कहने के मुताबिक पिछले भव में ठगा गया। अब अगले भव में ठगा जायेगा - हैरान होगा - इस भव में तो लीला लहेर ही है। और जो भव बीत गया, और वो आनेवाला भव किसने देखा है?

म.सा. : यही तो कर्म का खेल है, अपराध का दंड अन्य भव में मिलता है, अत: अपराधी को अपराध करने में मजा आता है, डर रहता नहीं, और जो सजा पा रहा है, वह अपने आप को निर्दोष मान कर बिना कारण ऐसा दंड है ऐसी समझ से दु:खी, द्वेषी और नास्तिक हो जाता है। अगर उसी भव में ही दंड मिल जाता तो, कौन अपराध करेगा? अलबत्ता, ऐसा एकांत भी नहीं है कि 'इस भव के कार्य का फल अगले भव में ही मिलेंगे। इस भव में मिलेंगे ही नहीं।' उग्र पाप-पुण्य के फल इस भव में भी भुगतने के होते हैं। और जब मनुष्य का विनाश होना नजदीक होता है, तब उसे विपरीत बुद्धि सुझती है।

इतना समझ लो - पेट में गया हुआ सड़ा धान नुकसान करता ही है, किसी को तत्काल करता है, किसी को लंबे समये के बाद। प्रबल पुण्य लेकर आये हुए को बुरे

काम करने पर भी इस भव में थोडी भी आंच न नहीं आती। फिर भी बुरे काम तो बुरे काम ही होते हैं। आज नहीं तो कल, इस भव में नहीं तो परभवमें, नुकसान करते ही हैं। दु:ख की बात यह है कि जब परभव में नुकसान करता है, तब मानव खुद को निर्दोष मानता है। अत: ये दु:ख, बाधा क्यों आए? ऐसे दु:ख से ज्यादा दु:खी होकर भगवान की या धर्म की निंदा करता है। दगा-फटका-अनीति-अप्रमाणिकता ये सब तो कपास के गोदाम में रुई के ढगले के नीचे रखी हुई सुलगती अगरबत्ती है। जो धीरे धीरे सब कुछ जला देती है। फिर भी पता नहीं चलता कि क्यों जल गया?

कामिनीबहन : तो फिर लोग अनीति के पीछे क्यों दौडते हैं?

म.सा. : धन की घोर लालसा!

कामिनीबहन : अच्छी तरह जीने के लिये धन तो चाहिए ना!

म.सा. : साधु की शोभा जैसे अपरिग्रही रहने में है, वैसे जैन गृहस्थ की शोभा अल्पपरिग्रही - प्रमाणिक रहने में है। घर-परिवार अच्छी तरह से चल सके उसके लिए प्रमाणिक प्रयत्न से धन का उपार्जन करना यह गृहस्थ का कर्तव्य है। शास्त्रकर्ता उसे अर्थपुरुषार्थ कहते हैं। मगर धन की लालसा तो अर्थसंज्ञा है।

कामिनीबहन : किंतु आज तो हर जगह धन की ही बोलबाला है ना! क्या आपके वहाँ भी धनवान को ज्यादा महत्त्व नहीं दिया जाता?

म.सा. : हाँ! आज धन की चकाचौंध चारो और फैली है। आज धन होना महत्त्व का है, उसके लिये साधन शुद्धि गौण है। इसीलिए तो सुरेशभाई ने विश्वासघात किया! आज सब भ्रष्टाचार में लिप्त हो गये हैं। धर्मक्षेत्र में भी कहीं कहीं इसकी महत्ता बढ़ी है। पर फिलहाल इसकी चर्चा नहीं करनी। किन्तु बहन! इन धनवानों को बाहर मान मिलता है, सुविधा मिलती है, सन्मान-सत्कार मिलता है, फूलमाला पहनाये जाते हैं, उनका हर एक वचन सर्वज्ञवचन गिना जाता है। सब बराबर! किंतु ऐसे गलत रास्ते धनवान बने हुए ही बाद में अंदर से खुद को खाली - एकाकी महसुस करते हैं। सभी पर का विश्वास खो देते हैं। ऐसे धन की गरमी शांति, सज्जनों का सहवास, हितेच्छुओं की सलाह, स्वजनों का प्रेम, संतानो के संस्कार, इन सबकी होली से प्रकट हुई आग है। खेर! मुझे कहना है, आप सुरेशभाई पर द्वेष मत रखना। उनकी दया खाना!

कामिनीबहन : दया? जिसका नाम सुनना भी पाप है, उसके पर दया ?

महाराज : हाँ। अगर उन्हें किये विश्वासघात की सजा इस भव में नहीं मिली, तो उन्हें पश्चाताप -प्रायश्चित का अवसर नहीं आयेगा। और आनेवाले भव में सिर्फ दंड ही मिलेगा, वो भी अनेक गुना होकर और वो भी कोई निमित्त-कारण की

जानकारी बिना का! अत: उस वक्त भी पश्चाताप की जगह मन संताप - द्वेष - संक्लेशसे ही भरा रहेगा, जिसका नतीजा होगा वापस दंड। कर्मबंध - उदय - दु:ख ऐसा सीलसीला तब तक नहीं रुकेगा, जब तक पूरी समता - प्रसन्नता और पूर्ण मैत्रीभाव के साथ सहन नहीं करेगा। अपने संतानों को भी सलाह देना - संपत्ति भले चाहिए, पर किसी के शाप की - हाय की - अनीति की नहीं चाहिए। प्रमाणिक पुरुषार्थ की संपत्ति में सुगंध है। पहले में दुर्गंध...

कामिनीबहन : उस मुस्लीम ने भी दगा दिया... वहाँ भी यही बात मान लेनी?

महाराज : बहन! गलत मत समझना! पर मैं पूछुं - रमेशभाई यहाँ जो सोना भेजते थे, वो उस मुस्लीम पार्टनर को पूछकर भेजते थे?

कामिनीबहन : पता नही... पर शायद चुपचाप भेजते होंगे।

महाराज - फिर आपके पास उस मुस्लीम के लिए शिकायत करने का कोई हक है सही?

कामिनीबहन : किंतु गुनाह कितना और सजा कितनी?

म.सा. : क्या कभी गुनहगार को ''मुझे दंड कितना मिलना चाहिए'' ऐसा निर्णय करने का कोई अधिकार है?

कामिनीबहन : आप कहते हो कि कर्म ही सजा करता है। यहाँ तो उस मुस्लीम ने ही दंड दे दिया।

म.सा. : हाँ! दंड का अधिकार कर्म का ही है। और कर्म के ही प्रभाव से उस मुस्लीम ने अधिकार अपने हाथ में लिया। वो उसका गुनाह है। उसे उसका दंड कर्म करेगा। कर्म की यही तो चाल है। दंड कर्मोदय से मिलता है। किन्तु निमित्त बाहर की व्यक्ति बनता है। कर्म तो नज़र के सामने आता ही नहीं। अत: दंड पाने वाला स्वयं को निर्दोष मानता है और सामने वाले को दोषित। और जो कर्म का हथियार बनकर तीव्र राग-द्वेष से दंड देने का काम करता है, वो भी बेचारा कर्म के चक्कर में फंस जाता है। पर इससे यह तो पता चलता है कि हर एक नापसंद घटना वास्तव में किये हुए अपराध का दंड ही है। सजा ही है।

रमेशभाई ने मुस्लीम को दगा दिया, तो दंड मिला। और एक बात समझ लो। सेठ मालमें चोरी करते हैं यह जान लेने के बाद नौकर ऑफिस में चोरी करता है, उसमें कोई नयापन नहीं। वो मानता है (१) चोरी करने में हानि नहीं, सेठ करते ही है ना! (२) चोरी किए बिना सुखी नहीं हो सकते! (३) मैं कहाँ सेठ का चुरा रहा हुँ?... चोरी का ही चुरा रहा हुँ। सुरेशभाई को सोना निगल जाने की बुद्धि क्यों हुई? वो जानते होंगे

कि बडे भैया भी कहाँ साहुकार है? और चोरी का माल घर में आया, तो उनकी बुद्धि भी भ्रष्ट हो गयी।

कामिनीबहन : पर पिता एक पुत्र पर पक्षपात कर दूसरे को अन्याय करे...

म.सा. : इसमें एक बात पूर्वभव के ऋणानुबंध की है। पूर्वभव में छोटे ने पिताजी को सहायता की होगी और बडे ने हैरान! और फिर अपवित्र धन किसकी बुद्धि भ्रष्ट नहीं करता? महाभारत में भीष्म कहते हैं ना कि, दुर्योधन का अन्न खाने से मेरी बुद्धि भ्रष्ट हुई है, अत: पांडवो के साथ हो रहे अन्याय को देखकर भी मैं आँखे बंद कर रहा हुँ।

महेशभाई : महाराज साहिब! बहुत बातें हुई! अब इनको कहो कि, मरने की बात छोड दे...

म.सा. : असल में तो मुझे यही बात करनी थी। बहन! मरने से कोई प्रश्न सुलझता नहीं। कल संपत्ति थी, आज आपत्ति है, अत: पक्का होता है कि कल वापस संपत्ति हो भी सकती है। आप ऐसे मर जा कर आपके पुत्र के उज्जवल भविष्य की संभावना को क्यों खतम कर रहे हो? उल्टा आप मजबूत होकर संतानों को निराश होने से रोको - उन्हें आनेवाले कल के उज्जवल - भविष्य के सपने दो! हकारात्मक अभिगम से उन्हें तैयार करो! आयी हुई आपत्ति को पुरुषार्थ प्रकट करने का अवसर के रूप देखना सिखलाओ।

कामिनीबहन - मगर पेट की खाई को भरना कैसे?

महेशभाई - भाभी! उसकी चिंता मत करो! सब व्यवस्था हो जायेगी!

म.सा. : महेशभाई! इस परिवार को सम्हालोगे तो तुम्हें स्थिरीकरण नाम के आचार का लाभ तो है ही! दूसरों की आपत्ति में सहायता करने वालों को प्राय: आपत्ति आती नहीं, और आ भी जाये, तो उसके सामने सहायता करनेवाले मिल ही जाते हैं। तुम रमेशभाई की मित्रता को निभाने के लिए कटिबद्ध हो वो जानकर मुझे आनंद हुआ। ऐसी मित्रता की सुगंध से भविष्यका इतिहास सुगंधित बनेगा!

पर कामिनीबहन! मेरी आपको सलाह है कि, आप मुफ्त का लेना नहीं, जो कुछ जीवन गुजारे के लिए जरुरी है - वो सहायताहेतु भले लो, पर देने वालों का या श्रीसंघ का कोई कार्य ऐसा कर देना कि, जो मिली हुई मदद को सार्थक करे। मेहनत का फल मिलता है, मुफ्त मिलता है, वह पुरुषार्थ की भावना-इच्छा - शक्ति को जलाकर खाक कर देगा।

साथ ही रोज प्रभुभक्ति करना। प्रभु अचिंत्यशक्ति के धनी हैं। वे कहते हैं - आपत्ति, आपत्ति नहीं है, भूतकाल में की हुई भूलों का प्रायश्चित है। आपकी प्रायश्चित

करने की तैयारी होगी तो प्रभु कृपा कर्म को कमजोर बना कर अनेक कष्टों में से माफी दिलवायेगी। और आपत्ति को सहन करने की अद्‌भुत शक्ति देगी। साधु - साध्विओं की वैयावच्च का अवसर मिले तो छोडना नहीं। पवित्र, निर्दोष, आराधक उनके हृदय के आशिष सारे अंतराय को तोड देंगे। नमस्कार महामंत्र अत्यंत प्रभावक है। ससुर पर, देवर पर, उस मुस्लीमभाई पर जरा भी द्वेष रखे बिना याने उन सब के प्रति मैत्रीभाव रख कर श्रद्धा से नवकार गिनना। मेरा मन कहता है - इसीसे तुम्हारे परिवार का भविष्य उज्जवल है।

महेशभाई और कामिनीबहन गये। प्रसंग को बरसों बीत गये। फिर से लगभग पंद्रह वर्ष बाद महेशभाई गुरु महाराज को मिले। तब महेशभाई ने गुरु महाराज को कहा - साहिब! ऐसे तो मेरा आपको बहुतबार मिलना हुआ। पर एक बात कहनी रह जाती थी। उसी में अभी एक घटना हुई। इसीलिए कहने का मन हुआ।

म.सा. : किसकी बात कर रहे हो?

महेशभाई : वो कामिनीबहन याद है? महेशभाई ने महाराज को सब याद दिलाया। म.सा. : हाँ! याद आया। उनका परिवार कैसा है?

महेशभाई : मोड... मोड... म.सा. : मतलब?

महेशभाई : कामिनीबहन का लडका अपूर्व फिर कॉलेज में जाने की बजाय मेरी पहचान से हीरे के व्यापारी के वहाँ नौकरी लग गया। कामिनीबहन ने भी कडी मजदूरी की, पुत्र-पुत्री को भी अच्छी तालीम दी। अपूर्व ईमानदार प्रामाणिक और मेहनती निकला। सिखने की लगन भी गजब की। दस सालमें तो सेठने उसे पगारदार नौकर में से पार्टनर बना दिया। साहिब! आज वो करोडों की उथल - पुथल करता है। लेकिन परिश्रम, ईमानदारी, परोपकार इन तीनों गुणों को दृढता से आत्मसात किया है। कोई पार्टी आर्थिक दृष्टि से कमजोर हो गई है ऐसा पता चलने पर वह तुरंत खुद के भूतकाल को याद कर मदद करने दौड जाता है। उसमें भी अभी अभी जो समाचार मिले.... वो तो इस परिवार को लाख-लाख सलामी देने लायक है।

म.सा. - ऐसा क्या हुआ? महेशभाई - भगवान किसीको नहीं छोडता...

म.सा. : भगवान नहीं, कर्म बोलो! भगवान तो दयालु हैं। करुणासागर हैं। अपराधी को माफ करते हैं। पर कर्मसत्ता जालीम है। दंड देने में उद्धत है। हाँ... बोलो!

महेशभाई : कर्म किसीको छोडता नहीं, उसका दृष्टांत मिल गया। तो महानता कैसी होनी चाहिए? उसका भी उदाहरण हाज़िर है।

म.सा. : खुलकर बात करो।

महेशभाई : रमेशभाई के पिताजी रमेशभाई की अकाल मोत के बाद शांति

से जी नहीं पायें। सपने में, विचार में रमेश का ही भूत दिखता था। उसी में बेचारे एक ही साल में सन्निपात से बुरी हालात में मर गये। हराम की रकम सुरेश को भी नहीं पची.... वो उस रकम से शेयरबाजार में फ्युचर ओप्शन का खेल खेल बैठा। उसमें एक झटके में उल्टे मुँह गिरा। दबायी हुई रकम तो गयी, घर बेंचने की नौबत आ गयी। पर उसकी असर उसकी पत्नी को हुई। वह ऐसी डिप्रेशन में आ गयी कि आत्महत्या कर ली। मरते वक्त पति को चिठ्ठी में सलाह लिखकर गयी कि रमेशभाई के परिवार को अन्याय से सताया, हम उसका फल भुगत रहे हैं। मैं तो अब जा रही हुँ। आप भाभी की माफी मांग लेना। पर माफी मांगने की ओर सुरेश के कदम नहीं उठे। बेचारा काली मजदूरी- छुटक नौकरी कर मुश्किल से गुजारा कर रहा है।

अभी तीन महिने पहले वो कामिनीबहन के पास अपने लडके को लेकर आया। कामिनीबहन के सामने हाथ लंबाये। अपने लडके को नौकरी पर रखने के लिए गिड़गिड़ाये। कामिनीबहन तो अभी कुछ सोचे उससे पहले ही अपूर्व ने कह दिया-चाचा! कल से भेज देना। मैं उसे टनाटन तैयार कर दुँगा। चाचा खुश होकर रवाना हुए।

कामिनीबहन ने पूछा - बेटा! तूने हाँ क्यों बोला? वो माफी मांगने नहीं, खुद का काम करवाने आये थे। आज तक कपरी स्थिति में भी हमारी ओर देखा नहीं। और आज... स्वार्थी! तू क्यों भला बनने गया?

अपूर्व - मम्मी! गयी गुजरी भूल जा! याद करना हो तो अपना डरावना भूतकाल याद करो। उस वक्त एकबार तुम ही बोली थी... भगवान! ऐसे दिन तो दुश्मन को भी नहीं बताना!

तो मम्मी! बस भगवानने तुम्हारी प्रार्थना सुनी और मुझे कहा - भले ये दुश्मन हो, परंतु उन्हें ऐसे दिन देखने पड़े यह योग्य नहीं। और मम्मी! मैं एक बात कहुँ - मैं ने देखा है कि, मैं जितनी बार गिरे हुए को उठाता हुँ, उतनी बार प्रभु मुझे मात्र उठाते ही नहीं, आसमान में ऊँचे उडाते हैं! तब से मैं ने एक नियम बनाया है, मैं क्या करुँ, तो प्रभु को अच्छा लगेगा? मुझे शैतान को नहीं, प्रभु को खुश करना है। मुझे लगता है, ये काम करुँगा, तो भगवान को बहुत पसंद आयेगा। बस... मेरा नियम है, प्रभु को खुश करना!

साहिब! आज वो अपूर्व अपने इस चचेरेभाई को खुद ध्यान देकर हीरा के व्यापार की कला में माहिर कर रहा है। और साहिब! आप मानोगे? पिछले तीन महिने में भारी मंदी में भी उस के लिए तो तेजी का पवन नहीं, तूफान आया है।

महाराज : गजब... कमाल के मोड आयें... घटनाओं का दौर चलता रहा।

मानवमन एक अजब पहेली है। पल पल पलटते मन के उलझनों का पार ज्ञानी के सिवा कौन पा सकता है? आहार, भय वगैरह दस संज्ञाओं मन को इधर - उधर भटकाती हैं। और बार बार ऐसी संज्ञाएँ सहज प्रकट होती रहती हैं। उसमें कारण है, अनंतकाल में अनंती बार की हुई वैसी प्रवृत्तियां... अनंतकालीन ऐसी गलत प्रवृत्तियों का कारण है मोहनीय कर्म! मन में उठती - दौडती ये संज्ञाएँ मोहनीय कर्म को मजबूत करती हैं, तो संज्ञाओ को रोकने की सोच मोहनीय कर्म को कमजोर करती है। उसी वक्त जो कर्म का उपार्जन होता है, वह भविष्य में तरह - तरह का अनुभव कराता है...घटनाओं की माला होती रहती है... उसमें निमित्त बनते अलग-अगल जीव हमने पूर्व में उनके साथ किए व्यवहार का प्रतिघोष करते हैं... अत: कर्मबंध के साथ दूसरा जुडता है ऋणानुबंध। हमारा पूर्वभव - उस भव में हमने किये हुए अच्छे - बुरे व्यवहार वगैरह हम साक्षात देख नहीं सकते। अत: इस भव में होती वैसी - वैसी घटनाओं को हम समझ नहीं सकते। व्यर्थ ही व्याकुल होकर अनुचित प्रतिक्रिया व्यक्त कर फिर से ऐसे अनुचित चक्कर में फँस जाते हैं।

अगर हर जगह ''पूर्व के कर्म'' और ''ऋणानुबंध'' इन दोनों को आगे करने की सोच-दृष्टि मिल जाये, तो दु:ख, द्वेष, शत्रुता रहेंगे ही नहीं। वैर, विरोध या विश्वासघात की बात खडी ही नहीं होगी। अपने-पराये, न्याय - अन्याय के तोल खत्म हो जायेंगे। शत्रुता और अदावत कर्मो को नहीं समझने से और ऋणानुबंध को नहीं स्वीकारने से होते हैं।

खेर! कामिनीबहन के अपूर्व ने सचमें अपूर्व सज्जनता दिखायी है। ऐसे व्यक्तियाँ - उन के ऐसे प्रसंग से ही द्रोह, विश्वासघात, अन्याय, स्वार्थांधता और युद्धों की बातों से भरे इतिहास में कुछ सुवास - सौंदर्य बचा है।

- मैं जितनी बार गिरे हुए को उठाता हुँ... उतनी बार हर वक्त प्रभु मुझे मात्र उठाते ही नहीं, आसमान में उँचा उड़ाते हैं।
- मैं अपने आप को पूछता हुँ - मैं क्या करुँ तो प्रभु को पसंद आयेगा? मुझे शेतान को नही, प्रभु को खुश करना है।
- मेरा नियम है - प्रभु को खुश करे ऐसे ही कार्य करना...

ऋणानुबंध का खेल

(प्रभु महावीर स्वामी के समकालीन मदनरेखा के साथ पुत्र नमिराजा के संवाद जो की सिद्धिगतिना साधको गुजराती किताब में है और अभी पढ़ने में आयी घटना से स्फुरित हुई एक काल्पनिक कथा - आशय है विचित्र संसार में क्या संभव नहीं हो सकता? और मानवमन कितना गजब का है? ऋणानुबंध कैसी घटना घटा सकता है और भवितव्यता कैसा खेल खेल सकती है?)

उपाश्रय में बिराजमान महाराज साहिब को मिलने एक युवक आया। कपाल पर प्रभुआज्ञा सूचक सुंदर तिलक किया हुआ था। उसने वंदन विधि भी अच्छी तरह से की। अलबत, महाराज साहिब को उसका परिचय नहीं था। पर उसका विनय म.सा. के हृदय को छू गया।

उसने वंदन कर हाथ जोडकर महाराज साहिब को पूछा - साहिब! क्या मैं बैठ सकता हुँ? मुझे आपको मेरे जीवन की कल्पना में भी नहीं बैठे ऐसी समस्या की बात करनी है, फिर आप जो कहोंगे वैसे करना है।

म.सा. : तुम बैठ सकते हो और तुम्हारी बात भी कर सकते हो। मेरी बुद्धि पहोंचेगी उसके मुताबिक सलाह दूँगा। पर तुम्हारा परिचय दोगे?

युवक : मेरा नाम **जयेश** है। हम कलकत्ता रहते हैं। व्यापार के लिए - पार्टी के साथ हिसाब - किताब के लिए यहाँ आया हुँ। मेरी उम्र बाईस साल की है। हम कलकत्ता में जो आइटम बनाते हैं, उसके लिए हमने यहाँ एक एजेन्ट को नियुक्त किया है। किंतु उसने पीछले साल बहुत गडबड की है। हम विश्वास में रहे और उसने करीब पचास लाख का चूना लगाने की कारस्तानी की है।

म.सा. : तुम इतनी छोटी उम्र में इतना बडा व्यापार सम्हालते हो?

जयेश : मैं तो अभी अभी इसमें जुडा हुँ। कलकत्ता में मेरा बडा भाई **भावेश** है। ये पूरा धंधा - उद्योग उसी ने शुरु किया और बढ़ाया है। असल में इतनी बड़ी रकम का सेटलमेन्ट तो वे ही कर सकते हैं। मुझे तो उन्होंने पार्टी की रीयल पोज़ीशन क्या है उसकी हकीकत जानने के लिए ही भेजा है।

म.सा. : चूना लगाने वाली पार्टी की क्या पोज़ीशन है? वो कौनसी जाति

का है?

जयेश : वो पार्टी भी श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन ही है।

म.सा. : तो... तो... भाई! जरा प्रेम से काम लेना। ऐसे भी धाक-धमकी हमें शोभा नहीं देती। **श्राद्धविधि ग्रंथ** में कहा ही है कि, जैन व्यापारी को जैन के साथ व्यवहार करना उचित है। और साम नीति-समझौताभरी की नीति ही आजमाना चाहिए।

जयेश : पर उसमें पैसे डूब जाये तो?

म.सा. : तो भी साधर्मिक भक्ति करने का लाभ मिलता है।

जयेश : परंतु ऐसी अनिच्छा से साधर्मिक भक्ति?

म.सा. अनिच्छा किस लिए? ऐसा लगे कि यह पार्टी चुका सके इतनी सक्षम नहीं है, या चुकाना चाहती नहीं है, तो हुलास से ही मान लेना कि, वाह! सुंदर साधर्मिक भक्ति का लाभ सामने से मिला।

जयेश : पर ऐसे दूसरों के पैसे डूबाना एक जैन को शोभा देता है?

म.सा. : नहीं शोभा देता! एक जैन पैसा डूबाता है, तो दूसरे बहुतों को बोलने का मौका मिलता है कि, 'यह जैन मेरे पैसे निगल गया। मेरे पैसे खा जा कर खुद मजा कर रहा है अथवा चढ़ावे बोल रहा है' ऐसे दूसरों के मनमें जैन के प्रति अरुचि होती है, उससे उस को जैनधर्म के प्रति अरुचि होती है। मतलब पैसे डूबानेवाला जैन दूसरों को जैन धर्म के प्रति अरुचि का निमित्त बनकर दूसरों का और उसके द्वारा खुद का बोधिबीज दुर्लभ करता है। भवांतर में जैनधर्म मिलना दुर्लभ बन जाता है। खुद को आनेवाले भव में हर एक की गुलामी करने की संभावना रहती है।

जयेश : तो फिर आप मुझे साधर्मिक भक्ति मानने को क्यों कह रहे हो?

म.सा. : मेरे पास वो बैठा होता, तो मैं अवश्य उसे कहता कि, मौज़-मजा छोड़कर दूसरों का कर्ज चुकाना तेरा प्रथम फर्ज है। जब तक नहीं चुका सके तब तक तुझे विशेष मोज-मजा करने का अधिकार नहीं। यदि तू दूसरों का कर्ज चुकाने के सच्चे आशय से सादगी में जीएगा, तो तू अगर चुका नहीं पा सके, तो भी गुनहगार नहीं रहेगा। नहीं तो तुझे भवांतर में बैल बनकर भी कर्ज चुकाना पडेगा। पर दोस्त! यह बात देननार के आगे की जाती है। तुम कर्जदार नहीं, लेनदार हो। तुम्हारा कर्जदार जैन है। वो चुका पायें ऐसी हालात में नही हो, या चुकाने की इच्छा न रखता हो, तो उसके प्रति द्वेष करना तुम्हारे लिए हितकर नहीं है। इससे अच्छा साधर्मिक भक्ति मान लेने से मन भी प्रसन्न रहेगा और दुनिया में श्रेष्ठतम मानी जाती साधर्मिक भक्ति का लाभ भी मिलेगा। उसके साथ का व्यवहार भी मधुर रहेगा।

जयेश : बाद में उसकी शक्ति या इच्छा रकम चुकाने की हुई और पैसे भिजवा दे तो ?

म.सा. : एकबार साधर्मिक भक्ति मान ली, फिर वो रकम अपनी नहीं गिनी जाती। वो रकम आ भी जायें, तो उससे अन्य कमजोर साधर्मिक की भक्ति कर लेनी।

जयेश : तो फिर साधर्मिक भक्ति मान लेने से तो अच्छा है कि उस रकम को लेन के रूप में ही रखनी।

म.सा. : उसमें (१) अपने मनमें भी सतत तरंग उठा करता है कि, रकम आने की बाकी है। इस तरह से आर्तध्यान होते ही रहता है। जो तिर्यंचगति का कारण है। (२) उससे उसके प्रति दुर्भाव होने की संभावना है कि जो आनेवाले भवपरंपरामें बहुत भवों तक परस्पर दुर्भाव-द्वेष-वैर की परंपरा का कारण बनता है, जिससे उन भवो में दोनों का जीवन दु:खमय बन जाता है। (३) उसे भी सतत देने का भार रहने से टेन्शन रहता है। उसमें भी डीप्रेशन में आकर आत्महत्या जैसा कदम उठा ले, तो बडा अनर्थ हो जाता है। (४) कर्ज सिर पर रखकर वो यदि मर जाय, तो उसकी दुर्गति हो जाती है। पशु वगैरह की गति में चला जाता है। क्या जैन अपने जैसे जैन भाई की दुर्गति इच्छेगा ? अत: साधर्मिक भक्ति मान लेना अच्छा है।

जयेश - पर ऐसे मैं साधर्मिक भक्ति मान लुँगा, तो उसके सिर तो चुकाने का कोई भार ही नहीं रहेगा ना ?

म.सा. : इसमें क्या तकलीफ है ? किसी के सिर का भार उतारना उसमें क्या खराब है ? क्या गलत है ? फिर भी अगर यह बात मनमें नहीं बैठे, तो दूसरा कर सकते हैं - शुरुआत में अमुक समय तक प्रेम से उगाही करनी, शायद थोडी मुँह से - मन से नहीं सख्ताई दिखा कर उगाही करनी। मगर अमुक समय के बाद लगे कि, वो चुका सके ऐसी हालात में नहीं है, अथवा चुकाना नहीं चाहता, तो उगाही बंद कर देनी। मन में ऐसा संकल्प करना कि अमुक समय तक यदि रकम नहीं आये, तो वो रकम वोसिरे... वोसिरे... वोसिरे... मैं उस रकम का त्याग करता हुँ। अगर उसके बाद वो रकम पूरी या थोडी जो भी आये, तो वो रकम मुझे संघ के साधारण खाता में लिखवा देनी है।

अलबत्त तुम्हारी बहुत बड़ी रकम फंसी है। अत: तुम्हें छोड देने का मन नहीं होगा, वह सहज है। हम वार्षिक संवत्सरी में प्रायश्चित के रूप अट्ठम करने को कहते हैं। अगर वो हो न सके, तो छुट्टे ३ उपवास, या छह आयंबिल इत्यादि रूप में सरल विकल्प बता कर वो तप पूरा करने की सुविधा दिखलाते हैं।

तुम इस तरीके से वो पार्टी धीरे धीरे रकम चुका सके उसके लिए हफ्ते की

अनुकूलता कर दो। मूल पूँजी डुब रही हो, तब ब्याज छोड देना। बहुत बार ब्याज चुकाने में ही सामने वाले व्यक्ति की पूरी रकम खत्म हो जाती है। अत: पूँजी की रकम तो देने की ऐसी ही रह जाती है। परिणाम वो कुल पूँजी से बहुत ज्यादा चुका दे, तो भी वो कर्ज तो माथे रहता ही है। ऐसे अवसर पर कम से कम ब्याज छोडने से उसका पूँजी संबंधी कर्ज कम हो सकता है।

जयेश : साहिब! आप कर्जदार के प्रति इतनी संवेदना क्यों बता रहे हो?

म.सा. : क्यों कि आखिर रुपये महत्व के नहीं, पर मन की स्वस्थता और संबंधो में मधुरता इस भव और परभव दोनों के लिए अति महत्त्व रखते हैं। अत: लेनदार ही यदि विवेक से इस तरीके से नरमी से पेश आए, तो लेनदार स्वयं द्वेष बिना प्रसन्न रह सकता है, और कर्जदार के सिर का बोझ - चिंता दूर करने से भविष्य में खुद भी बोझ-चिंता न रहे ऐसी भूमिका पाता है। कर्जदार भी टेन्शन फ्री होने से स्वस्थ रहता है, लेनदार को उपकारी मानता है। व्यापार में योग्य ध्यान देकर कमाई बढ़ा सकता है, जो आखिर में तो लेनदार के ही काम में आयेगी।

खेर! जाने दो वो बात, अपनी गाडी दूसरी पटरी पर चढ़ गयी। मूल बात पर आते हैं। तुम जो अकल्प्य बात कह रहे थे, वो बात तो रह ही गई। वह बात कहो।

जयेश: बात यह है कि जिस पार्टी में हमारे रुपये अटके हैं, उस पार्टी के साथ के कौटुंबिक संबंध की जानकारी मुझे अभी ही मिली कि जिसने मेरे समग्र चित्ततंत्र को हिला दिया है।

म.सा. - ऐसा कौन सा कौटुंबिक संबंध है?

जयेश - मैं यहाँ परसो आया हुँ। उस पार्टी को भी उसी दिन से पता है कि मैं यहाँ उगाही के लिए आया हुँ। जो भाई उस पार्टी के रूप में व्यापार करता है, उसका नाम है **कमल**। वो लगभग अट्ठाईस साल का है। कलकत्ता में जो मेरा बडा भाई है, उसकी उम्र भी अट्ठाईस साल की है।

म.सा. - अरे भाई! महत्त्व की बात करो ना! मुझे इस उम्र के साथ क्या लेना-देना?

जयेश - मेरी बात को इस उम्र के साथ लेना-देना है, इसीलिए उम्र कही।

महाराज - ठीक है। आगे चलाओ।

जयेश - परसो सुबह मैं कलकत्ता से आया। यहाँ की धर्मशाला में उतरा। मिले हुए जैन संस्कार के कारण मुझे हॉटेल में उतरना अच्छा नहीं लगता।

परसो दोपहर को पचास से भी अधिक उम्र के माजी मुझे धर्मशाला में मिलने आये। मैंने पहले कभी उनको देखा हो, ऐसा मुझे याद आया नहीं। पर उनके

प्रति सहज स्नेह प्रगट हुआ। उन माजी ने मुझे पहचान दी - जिस पार्टी में आप की रकम फँसी है, उन कमलभाई की मैं माता हुँ।

म.सा. - अच्छा, कमलभाई तुम्हें समझा सके ऐसे नहीं है, इसीलिए माता का साथ लिया। वृद्ध स्त्री के प्रति किसे स्नेह नहीं होता ?

जयेश - बात ऐसी ही है। उन माताजी ने अपना पल्लु फैलाकर आजिजी पूर्वक विनंती की - तुम कमल को उबार लो। तुम्हारी उगाही चुकाने में वो, उसका परिवार और मैं हम सब फुटपाथ पर आ जायेंगे। हमारा घर, गहने सब बेचना पडे ऐसी स्थिति होगी।

वो माताजी आजिजीपूर्वक और आँखो में से बोर जितने आँसु गिराती हुई गिड़गिड़ा रही थी। बात-बात में उन्होंने यह भी कबूल किया कि कमल के पिताजी तीन साल पूर्व अचानक हार्टफेल से गुजर गये और फिर कमल पर किसीका काबु रहा नहीं। अत: बिन जरुरी लोभ के कारण एम.सी.एक्स. में सट्टा करने की लालच में वह आ गया। उसमें यह परिस्थिति हुई है।

म.सा. - F. & O. और एम.सी.एक्स. भारत सरकार का भारतीय प्रजा के लिए अभिशाप है। सरकार को उससे टेक्स के थोडे पैसे मिलते हैं, पर बहुत से कुटुंब उसमें खत्म हो गये। जीवन जरुरी सभी धान के भाव जो आसमान छू रहे हैं, उसमें भी यह M.C.X. कारणभूत है, जिनको एक भी चीज लेनी-देनी नहीं है, वे सट्टा खेल कर भाव बढ़ाते हैं और फिर मध्यम, गरीब प्रजा को उसके लिए रुपये चुकाने जाते हाय पुकारनी पडती है।

ऐसे सट्टाओंने बहुत परिवार को खत्म किया है। थोडी सेकंड़ में ही लाखों रुपये का सट्टा खेल लेना। इसमें बुद्धि नही, पुण्य ही साथ दे तो पासा सही पडता है। मगर जो पुण्यशाली हैं, उनको ऐसी मूर्खता सूझती ही नहीं, क्योंकि उनका पुण्य उनको बचाने बैठा है। मरने की नौबत आने पर बकरा कसाई के पास जाता है। डूबने की तैयारी वाला ऐसे सट्टे में जाता है। खैर, फिर तुमने क्या किया ?

जयेश - मैं ने कहा - आपका पुत्र बिना सोच साहस करे और उसकी सजा हमको भुगतनी ? यदि छोटी रकम होती तो फिर भी छोड देना सोच सकते थे। मगर इतनी बड़ी रकम का निबटारा हम कैसे कर सकेंगे ? आपके लडके को इतना भी विचार नहीं आया कि हम उसके बिश्वास पर इतनी बडी रकम लेने की होने के बावजुद माल भेजते रहते थे। हम विश्वास में रहे तो विश्वासघात कर ज्यादा रुपया प्राप्त करने के लोभ में हमारे ही रुपये सट्टा में लगा दिये ?

माजी! जवाब दीजिए, क्या आपका बेटा उसमें कमाया होता, तो हमारे

रुपये पर कमाया है, तो हमें उस उपर की कमाई में से हिस्सा देता सही ?

माजी! आपने अच्छा किया - आपका बेटा सट्टेबाज हो गया है ऐसा बताकर हमें सावधान कर दिया। अब उगाही तो होगी ही। परंतु भविष्यमें भी उसके विश्वास पर व्यापार नहीं करेंगे। सट्टेबाज का कौन भरोसा करे ?

मेरे भाई को कलकत्ता में आये हुए महाराजने नियम दिया कि शेयर-सट्टे में जाना नहीं। यहाँ आपके बेटे ने शेयर-सट्टे में जा कर हमें नुकसान में डाल दिया। इससे अच्छा तो हम ही शेयर सट्टे में खेलकर डूब गये होते तो इतना तो आश्वासन रहता कि हमने ही हमारे रुपये डूबाये।

म.सा. - ये शेयर - सट्टा गजब का है, उसकी आग तो उससे दूर रहे हुए को भी लग जाती है। अंग्रेजो की तरफ से भारत को मिली बहुत सी अयोग्य बाबत में एक बाबत यह शेयर-सट्टा भी है। कंपनी के मुनाफे के साथ उसके शेयर के भाव को लेना-देना नहीं है। फिर भी शेयर बाजार के आधार पर देश की आर्थिक अवस्था का निर्णय होता है। हाँ फिर क्या हुआ ?

जयेश - जब उन माताजी की एक भी बात मैंने सुनी नहीं। दया से मेरा हृदय पीघला नहीं, तब उन माताजी ने धडाका किया।

म.सा. - क्या स्त्रीचरित्र दिखाया ?

जयेश - नहीं! उससे भी भारी! मेरी तरफ वेधक दृष्टि से देखकर पूछा - तुम्हारे माता-पिता कौन हैं ? मैंने पूछा - क्यों ? आपको उनका क्या काम है ? उन माजी ने उसका जवाब देने की जगह आग्रह किया - कहो तो सही कौन है ? मैं ने कहा - **रंभाबहन** और **रमणीकभाई**... बोलो। तब माजी ने कहा - वे तो तुम्हारे पालक माँ-बाप हैं, जन्मदाता नहीं। जरा तहकिकात कर लेना, तुम्हारे असली माँ बाप कौन हैं ?

मैं चमक उठा... मैंने पूछा-कौन हैं असली माँ बाप ? आपको उसकी जानकारी कहाँ से ? और आपको इसके साथ क्या मतलब है ?

तब उन माजी ने कहा - मतलब है... कारण की तुम्हें जन्म देनेवाली माता मैं हुँ। अत: मुझे सब पता है।

माताजी! ऐसी रहस्य की बातें कर मुझे उलझाने की जरुरत नहीं।

तब माताजी ने मुझे एक अनाथाश्रम का नाम - पता देकर जाँच करने को कहा और कहा - मैं कल दोपहर वापस आऊँगी। तुम जाँच करके रखना।

म.सा. : हें ? क्या ऐसी बात उस स्त्री ने की ? फिर तुमने जाँच - पडताल करवाई ? असलियत क्या है ?

जयेश - साहिब! वो माजी तो तब गये, पर मेरा दिमाग तो चकराने लगा।

विचारों के तूफान में मैं कहाँ का कहाँ फेंका गया ! मैं ने तुरंत बड़े भाई को फोन करके उस पार्टी कमल की माताजी मेरे पास आयी वहाँ से लगाकर किये हुए आखरी धमाके तक सब बताकर पूछा - बड़े भैय्या! इसमें असलियत क्या है वो आप जानते हो? मेरी तो मति ही सुन्न हो गयी है।

भावेश - जयेश! इतने सालों से तुझसे अनजान बात आज तुझे अचानक जानने को मिल गयी, तो मुझे तुझे अब हकीकत बतानी चाहिए कि तुम मेरे सगे भाई नहीं हो। तुझे मेरे मम्मी - पापा मुंबई के अनाथाश्रम से ले आये यह बात सच है। उन माजी ने तुझे जिस अनाथाश्रम का पता दिया है, वहीं से तुझे लाया गया है।

जयेश - भाई! आप क्या बात कर रहे हो? क्या मैं आपका सगा भाई नहीं?

भावेश - हाँ! खून के रिश्ते से कहो, तो तू मेरा सगा छोटा भाई नहीं है। पर व्यथित होना नहीं। मुझे तेरे पर सगे भाई से भी ज्यादा प्रेम है।

जयेश - परंतु भाई! आपने तो कभी मेरे साथ ऐसा व्यवहार किया ही नहीं। आपने तो मुझे कितने लाड लडवाये हैं? मैं छोटा था तब से, माता-पिता नहीं, पर आपकी ही छाया में बड़ा हुआ हुँ ऐसा मैंने अनुभव किया है। आपने आपको मनचाही जो भी अच्छी चीज मिली वो मुझे दे दी है, कभी - कभी मांगने पर, किन्तु ज्यादातर बिना मांगे ही! पिछले तीन साल से मम्मी-पापा नहीं रहने पर भी आपने मुझे कभी उनकी गैरमौजुदगी का एहसास तक नहीं होने दिया।

भाई! भाई! मुझे जवाब दो, घर में तो आप बालक थे ही, तो फिर मम्मी - पापा मुझे गोद क्यों लेकर आये? ऐसे तो घर में दूसरा भाई हिस्सा मांगनेवाला गिना जाता है। फिर भी मुझे क्यों अनाथाश्रम से पुत्र के रूप में ले कर आये? और आश्रमवालोने जिसके घर एक बालक हो उनके घर दूसरा क्यों दिया? मुझे कुछ समझमें नहीं आ रहा है, आप मुझे आज दिल खोल के असली बात बता दो। मैं अत्यंत व्यथित - बेचैन हो गया हुँ।

भावेश - जयेश! स्वस्थ हो जा! जरा भी दिल से दुःखी मत होना। भवितव्यता और ऋणानुबंध को समझ ले। हकीकत को जो स्वस्थता से पचा सकता है, वो ही जीवन संग्राम जीत सकता है और कर्म के खेल के आगे स्वस्थ रह सकता है। देख! तुझे अनाथाश्रम से जो लाया गया, उसमें मेरी ही ज़िद काम कर गयी है।

जयेश - भैय्या! आपकी ज़िद? कौन सी?

भावेश - जब मैं लगभग ४-५ साल का था, तब अपने पडोस में रहते **छगनभाई** को दे बेटे थे। एक मेरे जितना, दूसरा उससे दो साल छोटा। बड़ा था **सुभाष** छोटा था **सुजय**। बड़ा भाई पूरा दिन छोटे भाई को खेलाता... मुझे भी बार-बार

कहता - यह मेरा छोटा भाई! यह मेरा छोटा भाई!

बस, उस वक्त से मैं ने मम्मी के पास ज़िद पकडी - मुझे छोटा भाई चाहिए। पहले-पहले तो मम्मी-पापा ने बात को बहुत वज़न नहीं दिया। मुझे पटाने का प्रयत्न किया। थोडे दिन में मैं भूल जाऊँगा ऐसा मान लिया।

पर कौन जाने मेरे बालमानस पर छोटा भाई होना चाहिए वो बात ऐसी घर कर गयी थी कि उसके लिए मेरी मांग, हठ - ज़िद बहुत बढ़ गयी। इस तरफ मेरे जन्म के बाद मम्मी - पापा ने गर्भ न रहे ऐसा ओपरेशन करा दिया था। अब भाई लाना कहाँ से? परंतु तुम्हारा - मेरा ऋणानुबंध होगा, तो बात कैसी जम गयी?

मम्मी का जन्मस्थान - मैका मुंबई था, और उनकी सहेली ही मुंबई के अनाथाश्रम में बहुत बार बच्चों को खेलाने - पढ़ाने, ओनररी सेवा देने जाती। उस सहेली ने ही उन दिनों मम्मी को फोन पर बात की कि, अनाथाश्रम में एक अच्छे घरका परिवार दो महीनें का बच्चा रखकर गया है। बच्चा सुंदर है। वो दंपती ने रखते वक्त कहा - हमारी विचित्र मजबूरी के खातिर इस बालक को यहाँ रखकर जा रहे हैं। कोई अच्छा जैन परिवार इसे गोद लेकर इसका पालन करेगा तो हमें बहुत पसंद आयेगा।

मम्मीने यह बात पापा को की। मैंने भी सुनी। मैंने ज़िद की - मुझे वो ही छोटेभाई के रूप में चाहिए। आप ले आओ। मम्मी-पापा के दिल में क्या बस गया, वे मेरी इच्छा पूरी करने मुंबई गये। उस सहेली को साथ लेकर अनाथाश्रम में गये। हकीकत बताई। ऐसे तो जिन माता-पिता को एक भी जिंदा बच्चा खुद के पास हो, उन्हें आश्रमवाले गोद नहीं देते। पर मेरे मम्मी-पापा की सब बात सुनकर, कलकत्ता का पता वगैरह लगाकर सच्चाई की पूरी छानबीन कर उस बालक को कागज-दस्तावेज़ कर सोंप दिया।

जयेश-उस परिवार को ऐसी कौन सी मजबूरी थी कि, मुझे अनाथाश्रम में रखना पडा? क्या खाने-पीने का सांसां था? क्या मैं उनके परिवार पर शाप बनकर आया था? क्या मेरे लक्षण अच्छे नहीं थे? या फिर मेरी पैदाइश गलत थी? मैं फिजुल का था?

भावेश : जयेश! आवेश में मत आ। उनकी क्या मजबूरी थी, उसका मुझे पता नहीं, पर जो भी हो, तू मुझे छोटे भाई के रूप में मिला, उसमें तुझे क्या कमी हुई? क्या तुझे कभी परायापन का बोध हुआ है?

जयेश -बड़े भैय्या! ऐसी कोई बात नहीं है। ये तो बात जानने को मिली, तो पता चला। वरना मैं तो आप सबके साथ ऐसा हिल-मिल गया हुँ और घर के किसी

भी व्यक्तिने इशारे में भी ऐसा व्यवहार किया नहीं कि, जिस वजह से मुझे परायेपन का बोध हो या अनाथ होने का एहसास हो। 'आप दयालु हो और मैं दीन हुँ,' ऐसी भावना भी मुझे कभी नहीं हुई। आपने होने नहीं दी। मम्मी-पापा और विशेष से तो आपके निस्वार्थ प्रेममें इतना प्रसन्न हुँ कि यह बात मुझे बहुत तकलीफ दे रही है कि, क्या मैं मेरे ऐसे अच्छे भाई का सगा भाई नहीं हुँ?

भावेश - इसका क्या महत्त्व है? मेरे मन तू मेरा सगा भाई ही है। तुझे घर लाने के बाद मम्मी-पापा को ऐसा था कि मैं एक-दो दिन छोटा भाई मिला उसकी खुशी मानुँगा, पर बाद में तेरे साथ कज़िया करता रहुँगा। किंतु कौन जाने क्यों, तुझे देखते ही मुझे सतत आनंद आनंद होता है। पूर्वभव का तेरे साथ कोई ऋणानुबंध ही होना चाहिये। उसके बाद इसी वजह से आज तक मेरे मनमें तेरे प्रति विशेष स्नेह ही रहा है। तेरे साथ लडने की बात तो जाने दो, मम्मी तेरे पर गुस्सा करती, वो भी मुझे पसंद नहीं था और तुझे कोई मारने आये वो भी सहन नहीं होता था।

जयेश : हाँ! ये तो मुझे अभी याद आता है, आपने निस्वार्थ प्रेम के खातिर ही बहुत बार मेरी गलतियाँ अपने सिर ले ली और अनेकों के साथ मेरे लिए मारामारी भी की हैं। मुझे याद है, आपकी शादी होने के बाद आपने पत्नी को भी चेतावनी दी थी... मुझे मेरे भाई की कहीं भी, कभी भी गलती, अपराध दिखनेवाले नहीं। अत: तुम कभी देवर के विरुद्ध में मुझे कुछ मत कहना और यदि उसकी आपके लिए कोई भी शिकायत आयी, तो मैं उसे बिना जाँच पडताल किये सही मान लूँगा। बड़े भैय्या! भाभी ने भी आपके दिल की भावना को समझकर आज तक जो निर्मल प्रेम दिया है, वो नजर में आता है और आँखे गिली हो जाती है।

आपने पापा-मम्मी को उनके मौत के समय भी मेरे लिए खास कहा था कि, आप जयेश की चिंता बिलकुल मत करना। मुझे जयेश प्राण से प्यारा है।

और बड़े भैय्या! मुझे अब याद आया कि पापा-मम्मी ने अपनी जायदाद में मेरा भाग क्यों कम रखा था और उनकी मौत के बाद वो सब रद्द करवा कर आपने क्यों आपसे ज्यादा मुझे मिले ऐसा प्रयत्न किया था?

भावेश - चल! अब यह बात छोड। और यदि वो बहन कल आये, तो उसके पहले पूरी तरह से जाँच पडताल कर लेना। और वो यदि तुम्हारी जन्मदाता माता हो, तो उस उपकार को नज़र में लेकर योग्य निर्णय करना। मुझे तू जो निर्णय करेगा वो मान्य रहेगा। मेरी तरफ से यकीन रखना।

साहिब! मुझे जो स्त्री बिना कारण अनाथाश्रममें छोड गयी, उस स्त्री के प्रति माता होने का भाव कैसे आयेगा? पर मैं ये सब बात कहुँ, इसके पहले तो बड़े भाई ने

फोन रख दिया।

फिर मैंने कल दोपहर तक अनाथाश्रम में जाकर सब छानबीन की। मुझे भरोसा हो गया, परसो आयी हुई स्त्री मेरी जन्मदाता माता है। पर वो बात जानने को नहीं मिली कि मुझे अनाथाश्रम में क्यो रखा? ऐसी बात जानने को मिली कि, वो माता-पिता बार-बार अनाथाश्रम से मेरे बारे में खोज - खबर लेते रहते थे, और मैं जब तक इस परिवार को सोंपा नहीं गया, तब तक अच्छी तरह से रह सकुँ उसके लिए अच्छी रकम भी खर्च करते थे।

म.सा. : गजब की घटना घट गयी। यह बात तो महाभारत जैसी हुई कि युद्ध में पांडवो पर आनेवाली आपत्ति को टालने के लिए कुंती कर्ण को मिलने गयी और पांडवो के लिए - अर्जुन के सिवा सब के लिए अभयदान का वचन ले आयी। उसी वक्त ही कुंतीने कर्ण को अपनी असली पहचान दी कि, मैं तुम्हारी सगी माता हुँ। बेशक, वहाँ कर्ण सबसे बड़ा था, यहाँ तुम छोटे हो। कर्ण कुंती के शादी के पहले का बालक था, तुम तो शादीशुदा स्त्री के संतान हो।

बस आश्चर्य इस बात का है कि, शादीशुदा स्त्री क्यों तुम्हें अनाथाश्रममें रख गयी और वो भी जन्म के दो महीने पश्चात?

जयेश - साहिब! वो बात भी कल शाम क्लियर हो गयी।

महाराज - कैसे? किस तरह?

जयेश - शाम को वह बहन आयी। अब मैं उन्हें माता कहुँ, तो भी दिक्कत नहीं। उनके साथ कमल भी था। मुझे फोन करके आये थे, इसलिये मैं रुम पर ही था। आते ही कमल ने मेरे पैर पकड लिए - मुझे माफ करो... मुझे माफ करो... मैंने तुम्हारे साथ घोर अन्याय किया है। वो जोर जोर से रोने लगा। मुझे कुछ सूझबूझ नहीं थी। मैंने माता के सामने देखा। माताने कहा... तुमने छानबीन करवायी?

मैं ने कहा - हाँ! मुझे भरोसा हो गया। आप ही जन्मदात्री हो। पर ये बात निश्चित नहीं होती कि, मुझे अनाथाश्रम में क्यों रखा? क्या आपके बदचलन से मैं जन्मा था? अत: जिससे क्या पिताजी आपको मुझे अनाथाश्रम में रखने की शर्त पर ही स्वीकारने वाले थे?

मेरी माता ऐसे आरोप से भी विचलित नहीं हुई। पर कमल तुरंत रोते रोते पुकार उठा... जयेशभाई! जयेशभाई! माता पर ऐसा कलंक मत लगाओ। माता को आज ऐसा सुनना पड रहा है, उसमें भी मेरा ही दोष है। अरर! जयेशभाई! मेहरबानी करो! तुम माता को पवित्र मानो! मुझे खराब मानना! मैं दुष्ट हुँ, पापी हुँ। वो फिर से रोने लगा।

माता बोली - बेटा! तुझे जो जानने को मिला - सुनने को मिला... उतने पर से तू ऐसा निष्कर्ष निकाले उसमें तेरा कोई कसूर नहीं। तुझे जब इस बात का पता चलेगा, तब मुझे ऐसा आरोप सुनना पडेगा ऐसा मुझे खयाल था ही। अत: मन को उस तरह से तैयार ही कर लिया था। अत: मुझे ऐसा सुनने पर भी जरा भी झटका नहीं लगा...

म.सा - वाह! कितनी अच्छी चाबी - मन को स्वस्थ रखने की! हम यदि 'दुनिया के साथ के व्यवहार में कडवा अनुभव होने ही वाला है' इस बात से मन को तैयार कर लेंगे, तो फिर कोई कडवा अनुभव हमें हिला नहीं सकता। मन स्वस्थ ही रहेगा।

जयेश - साहिब! फिर माता ने कहा - बेटा! तू इतना जरुर मानना कि, मैं बदचलन की पैदाईश नही हुँ। जो इसके पिता है, वे ही तेरे पिता है। यह बात भी तुझे इसीलिए कह रही हुँ कि, जिससे ऐसी कोई कल्पना का डंक तेरी जिंदगी में तुझे हैरान न करे।

मैंने पूछा - तो फिर माता! मुझे अनाथाश्रम में रखने का कारण क्या है? क्या ज्योतिषीने ऐसा कहा था कि, मैं तुम्हारे परिवार के लिए आपत्तिरूप हुँ? क्या मेरे लक्षण - मेरी जन्मपत्रिका बराबर नहीं है? क्यों ? मुझे अनाथाश्रम में क्यों रखा?

तब माताने तो वही बात कही - इसमें विशेष जानने जैसा नहीं है - इतना समझ लेना कि, वो हमारी मजबूरी थी। पर कमल से रहा नहीं गया... वो थोडा स्वस्थ हुआ था। उसने कहा - जयेशभाई। वो मजबूरी मेरे कारण थी। कसूर मेरा था। मेरे कारण ही तुम्हें अनाथाश्रम में जाना पडा। वो फिर से रो पडा। माताने उसके पीठ पर हाथ फिराया, उसे शांत करने की कोशिश की और मुझे कहा - अब ये बात जानने में कोई सार नहीं।

मगर मेरा मन खूब उद्विग्न था। मैं किस लिए अनाथाश्रम में रखा गया? कमल क्यों बार बार 'मैंने अन्याय किया' ऐसा कहता है? अत: मैंने पीछा नहीं छोडा। मुझे स्पष्ट लगा कि, माता बात छुपाना चाहती है और कमल भी न कहे ऐसा चाहती है। पर मेरे आग्रह के कारण और कमल को हुए पछतावे के कारण कमल ने ही बात शुरु की... उसने कहा...

मेरे जन्म के बाद मम्मी ने एक लडकी को जन्म दिया। मेरी छोटी बहन और तुम्हारी बड़ी बहन! उसका नाम **संगीता** है। मुंबई मे ही उसकी शादी हुई है। फिर तुम मम्मी के गर्भ में आये। डॉक्टर ने चेकींग सोनोग्राफी वगैरह के आधार पर कहा - तुम्हारे पेट में बालक है, पुत्र के रूप में जन्मेगा।

यह बात घर में - पडोस में सब जगह फैल गयी। उस वक्त एक पडोसी ने मुझे कहा - मैं उस वक्त लगभग साडे पाँच साल का था। उन्होंने मुझे कहा - तुम्हें भय आनेवाला है! मैं ने हाँ कहा। तो उन्होंने कहा - तुम समझे नहीं, भाई नहीं, भय! मैंने पूछा - चाचा! इसका मतलब? उन्होंने कहा - वो तुमसे भविष्य में हर चीज में हिस्सा लेगा। अत: तुम्हारे लिए भयरूप है। मैं ने कहा - अंकल! मैं नहीं समझा। उन्होंने कहा - घर में छोटा लाडला होता है। तुम बड़े होने से अब मम्मी-पापा का प्रेम तुझे नहीं मिलेगा। अब सारा प्रेम उसे मिलेगा। तुझे तो उसका ध्यान रखने की और खेलाने की जबाबदारी संभालनी होगी। वो रोयेगा तो गलती तेरी मानी जायेगी और वो शैतानी करेगा, तो भी उसे नहीं सम्हालने के लिए तुझे ही अपराधी माना जायेगा! समझ ले, अब तक तेरे पापा ही थे, अब तुम दोनों की लड़ाई मे वे एम्पायर बनेंगे और हर वक्त तुम्हें अन्याय हो ऐसे ही निर्णय करेंगे! तुम दोनों बड़े होने के बाद भी - घर - मिलकत - दुकान वगैरह में कम से कम आधा हिस्सा वो ले लेंगा और छोटा होने से माता-पिता का ज्यादा लाडला होगा, तो तुम्हें तो सब गवाँ देने का अवसर आयेगा।

जयेशभाई! क्या बात कहुँ? उन चाचाने मेरे बहुत छोटे से बालमानस में दूसरा भाई याने भय यह बात ऐसी घुसा दी कि, मैं उसके बाद रोज घर में धमाचौकडी मचाने लगा, मुझे भाई नही चाहिए।

मम्मी - पापा मुझे बहुत समझाते - बेटा! भाई तो भाग्यशाली को ही मिलता है। देख, राम-लक्ष्मण- दो भाईयों की जोडी जगत में प्रसिद्ध है। भगवान भाई भेजते हैं, तब समझकर ही भेजते हैं, दुनिया में अनेक संग्राम आते हैं, उसमें सहायक होने के लिए भाई को भेजते रहे हैं। अपनी आपत्तिओं में भाई ही साथ देता है, वगैरह...

पर मेरे छोटे से दिमाग में भाई नहीं चाहिये, यह बात बराबर जम गयी थी। मैं ने मेरी ज़िद नहीं छोडी। उसके लिये ज़िद... हठ करना शुरु किया...

फिर तुम्हारा जन्म हुआ। पर मैं तुम्हारा मुँह देखने को तैयार नहीं था। मेरी आँख में तुम्हारे लिए इतना सारा झहर भरा हुआ था कि, जब तुम्हें देखता, तब मार डालने के ही विचार आते।

मम्मी-पापा मेरी चेष्टा - मेरी आँख वगैरह से डर गये थे। तुम्हारे पास मुझे कभी अकेले रखते नहीं थे। सतत डर रहता। आखिर में उन्हें लगा कि, मैं तुम्हे मार दूँगा। उन्हें लगा - इसमें हमें दोनों को गँवाना पडेगा। तुम मर जाओगे और मुझे सरकार पकडकर बाल गुनहगार की संस्था में भेज देंगे। इस चिंता से चिंतित होकर नाईलाज तुम्हें अनाथाश्रम में रखा, संचालकों को सही परिस्थिति समझायी। अत:

उन्होंने स्वीकार किया। मम्मी - पापाने उन सबको खास विनंती की, भविष्य में कभी भी इस बात का तुम्हें पता नहीं चलना चाहिए। बाद में भी मम्मी-पापा बार बार तुम्हें मिलने जाते और साथ में बहुत सी चीजें ले जाते। मुझे अगर पता चलता तो मैं बहुत धमाचौकडी करता था। फिर तो तुम कलकत्ता सौंपे गये।

जब कि, मम्मी सब जानती थी - तुम कहाँ गये ? कैसे रहते हो ? सुखी हो या नही ? कलकत्तावालों ने तुम्हारे अलग-अलग उम्र के फोटों भी बारबार भिजवाये हैं।

जयेश ! सच कहुँ, तो अब तक उन फोटो पर भी मैंने रोष-गुस्सा ही व्यक्त किया है। मुझे यह कभी नहीं पसंद था कि, मम्मी - पापा तुमसे रिश्ता रखे। माँ - बाप होते हुए भी तुम अनाथाश्रम में रखे गये वो भी मेरे ही कारण। मुझे माफ कर... मुझे माफ कर... वो इतना रो पडा कि माताजी उसे लेकर चली गयी।

म.सा. : ऋणानुबंध गजब है। कलकत्ता में एक बालक ज़िद करता है कि मुझे भाई चाहिये और मुंबई में उसी वक्त उसी उम्र का दूसरा बालहठ करता है कि, मुझे भाई नहीं चाहिये। इन दो ज़िद के बीच अटकी तुम्हारी जिंदगी को भारी मोड़ मिला। फिर उस रकम के बारे में कोई निर्णय हुआ ?

जयेश : अलबत, तब कोई बात नहीं हुई। पर मैंने कलकत्ता भाई को घटी पूरी विगत बतायी। मुझे ऐसा लगता है कि, संबंध के बारे में जन्मदात्री की बात भले सच्ची हो और मुझे अनाथाश्रममें रखने में भले मेरे भाई का हाथ हो। किंतु ये सारा भंडाफोड अब हुआ और भाई जो रोने लगा... वो नाटक है। रकम चुकानी न पड़े उसी के लिए ही प्लान है। बेशक, बड़ेभाई ने तो सब बातें सुनकर, मुझे माता-भाई के रिश्ते को ध्यान में रख कर और पहली बार हुए माता के दर्शन सफल करने हेतु सब छोड़ देने की सलाह दी है।

पर मेरा मन मानता नहीं। एक तो एक बालक मेरी पूरी जिंदगी को खराब कर दे ऐसी ज़िद करे और वह ज़िद माता-पिता मान भी ले यह बात ही बड़ी खटक रही है।

जो व्यक्ति मुझे माता-पिता के प्रेम से लगाकर जायदाद तक कोई वस्तु नहीं मिलनी चाहिये उसके लिए अब तक प्रयत्नशील था, उस व्यक्ति को कैसे माफ किया जाये ? क्या एक बार के आँसु में इतने बड़े पाप का प्रायश्चित हो जाता है ? माता भी मेरे साथ अपने रिश्ते की आज ही जानकारी दे और वो भी खुद के लाडले कमल को बचाने के लिए। मेरा मन इन सब बातें को कैसे स्वीकार सकता है ? महाराज साहिब ! बस इसलिए ही आप के पास आया हुँ। क्या करूँ ?

म.सा. - **नमि** छोटा भाई था और **चंद्रयशा** बड़ा भाई। दोनों पास-पास के राज्य के राजा थे। नमि के जन्म के चंद दिन पहले ही घटी एक विचित्र घटना के कारण

दोनों जन्म से एक दूसरो को नहीं जानते थे और एक हाथी के लिए युद्ध करने ससैन्य आमने-सामने आ गये। तब साध्वी बनी दोनों की माता **मदनरेखा** कि जिसको नमि खुद की माता के रूप में भी पहचानता नहीं था, उन्होंने नमि को पूरी पहचान भरोसे - सबूतों के साथ देकर कहा - तुम जिसके सामने लड रहे हो, वो तुम्हारा बड़ा भाई है। (देखो पुस्तक सिद्धिगतिना साधको) बस इतिहास की इस घटना की आंशिक पुनरावृत्ति तुम्हारे प्रसंग में दिख रही है। वहाँ युद्ध में से पीछे हटने में इज्जत का प्रश्न अडने से नमि पीछे हटने को तैयार नहीं था। यहाँ तुम्हें घोर अन्याय दिखता है, इसीलिए तुम तैयार नहीं हो।

किन्तु, एक बात को समझो, कर्म, भवितव्यता और ऋणानुबंध जो नाटक रचते हैं, उसमें जिस तरह तुम पात्र हो, उसी तरह कमल भी पात्र है। तुम ही कहो, कमल को गलत रास्ते चढानेवाले भाई कैसे मिल गये? उस भाई ने तुम्हें देखा था? तुमने उनका कुछ बिगाडा था? फिर भी उन्होंने तुम्हारे भाई के दिमाग में निकम्मी बात भर दी।

जयेश - वो बात भी माताने बताई। उस भाई के खुद के दोनों बेटे जिस तरह जायदाद के लिए लड रहे थे और उनके पिता के जीते जी अपना हिस्सा पा लेने के लिए जो चाल चला रहे थे, उससे वो भाई जले हुए थे। अत: कमल को गलत रास्ते चढ़ा दिया।

म.सा. : इस तरह कमल को भडकाने से क्या उस भाई के दोनों बेटे लडते बंध हो गये? ना! पर दिलका जला दूसरों को जलाये ऐसा हुआ। मगर बात यह है कि, कमल को ही क्यों भडकाया? और उससे भडके हुए कमल ने उस बात को इतनी मजबूती से पकड क्यों ली? बालक तो बात थोडी देर में छोड देता है, पर उसने ये बात अब तक छोडी क्यों नहीं?

जयेश - क्यों छोडी नहीं? सीधी बात है। भूल-भूल में भी मैं जायदाद के भाग में दावा नहीं करुँ इसलिए...

म.सा. - बराबर है। यह स्पष्ट दिखता कारण है। मगर इससे बातों का ताला नहीं मिलता। बहुत घरों में तुम्हारें जैसे छोटे - बड़े भाई हैं। और बहुत जगह दोनों भाई लडते हैं। पर तुम्हारी बात तो जन्म से शुरु हुई घटना से जुडी है। अत: मेरा मन कहता है कि कमल, तुम और भावेश इन तीनों के बीच पूर्वभव का विशिष्ट ऋणानुबंध है। ऐसा भी शायद हो सकता है कि, पूर्वभव में तुम्हारा निकट का स्वजन बने हुए कमल पर तुमने अन्याय किया हो और जिसके साथ तुम्हारी कोई लेना-देनी नहीं थी, ऐसे भावेश के साथ तुमने स्नेह - उष्माभरा व्यवहार किया हो, वो भी नाजुक अवसर पर।

इतना समझ लो कि, न्याय-अन्याय की बात महत्त्व की होने के बावजुद उसमें कारण बनता है ऋणानुबंध। और ऋणानुबंध में महत्त्व का भाग निभाता है, अच्छे - बुरे मनोभाव - व्यवहार की लेन-देन! जिसके साथ अच्छा व्यवहार किया हो, दूसरे भव में उसकी तरफ से हमेशा अच्छे अनुभव ही होते हैं। वहाँ नाता गौण है। उसी तरह खराब व्यवहार का प्रतिघोष दूसरे भव में उसी तरह ही हमेशा सुनने को मिलते हैं, फिर भले संबंध नीकट का हो। इसके अलावा कर्म की इको सीस्टम अनंतकाल पुरानी है। एक बार के अच्छे-बुरे व्यवहार के प्रतिघोष दस-बीस-सौ बार होते रहते हैं।

जयेश - तो साहेब मुझे क्या करना ?

म.सा. - कहिए, क्या तुम्हारी इच्छा है कि भविष्य में कमल के साथ संभवित अघटित घटनायें बारबार होने से रुक जायें ?

जयेश - पर उसने मुझे अन्याय....

म.सा. - उसके अन्याय की बात भूल जा। कमल यदि इस भव में इस अन्याय के लिये सच्चे दिल से पश्चाताप-प्रायश्चित कर लेगा, तो अगले भव में तुम बदला लोगे तो भी वो शांत रहेगा। ऐसा करके वह तो वैरानुबंध से छुट जायेगा। और अगर वो ऐसे अन्याय का पश्चाताप नहीं करेगा, तो आज किये हुए अन्याय का दंड बार-बार भुगतता ही रहेगा। पर तुम्हें इस भव में मौका है, उसे माफ कर वैरानुबंध की परंपरा को अटका देने का, क्योंकि परंपरा को अटकाने का लाभ सहन करके भी माफ करनेवालों को ही मिलता है, अन्याय करनेवालों को नहीं।

जयेश - पर उसने मुझे अनाथाश्रम का बालक बना दिया।

म.सा. - हो सकता है कि, तुमने पीछले भव में उसे 'अनाथ' 'अनाथ' का ताना मारा होगा, उसका यह हिसाब होगा। तुम्हें अनाथ बनानेवाले कर्म खप गये और तुमने क्या गँवाया ? तुम्हें कलकत्ता में बहुत श्रीमंत परिवार मिला और तुम्हें खुब चाहनेवाला बड़ा भाई भावेश मिला। तुम तुम्हारे पुराने घर में ही बड़े हुए होते, तो क्या यह संभव नहीं था कि दोनों भाई बचपन में काँच की खेलने की गोली के लिए लड़ते और बड़े होकर जायदाद के लिए। मतलब कि, जन्म से ही सतत संघर्ष, ईर्ष्या, संक्लेश की पुडिया बांधने होते। इसके बदले ऐसे स्थान में जाने को मिला जहाँ सतत प्रेम, शांति, प्रसन्नता ही मिली।

जिस तरह व्यापार में अनेक खातों में उथल - पुथल होने के बाद भी अंत में यही देखा जाता है कि, लाभ हुआ या नुकसान, उसी तरह यहाँ भी तुम दूसरी उथल - पुथल को भूल जाओ और विचार करो कि, जो बना वो आखिर तुम्हारे लाभ में गया

या नुकसान में ?

जयेश - तो मुझे अब माता के साथ कैसा व्यवहार करना ? कमल ने किये हुए नुकसान के लिए क्या करना ? मुझे अब किसे बड़ा भाई मानना ?

म.सा. - तुम्हारी जन्मदात्री माता को परम उपकारी माता ही माननी है। उन्होंने तुम्हें बचाने के लिए ही अनाथाश्रम का सहारा लिया था और फिर बाद में भी तुम्हारा हमेशा ध्यान रखा। कमल के साथ के वैरानुबंध खत्म हो जायें उसके लिए तुम उसे दिल से माफ तो कर ही देना, उसके प्रति कणमात्र भी दुर्भाव या द्वेष रखने के बजाय उसका आभार ही मानना कि, तूम मेरे बूरे - पापकर्मों के निकाल में निमित्त बने और अच्छे परिवार में परवरिश होने में कारण बनें। इसी वजह से तुम उसके पाससे लेनी रकम के लिए ऐसी व्यवस्था करना कि जिससे उसे भी सिर पर भार न रहे। कर्जा माफ करने में कुछ गँवाना नहीं है। वो भी साधर्मिक भक्ति आदि रूप से दान बनकर परलोक में बहुत बड़े मुआवजे का कारण बनता है। भविष्य में हो सकता है कि कमल तुम्हारी आर्थिक तकलीफ में अचानक अनन्य कोटी का सहायक बन जाये। मतलब कि तुम्हारा भविष्य सलामत बन जायेगा।

और यदि भावेश को तुम्हारे प्रति पूरा प्रेम हैं, तो इसके बाद भी उसे बड़ा भाई मानकर उसके साथ ही रहना। ऋणानुबंध, कर्म और कुदरत की इच्छा तुम्हें उसके साथ रखने की है। तुम किसके पुत्र हो यह तो अचानक आयी हुई बात है। पर अब तक समाज में और जीवन में वो ही बड़ा भाई रहा है। अत: यही व्यवस्था आगे भी रहे वही सारभूत है।

जयेश - साहिब! आपने मुझे एकदम हल्का कर दिया है। पूरा भार उतर गया। दिमाग में चलती विचारों की आँधी रुक गयी। बड़ेभाई के साथ बात कर उनकी सूचना अनुसार कमलभाई के साथ फैसला करुँगा।

दूसरे दिन एक बहन के साथ एक भाई को लेकर जयेश महाराज साहिब के पास आया। पहचान करवायी - ये मेरे माताजी! ये कमलभाई! फिर दोनों को कहा - इन साहिब ने मुझे शांत, प्रसन्न, हलका बना दिया। दोनों ने वंदन कर आभार माना।

जयेश - हमने आपस में क्षमायाचना कर ली है। कमलभाई के दिल में बनी घटना का खूब - सच्चा पछतावा है। ये तो मुझे भाई जानने के बाद खुद ने किये अन्याय को याद कर खुद का घर, गहने सब बेचकर कर्ज उतारने के लिए तैयार था। इस बाबत में दृढ था और कहता था कि, इतना करने पर भी कर्ज चुकाऊँगा। तुम्हें पिताजी की जायदाद में जो भाग नही मिला, वो अन्याय तो अभी खडा ही है। पर बड़ेभाई की सलाह से, माता की इच्छा से और आपकी प्रेरणा से कर्ज की रकम चुकाने

के विषय में व्यवस्था कर दी। कमलभाई को नियम दो - अब शेर - सट्टे में पड़े नहीं। उसकी भी नियम लेने की इच्छा है। अब धंधे में बराबर ध्यान देकर जैसे जैसे अनुकूल होगा, वैसे वैसे चुकाते रहेंगे। ब्याज वगैरह की बात नहीं रखी। जिस तरह घर में कोई तकलीफ न हो, उस तरह उतनी ही रकम चुकाते रहना।

कमल ने नियम लिया। दोनों की माता के आँखो में दोनों भाई के प्रेमभरे व्यवहार को देख आनंद के अश्रु छलकने लगे। खोया हुआ बेटा मिलने का उत्साह था। बेटा सुखी है, उदार है, समझदार है और धर्मी है, उसका विशेष आनंद था। महाराज साहिब ने पहेली उलझा दी, उसका छलाछल अहोभाव था।

महाराज साहिब भी संसार की घटना, ऋणानुबंध का चक्कर, मानवों के मन, अन्याय करनेवालों को मिलती थप्पड और अंत में जिसे अन्याय हुआ उसी के चरण पकडने पडे ऐसी बनती भूमिका, अन्याय सहन करनेवालों की उदारता से बनती भव्य दिव्य परिस्थिति, स्नेही मानव की विशालता, दूसरों को प्रसन्न करने का कौशल्य वगैरह, वगैरह बातों के विचारो में चढ़ गये।

ऋणानुबंध! वैर का हो या प्रेम का! वो समझ में आ जाये, तो क्या किसी पर द्वेष भाव रहेगा? कोई खराब लगेगा? किसका व्यवहार अन्यायी लगेगा?

।। समस्त किताब में जिनाज्ञा विरुद्ध लिखा गया हो तो मिच्छामि दुक्कडम्।।

।।इति शम्।।